शिवना
प्रकाशन

RNI NUMBER :- MPHIN/2016/67929
ISSN NUMBER : 2455-9717

वर्ष : 10 अंक : 37
अप्रैल-जून 2025
मूल्य 50 रुपये

शिवना साहित्यिकी

शोध, समीक्षा तथा आलोचना की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका

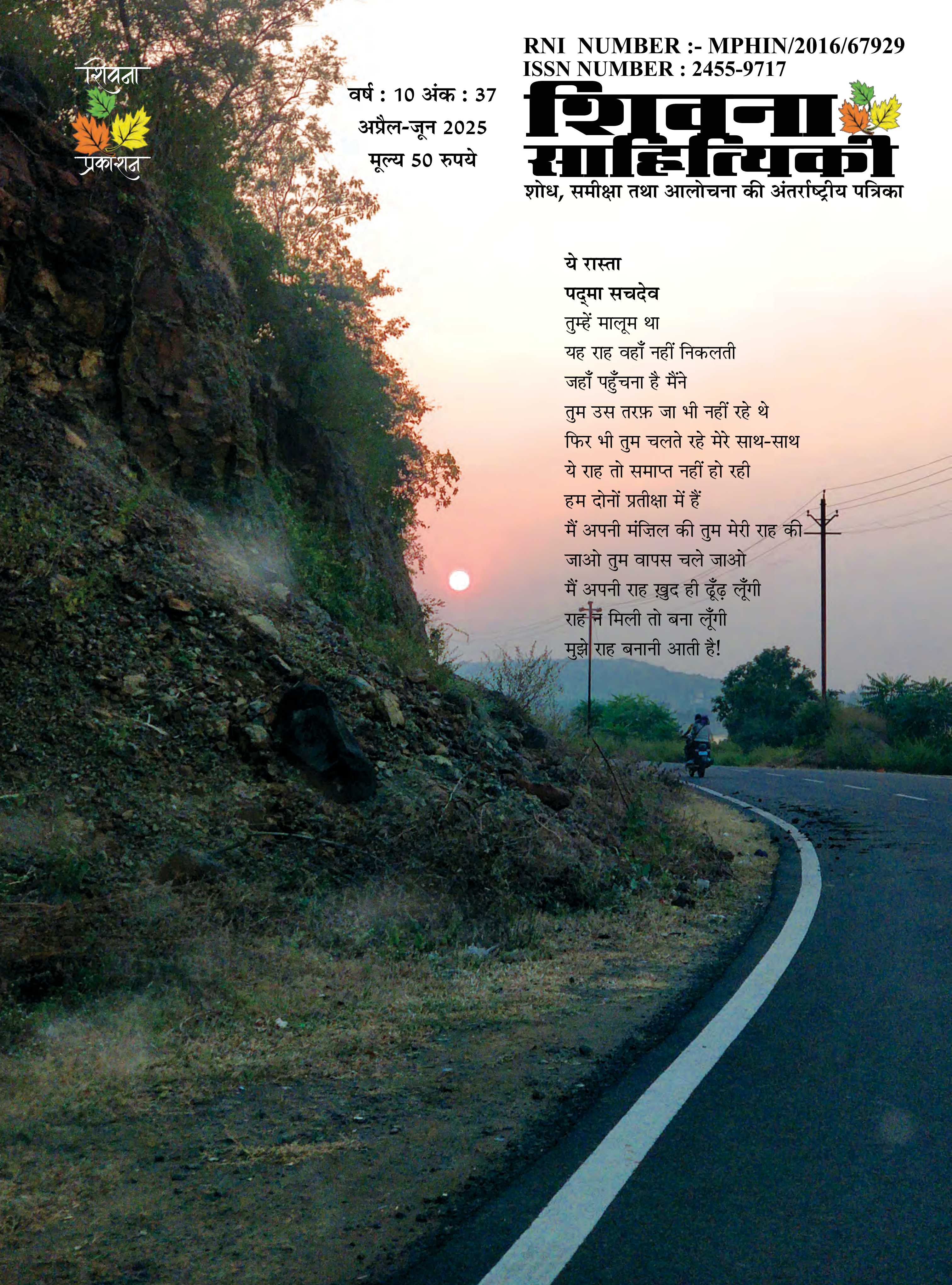

ये रास्ता

पद्मा सचदेव

तुम्हें मालूम था
यह राह वहाँ नहीं निकलती
जहाँ पहुँचना है मैंने
तुम उस तरफ़ जा भी नहीं रहे थे
फिर भी तुम चलते रहे मेरे साथ-साथ
ये राह तो समाप्त नहीं हो रही
हम दोनों प्रतीक्षा में हैं
मैं अपनी मंज़िल की तुम मेरी राह की
जाओ तुम वापस चले जाओ
मैं अपनी राह ख़ुद ही ढूँढ़ लूँगी
राह न मिली तो बना लूँगी
मुझे राह बनानी आती है!

शिवना प्रकाशन द्वारा प्रकाशित नए सेट में शामिल पुस्तकें

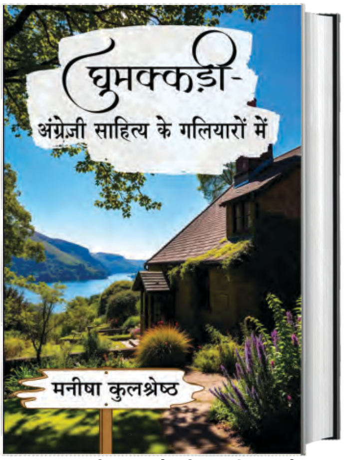

घुमक्कड़ी - अंग्रेज़ी साहित्य के गलियारों में, यात्रा संस्मरण
लेखक - मनीषा कुलश्रेष्ठ
मूल्य- 350 रुपये, वर्ष- 2025

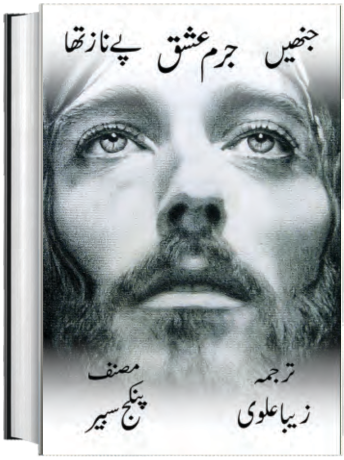

जिन्हें जुर्म-ए-इश्क़ पे नाज़ था
उपन्यास उर्दू अनुवाद- ज़ेबा अलवी
लेखक - पंकज सुबीर
मूल्य- 400 रुपये, वर्ष- 2025

साज़-बाज़
उपन्यास
लेखक - प्रियंका ओम
मूल्य- 300 रुपये, वर्ष- 2025

पत्तियों पर काँपता कोमल गांधार
कविता संग्रह
लेखक - पल्लवी त्रिवेदी
मूल्य- 300 रुपये, वर्ष- 2025

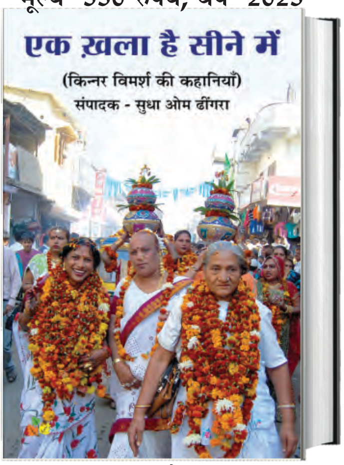

एक ख़ला है सीने में
कहानी संकलन
संपादक - सुधा ओम ढींगरा
मूल्य- 500 रुपये, वर्ष- 2025

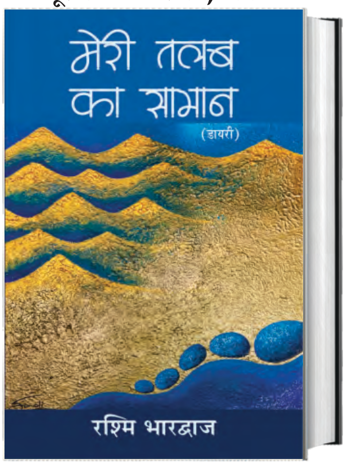

मेरी तलब का सामान
डायरी
लेखक - रश्मि भारद्वाज
मूल्य- 250 रुपये, वर्ष- 2025

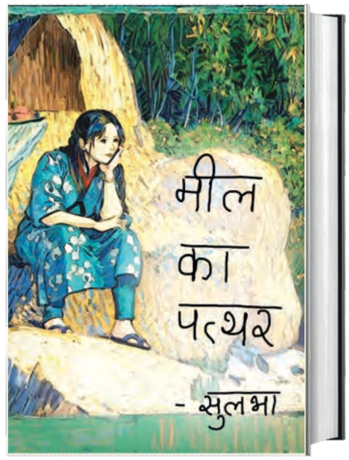

मील का पत्थर
कविता संग्रह
लेखक - सुलभा
मूल्य- 300 रुपये, वर्ष- 2025

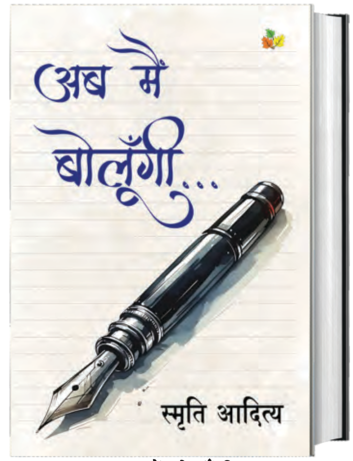

अब मैं बोलूँगी...
डायरी
लेखक - स्मृति आदित्य
मूल्य- 150 रुपये, वर्ष- 2025

आईना हँसता है
कहानी संग्रह
लेखक - डॉ. दीपा मनीष व्यास
मूल्य- 240 रुपये, वर्ष- 2025

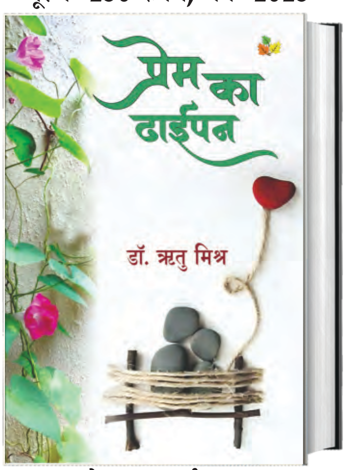

प्रेम का ढाईपन
कविता संग्रह
लेखक - डॉ. ऋतु मिश्र
मूल्य- 150 रुपये, वर्ष- 2025

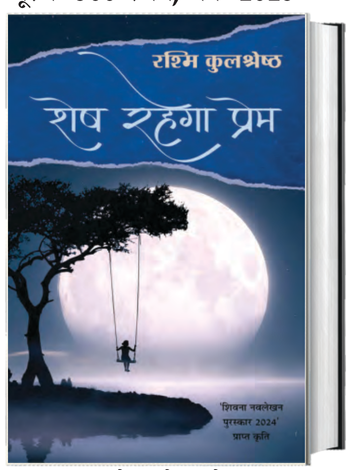

शेष रहेगा प्रेम
उपन्यास
लेखक - रश्मि कुलश्रेष्ठ
मूल्य- 350 रुपये, वर्ष- 2025

पानी पर नाम
ग़ज़ल संग्रह
लेखक - नरेन्द्र नागदेव
मूल्य- 200 रुपये, वर्ष- 2025

शिवना प्रकाशन

शिवना प्रकाशन, शॉप नं. 2-8, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेंसमेंट
बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मध्य प्रदेश 466001
फ़ोन- 07562-405545, 07562-490372
मोबाइल- +91-9806162184 (शहरयार)
व्हाट्सएप- +91-6265665580, ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com
वेबसाइट- www.shivnaprakashan.com

Gmail Email- shivna.prakashan@gmail.com
+91-62656 65580 https://twitter.com/shivnac
https://www.facebook.com/shivna.prakashan
https://www.youtube.com/c/ShivnaCreations
amazon https://www.amazon.in/s?me=A17JJYGSVM2CEV

संरक्षक एवं सलाहकार संपादक

सुधा ओम ढींगरा

संपादक

पंकज सुबीर

कार्यकारी संपादक एवं क़ानूनी सलाहकार

शहरयार (एडवोकेट)

सह संपादक

शैलेन्द्र शरण, आकाश माथुर

डिज़ायनिंग

सनी गोस्वामी, सुनील पेरवाल, शिवम गोस्वामी

शिवना साहित्यिकी

शोध, समीक्षा तथा आलोचना की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका

वर्ष : 10, अंक : 37, त्रैमासिक : अप्रैल-जून 2025

RNI NUMBER :- MPHIN/2016/67929

ISSN : 2455-9717

संपादकीय एवं प्रकाशकीय कार्यालय

पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट

बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मध्य प्रदेश 466001

दूरभाष : +91-7562405545

मोबाइल : +91-9806162184 (शहरयार)

ईमेल- shivnasahityiki@gmail.com

ऑनलाइन 'शिवना साहित्यिकी'

http://www.vibhom.com/shivnasahityiki.html

फेसबुक पर 'शिवना साहित्यिकी'

https://www.facebook.com/shivnasahityiki

एक प्रति : 50 रुपये, (विदेशों हेतु 5 डॉलर $5)

सदस्यता शुल्क

3000 रुपये (पाँच वर्ष), 6000 रुपये (दस वर्ष)

11000 रुपये (आजीवन सदस्यता)

बैंक खाते का विवरण-

Name: Shivna Sahityiki
Bank Name: Bank Of Baroda,
Branch: Sehore (M.P.)
Account Number: 30010200000313
IFSC Code: BARB0SEHORE

आवरण कविता

पद्मा सचदेव

आवरण चित्र

पंकज सुबीर

संपादन, प्रकाशन एवं संचालन पूर्णत: अवैतनिक, अव्यावसायिक। पत्रिका में प्रकाशित सामग्री लेखकों के निजी विचार हैं। संपादक तथा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों का पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक पर होगा। पत्रिका जनवरी, अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर माह में प्रकाशित होगी। समस्त विवादों का न्याय क्षेत्र सीहोर (मध्य प्रदेश) रहेगा।

स्वत्वधिकारी एवं प्रकाशक पंकज कुमार पुरोहित के लिए पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मध्य प्रदेश 466001 से प्रकाशित तथा मुद्रक ज़ुबैर शेख़ द्वारा शाइन प्रिंटर्स, प्लॉट नं. 7, बी-2, क्वालिटी परिक्रमा, इंदिरा प्रेस कॉम्प्लैक्स, ज़ोन 1, एम पी नगर, भोपाल, मध्य प्रदेश 462011 से मुद्रित।

इस अंक में

शिवना साहित्यिकी

शोध, समीक्षा तथा आलोचना की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका

वर्ष : 10, अंक : 37,
त्रैमासिक : अप्रैल-जून 2025

अवारण कविता
ये रास्ता / पद्मा सचदेव
संपादकीय / शहरयार / 3
व्यंग्य चित्र / काजल कुमार / 4

शोध आलोचना
ख़ैबर दर्रा
समीक्षक : तिलक राज कपूर
लेखक : पंकज सुबीर / 5
दिन हुए दिवंगत
समीक्षक : डॉ. दिलबागसिंह विर्क
लेखक : प्रियंका ओम / 9
गोद उतराई
समीक्षक : दीपक गिरकर
लेखक : तेजेन्द्र शर्मा / 12
मेरी कहानियाँ - रेखा राजवंशी
समीक्षक : ओम वर्मा
लेखक : रेखा राजवंशी / 15
तेजेंद्र शर्मा एक शिनाख़्त
समीक्षक : सुधा जुगरान
संपादक : जितेंद्र पात्रो / 18
अधजले ठुड्डे
समीक्षक : दीपक गिरकर
लेखक : डॉ. हंसा दीप / 21
इस मोड़ से आगे
समीक्षक : मोनिका मंथन
लेखक : रमेश खत्री / 24

केंद्र में पुस्तक
मैं उन्हें नहीं जानती
समीक्षक : डॉ. शरद सिंह
दीपक गिरकर
शैली बक्षी खड़कोतकर
लेखक : उर्मिला शिरीष / 27
अब मैं बोलूँगी
समीक्षक : ज्योति जैन
स्वरांगी साने
शैली बक्षी खड़कोतकर
लेखक : स्मृति आदित्य / 34
प्रेम के देश में
समीक्षक : दीपक गिरकर
रमेश शर्मा
लेखक : परिधि शर्मा / 38

पुस्तक समीक्षा
बाकी बचे कुछ लोग
समीक्षक : राजेश सक्सेना
लेखक : अनिल करमेले / 42
हाजरा का बुर्क़ा ढीला है
समीक्षक : दीपक गिरकर
लेखक : डॉ. तबस्सुम जहां / 44
अलिवेलु
समीक्षक : हरि राम मीणा
लेखक : एकुला वेंकटेश्वरलु / 46
कही-अनकही
समीक्षक : दीपक गिरकर
लेखक : अनन्या मिश्र / 48
यादें बसंत की ख़ुशबुएँ हैं
समीक्षक : विजय कुमार तिवारी
लेखक : लीलाधर मंडलोई / 50
रंग बारिश
समीक्षक : कुसुमलता सिंह
लेखक : विनय मिश्र / 52
ज़रूरी चिन्हों के बिना
समीक्षक : पूनम मनु
लेखक : प्रदीप सिंह / 54
चयनित कहानियाँ
समीक्षक : लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
लेखक : अरुण अर्णव खरे / 56
तुम्हारी आवाज़
समीक्षक : विजय कुमार तिवारी
लेखक : रामस्वरूप दीक्षित / 58
घुमक्कड़ी- अंग्रेज़ी साहित्य के गलियारों में
समीक्षक : स्मृति आदित्य
लेखक : मनीषा कुलश्रेष्ठ / 60
महाभारत अनवरत
समीक्षक : गोपाल माथुर
लेखक : रासबिहारी गौड़ / 61
आधी दुनिया पूरा आसमान
समीक्षक : अशोक श्रीवास्तव "कुमुद"
लेखक : ब्रह्म दत्त शर्मा / 62

शोध पत्र
सुधा ओम ढींगरा के साहित्य में आधुनिक विमर्श
शालिनी,
डॉ. सीमा शर्मा / 64

संपादकीय

आपकी पत्रिका का दसवें वर्ष में प्रवेश

शहरयार
शिवना प्रकाशन, पी. सी. लैब,
सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट
बस स्टैंड के सामने, सीहोर, म.प्र.
466001,
मोबाइल- 9806162184
ईमेल- shaharyarcj@gmail.com

समय की गति का कुछ पता नहीं चलता, दिन, महीने और साल बीतते चले जाते हैं, मगर ऐसा लगता है जैसे कल की ही बात हो। शिवना साहित्यिकी को जब शुरू किया था, उस समय कुछ पता नहीं था कि इस पत्रिका का क्या भविष्य होने वाला है। उस समय बस यह सोच कर इसे प्रारंभ किया था कि पुस्तकों पर समीक्षाएँ, आलोचनाएँ, चर्चाएँ आदि के लिए इस पत्रिका को समर्पित किया जाएगा। लेकिन यह भी एक चिंता थी कि क्या इतनी संख्या में पुस्तकों पर सामग्री प्राप्त हो सकेगी ? कहीं ऐसा न हो कि इस पत्रिका में विधाओं को स्थान देना पड़े। चूँकि विधागत पत्रिका के रूप में 'विभोम-स्वर' साथ ही प्रारंभ हो रही थी, इसलिए यह बात भी दिमाग़ में थी कि कहीं ऐसा न हो कि दोनों पत्रिकाओं में पाठकों को कोई अंतर ही नज़र नहीं आए। फिर कहीं न कहीं यह बात भी सोचने में आ जाए कि दो अलग-अलग पत्रिकाएँ क्यों, जब सामग्री लगभग एक सी ही है। प्रारंभ में तो कुछ अंकों तक यह समस्या बनी रही कि शिवना साहित्यिकी में भी कहानियाँ, कविताएँ तथा अन्य विधाओं की सामग्री प्रकाशित करना पड़ी। फिर धीरे-धीरे पत्रिका में पुस्तकों पर केंद्रित सामग्री बढ़ानी प्रारंभ की। जब इस पत्रिका को पूरी तरह से समीक्षा, आलोचना तथा शोध की पत्रिका बना देने का निर्णय लिया गया, तब कहीं न कहीं समीक्षकों तथा आलोचकों के मन में यह बात भी थी कि यह तो एक प्रकाशन द्वारा निकाली जा रही पत्रिका है, इसलिए इसमें उस प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की समीक्षाएँ ही प्रकाशित की जाएँगीं। मगर फिर पत्रिका के अंकों के सामने आने पर यह शंका भी दूर हो गयी। हाँ यह बात सच है कि पत्रिका में अधिक सामग्री शिवना प्रकाशन की पुस्तकों पर केंद्रित ही होती है, केंद्र में पुस्तक जैसे स्तंभों को शिवना प्रकाशन की पुस्तकों के लिए ही रखा गया है। मगर, इसके बाद भी आप देखेंगे कि पत्रिका में लगभग पचास प्रतिशत सामग्री दूसरे प्रकाशन गृहों से प्रकाशित पुस्तकों पर होती है। कई बार तो यह प्रतिशत पचास प्रतिशत से भी अधिक होता है। बीच में कुछ स्तंभ बढ़ाने पर विचार किया गया था, जिसमें किसी आलोचक / समीक्षक का साक्षात्कार, कहानी पर केंद्रित आलेख या परिचर्चा का प्रकाशन, वर्ष के छह माह पूरे होने तथा, वर्ष के अंत में उस अवधि में प्रकाशित होकर आयी प्रमुख पुस्तकों पर आलेख, जैसे स्तंभ शुरू करने की योजना बनाई गई थी। योजना अभी भी है, तथा आने वाले अंकों में आप इन स्तंभों को पत्रिका में देख सकेंगे। पत्रिका को पूरी तरह से समीक्षा, आलोचना तथा शोध की पत्रिका बनाए हुए अभी बहुत अधिक समय नहीं हुआ है किन्तु बड़ी संख्या में समीक्षाएँ, आलोचनाएँ तथा शोध प्राप्त हो रहे हैं। कुछ समीक्षक ऐसे भी हैं, जो शिवना साहित्यिकी को ही ध्यान में रख कर समीक्षाएँ लिख रहे हैं। यह पत्रिका ऐसे ही आलोचकों तथा समीक्षकों के कारण आज अपना स्थान बना पाई है। असल में इस प्रकार की पत्रिका की कमी हिन्दी पत्रिका संसार में हमेशा से रही है। हालाँकि इस तरह की पत्रिकाएँ और भी हैं तथा बराबर प्रकाशित भी हो रही हैं, लेकिन उसके बाद भी उनकी संख्या उतनी नहीं है। दूसरी बात यह कि हिन्दी साहित्य में ख़ेमेबाज़ी का रोग बहुत पुराना है। विशेषकर आलोचना के क्षेत्र में तो यह ख़ेमेबाज़ी बहुत स्पष्ट और साफ दिखाई देती है। ऐसे में उन समीक्षकों या आलोचकों के सामने दुविधा रहती है, जो किसी ख़ेमे में नहीं हैं। शिवना साहित्यिकी ने ऐसे सभी समीक्षकों का स्वागत किया है। शिवना साहित्यिकी के लिए संपादक मंडल ने ऐसी कोई सूची नहीं बनाई है जिसमें नापसंद लेखकों या प्रकाशन संस्थाओं का नाम हो। अभी तक की यात्रा में लगभग सभी प्रमुख प्रकाशन संस्थाओं द्वारा प्रकाशित की गई लगभग सभी प्रमुख लेखकों की पुस्तकों की समीक्षाएँ या आलोचनाएँ शिवना साहित्यिकी में प्रकाशित की गई हैं। शायद यही कारण है कि पत्रिका पर समीक्षकों तथा आलोचकों का विश्वास बढ़ा है। दसवें साल में पत्रिका ने प्रवेश कर लिया है, आप सबके सहयोग, प्रेम तथा मार्गदर्शन के कारण। उम्मीद है यह सहयोग यूँ ही प्राप्त होता रहेगा। शुक्रिया...। **आपका ही**

शहरयार

व्यंग्य चित्र-

काजल कुमार
kajalkumar@comic.com

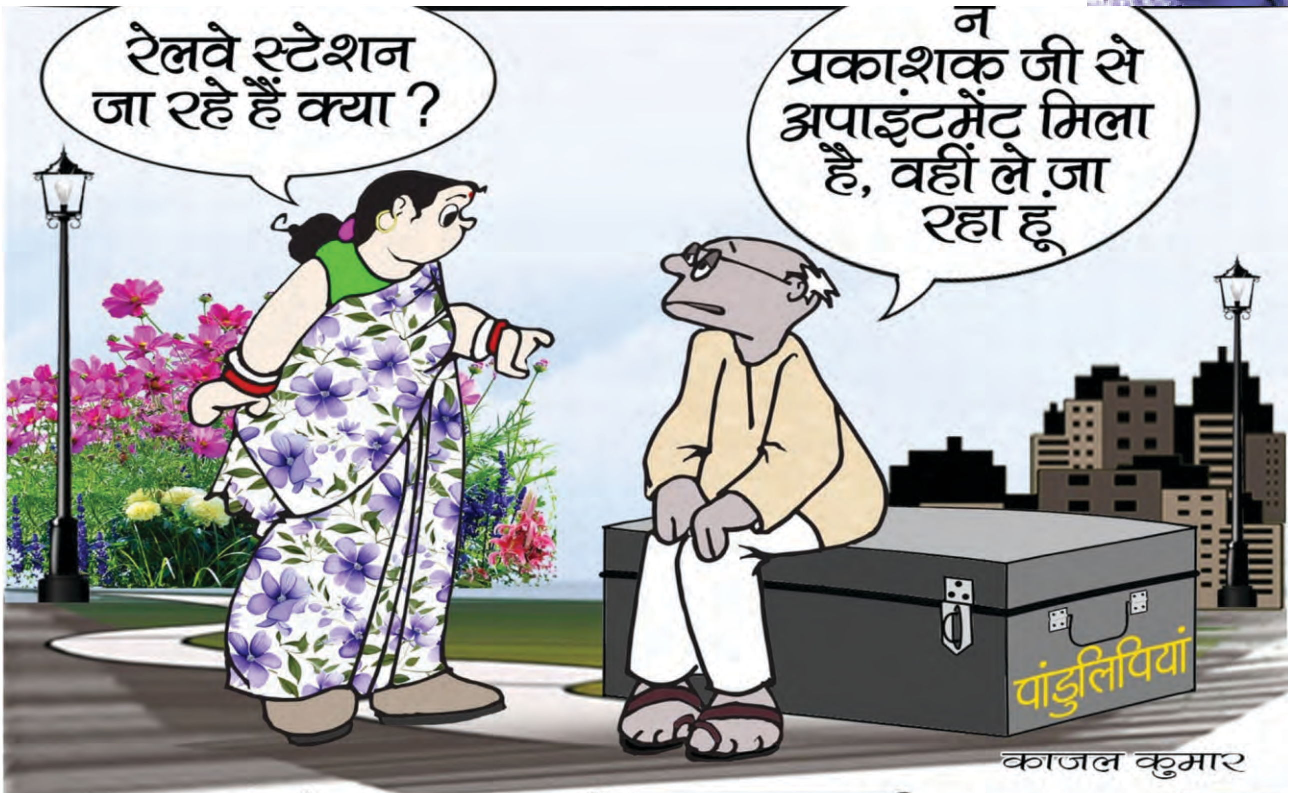

(कहानी संग्रह)

ख़ैबर दर्रा

समीक्षक : तिलक राज कपूर

लेखक : पंकज सुबीर

प्रकाशक : राजपाल एंड संज़, नई दिल्ली

हाल ही में राजपाल एण्ड संस से प्रकाशित प्रतिष्ठित साहित्यकार पंकज सुबीर के कहानी संग्रह 'ख़ैबर दर्रा' में कुल नौ कहानियाँ हैं। इन कहानियों पर सिलसिलेवार चर्चा से पूर्व यह समझना आवश्यक है कि कहानी कही और पढ़ी क्यों जाती है। इसमें भी एक भेद यह है कि कहानीकार पाठक के लिये कहानी कहता है या अपनी कहानी के माध्यम से कुछ संदेश देने अथवा प्रश्न खड़े करने के लिये। यह भेद समझना महत्त्वपूर्ण है। जब कहानी पाठक को ध्यान में रखकर कही जाती है तो वो मुख्यत: मनोरंजन केन्द्रित होती है अन्यथा उसका उद्देश्य सामान्यत: शिक्षा, प्रेरणा, सामाजिक संदेश देना; या किसी भावनात्मक जुड़ाव के माध्यम से सोच उत्पन्न करने के लिये रहता है। मनोरंजनेतर कहानियाँ ही वे कहानियाँ हैं जो विषय से पाठक को जोड़ती हैं उसे सोचने और करने के लिये कुछ देती हैं। पंकज सुबीर की कहानियाँ स्पष्टत: मनोरंजनेतर श्रेणी में रखी जा सकती हैं।

कहानी संग्रह 'ख़ैबर दर्रा' की शीर्षक कहानी 'ख़ैबर दर्रा' पर मेरी बात अधूरी रहेगी यदि ख़ैबर दर्रा को लेकर जनमानस में बैठा भ्रम स्पष्ट न किया गया। पर्वतीय क्षेत्रों में आवागमन के प्राकृतिक मार्ग के रूप में दर्रे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते रहे हैं और भारत की उत्तरी सीमा में तो 50 से अधिक दर्रे होते हुए भी भारतीय जनमानस में मुग़ल आक्रमणकारियों के भारत प्रवेश के मार्ग के रूप में ख़ैबर दर्रे की एक विशिष्ट पहचान है। बहुत कम लोग इस ऐतिहासिक तथ्य पर ध्यान देते हैं कि आर्य जनजातियों के इसी दर्रे से भारतीय उपमहाद्वीप में प्रवेश द्वारा वैदिक सभ्यता का भारत में उदय हुआ। यही तथ्य कहानी पर मेरे विचारों को जानने के पूर्व स्पष्ट होना आवश्यक है कि ख़ैबर दर्रा एक प्रतीक है उस मार्ग का जिससे मुग़ल आक्रमणकारी ही नहीं वैदिक सभ्यता भी आई। मार्ग बस मार्ग होता है, उससे प्रवेश क्या और कौन करता है यह प्रवेशकर्ता की प्रकृति का प्रश्न है, इनसे मार्ग की प्रकृति की पहचान निर्धारित नहीं की जा सकती है।

कहानी एक छोटे से गाँव की पृष्ठभूमि से प्रारंभ होती है जिसके बीच से होकर एक वर्षाकालीन नाला बहता है। नाले के दो तटों पर दो अलग अलग धार्मिक आस्था वाले समुदाय बसते हैं जिनमें समय-समय पर विवाद होते रहते हैं जो यदा-कदा ऐसा उग्र रूप भी ले लेते हैं जिसे धार्मिक उन्माद भी कहा जा सकता है। इन विवादों को छोड़ दिया जाए तो दोनों तटों के बीच बने पुलों से अधिक सूखे नाले से होकर आना-जाना सामान्यत: बना रहता है। कहानी के दो प्रारंभिक पात्र हैं जो युवा हैं और जिनके पारस्परिक व्यवहार में खुलापन देखा जा सकता है और उनकी आपसी भाषा में ऐसे शब्दों और भावों को भी देखा जा सकता है जिसे तथाकथित सभ्य समाज छिछोरापन कहता है। एक दंगे की पृष्ठभूमि में उनके मन में और परस्पर चल रही चर्चा में उनकी सोच में कोई अंतर्द्वंद्व नहीं दिखता है लेकिन कहानी जिस तरह समाप्त होती है वह स्पष्ट करती है कि मनुष्य अंतत: मनुष्य होता है, उसमें सभी भावनात्मक तत्व हमेशा मौजूद रहते हैं, सकारात्मक भी; और ये सकारात्मक तत्व कभी-कभी इतने सशक्त हो जाते हैं कि नकारात्मक आवेग में छाई मदहोशी को पल भर में पछाड़ देते हैं। ख़ैबर दर्रा तो आख़िर एक दर्रा ही है, उसी दर्रे से आर्य आए और उसी से आक्रमणकारी। कहानी बिना कहे, यह कह जाती है कि यही ख़ैबर दर्रा गाँव गलियों ही नहीं, हमारे अंदर भी हमेशा मौजूद रहता है। हम उससे होकर कैसे विचारों के प्रवेश की अनुमति देते हैं और कैसे उन विचारों पर कार्य करते हैं यह हमारी सोच निर्धारित करती है। शायद यही बात समझने के लिये पाठक पर छोड़ने के लिये कहानी का अंत एक ही पैरा में अपनी बात अप्रत्यक्ष रूप से रखते हुए एकदम से दर्रे जैसी खड़ी ढलान उतरता है। संकलन की शीर्षक कहानी के रूप में यह कहानी संकलन का नाम सार्थक करती है।

कहानी 'वीर बहूटियाँ चली गईं' संकलन में एक विशिष्ट महत्त्व रखती है। पंकज सुबीर की कहानियों में एक विशेषता निरंतर देखी है कि जैसे-जैसे कहानी आगे बढ़ती हैं पूर्वांश से निर्मित अनुमानों को बदलती जाती है और हर बार पाठक को विश्वास दिलाती हैं कि उसका इस बार का अनुमान ही अंत में स्पष्ट होगा लेकिन अंत में कुछ ऐसा दिखता है जिसका कोई पूर्वानुमान

तिलक राज कपूर
3 डी/ 168, साकेत नगर, भोपाल
462024, मप्र
मोबाइल 9425024320
ईमेल- kapoor.tilakraj@gmail.com

नहीं था। मनुष्य में अपने पूर्वानुमानों की यथारूप पुष्टि की प्रबल उत्कंठा होती है और यही उत्कंठा कहानी के एक महत्त्वपूर्ण तत्व के रूप में पाठक में आगे पढ़ने की रुचि बनाये रखती है। शायद यही परत-दर-परत खुलना इन कहानियों को कहानी बनाता है। पंकज सुबीर की कहानियों में पात्रों की संख्या कम ही रहती है, उनका प्रकृति-प्रेम विशिष्ट रूप से खुलकर दिखता है और कहानियों का दृश्य-चित्रण पटकथा के बहुत क़रीब से होकर चलता रहता है।

'वीर बहूटियाँ चली गईं' भी इसी क्रम की कहानी है जो आरंभ में एक प्रेमकथा का आभास देती हुई निरंतर नए आयाम जोड़ती चली जाती है। कहानी के सीमित पात्रों के मनोभावों का चित्रण ख़ूबसूरत बन पड़ा है। कहानी के पात्रों की सहजता निरंतर कहती तो है कि कुछ असहज सा होने वाला है लेकिन ऐसा कुछ होता नहीं है। बड़ी सहजता से मामूली दिशा परिवर्तन के साथ आगे का घटनाक्रम जुड़ जाता है और कुछ ऐसा जुड़ता है कि पाठक की पूर्वानुमानों की यथारूप पुष्टि की सहज उत्कंठा के विपरीत होते हुए भी लगता है कि यही तो होना था। पाठक इस कहानी में वीर बहूटियों का कहानी से संबंध लगभग अंत तक तलाशता रह जाता है और अंत वीर बहूटियों का संदर्भ एक ऐसे विषय पर लाता है जो आज सार्वभौमिक चिंता और चिंतन का विषय बना हुआ है।

'देह धरे का दंड'- क्या विधिमान्य से भिन्न मान्यताओं को व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर प्रहार की अनुमति दी जा सकती है? 'ख़ैबर दर्रा' की पाँचवी कहानी है 'देह धरे का दंड'। शीर्षक से लगता है कि कहानी मनुष्य देह धारण करने के संताप पर होगी। लेकिन नहीं, यह कहानी एक विवादित और चर्चित विषय पर चर्चा आमंत्रित करती है।

कहानी एक छोटे से कस्बे के अस्पताल से आरंभ होती है और निरंतरता में उसी अस्पताल में समाप्त हो जाती है। जैसा की पंकज सुबीर की कहानियों में होता है, इस कहानी में दृष्य विवरण कुछ ऐसा चलता है जैसे एक दक्ष सिनेमेटोग्राफ़र का कैमरा घूमता हुआ एक-एक दृष्य को जीवंत करता चलता है। कहानी जब तक पात्रों तक पहुँचती है, अस्पताल और उसके आस-पास का दृश्य विवरण पूरी तरह पाठक के मानस पर अंकित हो चुका होता है। कहानी के केन्द्रीय पात्रों का प्रवेश होता है पुलिस वाहन से दो अग्निदग्ध देह अस्पताल में पहुँचने से जो पति-पत्नी होना अनुमानित है। प्राथमिक परीक्षण में ज्ञात होता है कि स्त्रीदेह तो मृतावस्था में ही अस्पताल तक पहुँची है और पुरुष देह भी उस स्थिति से बहुत दूर नहीं है। इस स्थिति में ये कैसे पहुँचे इस पर विवरण देने की स्थिति में कोई भी उपस्थित व्यक्ति नहीं है, पुलिस द्वारा साथ में लाया गया उनका पड़ोसी भी नहीं। प्रारंभिक पूछताछ में ऐसा भी नहीं लगता कि दोनों में ऐसा कोई विवाद रहा हो जो इस घटना का कारण बना हो।

घटनाक्रम आगे बढ़ने पर पुरुष पात्र के माध्यम से जो सामने आता है वह बहुत से प्रश्न खड़े करता है। क्या मनुष्य से परिवार, परिवार से समाज और उससे आगे की व्यवस्था की स्थापित मान्यताएँ ऐसी स्थिति में पहुँच गई हैं कि व्यक्तिगत स्वतंत्रता, परस्पर विश्वास और यथास्थिति स्वीकार करने की क्षमता ध्वस्त हो रही है? क्या समाज के तथाकथित सम्मानित व्यक्तित्व ऐसी मानसिकता में पहुँच चुके हैं कि उन पर निरंतर निगरानी रखी जाए? क्या सामाजिक स्वीकार्यता के अभाव में किसी विधमान्य स्थिति का कोई अस्तित्व ही नहीं? क्या सामाजिक स्वीकार्यता के अभाव में निजि जीवन में किसी के निर्णय कोई अर्थ नहीं रखते हैं? क्या सामाजिक स्वीकार्यता के अभाव को हमारे जीवन में इस सीमा तक प्रभाव डालने की अनुमति दी जा सकती है कि वह देह-त्याग के स्तर तक का निर्णय लेने और उसे क्रियान्वित करने तक ले जाए?कहानी से उठे प्रश्न कानून के लिये चुनौती खड़ी करते हैं एक ऐसी सुदृढ़ नियामक व्यवस्था लागू करने की जिसमें जो विधिमान्य है उसे सहज सामाजिक स्वीकार्यता प्राप्त हो सके।

'हरे टीन की छत कहानी' पढ़कर ख़त्म की तो चकित हुआ कहानी के अंत पर। सामान्यत: जहाँ कहानीकार कहानी का अंत कुछ ऐसा लिखते हैं कि वह एक प्रस्तुति को अंतिम रूप दे वहीं पंकज सुबीर की कहानियों में यह विशेषता निरंतर देख रहा हूँ कि कहानी अंत तक पहुँचते पहुँचते कुछ अबूझे प्रश्न छोड़ जाती है। इस कहानी में भी मीरा अर्जुन को पहचान कर भी क्यों स्पष्ट रूप से उससे समक्ष में वार्तालाप नहीं करती है जबकि वह अपने आने का संकेत दे जाती है? क्यों वह अर्जुन के 40 वर्ष के अंतराल के विषय में जानने को उत्सुक नहीं रही? उसे अर्जुन के पिछले 40 वर्ष में कोई रुचि क्यों नहीं है? अमेरिका जैसे खुली सोच वाले देश में रहते हुए भी मीरा का व्यवहार अबूझा रह जाता है। शायद यही लेखन विशिष्टियाँ होती हैं जो किसी लेखक की कहानियों की एक अलग पहचान निर्धारित करती हैं। इस कहानी की एक विशिष्टता यह भी है कि कथानक क्षेत्र के समुचित भौगोलिक शोध पर आधारित है। आरम्भ में एक सामान्य प्रेम कथा लगने वाली कहानी का अंत एक सामान्य प्रेम कहानी जैसा सुखांत अथवा दुखांत न होकर कुछ अबूझे प्रश्नों के माध्यम से पाठक को झकझोर जाता है। यही कथानक को नवीनता प्रदान करता है।

'एक थे मटरू मियाँ, एक थी रज्जो' एक ख़ूबसूरत कहानी है। मुख्य बात यह कि कहानी प्रारंभ से अंत तक उत्सुकता निरंतर बनाये रखती है। प्रारंभ में लगता है कि कहानी एक मुख्य पात्र मटरू मियाँ की असफलताओं की पृष्ठभूमि तक सीमित रह जाएगी जिसमें उनके रज्जो नामक किसी चरित्र से असफल प्रेम की बात आएगी लेकिन जैसे-जैसे कहानी आगे बढ़ती जाती है, नए पात्र जुड़ते जाते हैं और कहानी अनपेक्षित राह पर चल निकलती है और ऐसी निकलती है लगभग अंत तक यह प्रभाव बना रहता है। हाँ कहानी की पृष्ठ संख्या ज्ञात होने से इसका अंत की ओर बढ़ना अवश्य इंगित कर देता है कि मटरू मियाँ की मृत्यु की घटना को मीडिया कवरेज दे रही महिला पात्र कौन संभावित है। कहानी लगभग ऐसी है जैसे कोई समक्ष में बैठा सुना रहा हो। कहानी में पात्रों और घटनाओं का विकास लगातार बाँधे रखता है और बहुत कुछ कहता

है समाज में व्याप्त उस खोखलेपन के बारे में जो अन्य किसी की ज़िंदगी में रुचि से निर्मित होता है जबकि हमारे पास वास्तविकता से दूर कुछ अनुमान भर होते हैं। कहानी अनिश्चितताओं और उतार-चढ़ाव पर भी बहुत कुछ कहती है।

'निर्लिंग'- क्या हमारा तथाकथित सभ्य समाज अपने व्यवहार का दायरा समझने में विफल है ? 'ख़ैबर दर्रा' की पाँचवी कहानी 'देह धरे का दंड' को पूरा करते ही सामने छठवीं कहानी के शीर्षक 'निर्लिंग से एक शाब्दिक अनुमान बना जो कहानी पढ़ने से आंशिक रूप से सही तो सिद्ध हुआ लेकिन इस कहानी का एक पत्र पर आधारित होना इसे अन्य कहानियों से भिन्नता प्रदान करता है।

पूरी कहानी जीवन के अंतिम समय में लिखे गए एक सर्वसंबोधित पत्र के रूप में है। एक ऐसा पत्र जो एक असामान्य देह रूप में जन्मे युवक की आपबीती से जन्मा विस्फ़ोट कहा जा सकता है और सीधे-सीधे प्रश्न खड़े करता है। इन प्रश्नों के संदर्भ में एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह उठता है कि जब जन्म के समय प्राप्त शारीरिक विसंगतियों पर जन्मने वाले का कोई नियंत्रण नहीं होता है तो क्या उसकी यह स्थिति सामाजिक प्रताड़ना/ शोषण का आधार होना चाहिये और इस स्तर तक कि उसे वह विसंगति सबसे छुपाते फिरना पड़े? उसके प्रति सहज स्वीकार्यता क्यों नहीं? क्या देह की किसी असामान्यता को पृथक रखते हुए सामान्य जीवन की अन्य संभावनाओं पर काम नहीं होना चाहिये? क्या चेतना के उच्च स्तर पर स्वयं को स्थापित मानने वाले मनुष्य में परिपक्वता का इतना अभाव है कि वह प्रेम, काम, कामेच्छा, काम-पिपासा, काम संतुष्टि के विषय में अंतर न कर सके और किसी भी सीमा तक जाने में सहज रह सके? क्या पुरुष-देह मात्र काम-संतुष्टि का माध्यम होती है? ये प्रश्न इसलिये और संगत हो जाते हैं कि हम सामाजिक विकास की उस स्थिति में हैं जहाँ आज भी देह-रचना और जननांगों की भूमिका पर परिवार में खुलकर चर्चा नहीं होती है और जानकारी का अभाव ऐसे-ऐसे भ्रम उत्पन्न करता है कि निरर्थक भय अपना साम्राज्य स्थापित कर लेते हैं।

कहानी सांदर्भिक रूप में किन्नर समुदाय की समाजार्थिक व्यवस्थाओं पर भी बात रखती है और अर्न्तपुरुष देह आकर्षण व सम्बन्धों पर भी बात रखती है लेकिन 'देह धरे का दंड' से भिन्न विषय और कथानक के साथ। कहानी में शारीरिक विसंगति के साथ जन्मे बच्चे की माँ की मन:स्थिति और उस स्थिति का उसके द्वारा किया गया निदान दर्शाता है कि समाज का व्यवहारिक न होना कितना मानसिक दबाव निर्मित कर सकता है। कहानी यह भी दर्शाती है कि अभी हम सोच के उस स्तर तक नहीं पहुँचे हैं जहाँ यह स्पष्ट हो कि हमारे व्यवहार का क्या दायरा होना चाहिए। पंकज सुबीर की यह कहानी अचर्चित या अल्प-चर्चित विषय पर खुली चर्चा आमंत्रित कर समाज के समक्ष सोच के स्तर पर परिपक्वता की चुनौती खड़ी करती है।

'आसमाँ कैसे कैसे'- नैतिक मूल्यों पर विश्वास पर पीढ़ियों का वैचारिक द्वंद्व। कहानी संकलन 'ख़ैबर दर्रा' की सातवीं कहानी है 'आसमाँ कैसे कैसे'। समय के साथ हम आगे तो बहुत निकल आए लेकिन इस आगे निकलने में बहुत कुछ पीछे छूट गया और जो पीछे छूट गया उसमें सबसे महत्त्वपूर्ण हैं नैतिक मूल्य। वे नैतिक मूल्य जिन्हें पिछली अंतिम पीढ़ी ने तो कमोबेश जीवनपर्यन्त निभाया लेकिन नई पीढ़ी के लिये कुछ ऐसे कारण बन गए कि नैतिक मूल्यों का पालन ही अविश्वसनीय हो गया, और इतना अविश्वसनीय हुआ कि वर्तमान पीढ़ी को पिछली पीढ़ी से भी इन मूल्यों के पालन का विश्वास नहीं रहा। इस संदर्भ में कहानीकार सुदर्शन की कहानी 'हार की जीत' याद आती है जिसे हिन्दी की श्रेष्ठतम कहानियों में से एक माना जाता है और सुखद् आश्चर्य का विषय है कि यह कहानी आज भी एनसीईआरटी के पाठ्यक्रम में सम्मिलित है। वह कहानी सभी ने पढ़ी होगी और यह भी समझा होगा कि समाज में विश्वास कैसे बनाकर रखा जाता है और कैसे यह टूटकर अविश्वास में परिवर्तित हो सकता है। 'आसमाँ कैसे कैसे' एक पीढ़ी में क़ायम उसी विश्वास और एक पीढ़ी में उस विश्वास के बिखर जाने के द्वंद्व की कहानी है। कहानी मनोयोग से पढ़ने की है। हमारे यहाँ 'कौल देना' कहा जाता था जिसे सामान्य भाषा में ज़ुबान देना भी कहा जाता है और जिसका अर्थ होता था कि 'कह दिया सो कह दिया', वही 'वचनबद्धता' जो रामायण का ताना-बाना बनी। सुखद है कि आज भी वचन के पक्के बहुत से लोग मिलते हैं लेकिन इस वचनबद्धता के प्रति विश्वास में यदि कोई ह्रास हुआ है तो उसके पीछे वचन-भंग के संदर्भ भी है।

कहानी में पात्र अधिक लगते हैं लेकिन कोई भी पात्र निरर्थक नहीं है। पूरी कहानी में सभी पात्रों की चारित्रिक पहचान स्थिर रहती है। जहाँ वचन प्रतिबद्धता है वहाँ निरंतर बनी रहती है। कहानी में शुचिता का एक ख़ूबसूरत उदाहरण तब मिलता है जब कहानी के एक पात्र राघवदास जी कहते हैं कि 'दामू ये सौ रुपये बाहर जाकर राठी को दे दे, जीप लेकर गया था मुझे लेने, उसका डीज़ल जला होगा आने-जाने में। उसे कह दे कि अभी तो सौदा हो गया।' इसी प्रकार जब राघवदास जी के स्वर्गवास उपरांत उनकी पत्नी माया देवी मुनीम जी को निर्देश देती हैं कि "राठी जी को पचास रुपये का भुगतान कर दो। यहाँ आने में ख़र्चा हुआ होगा इनका। नरेश ने बुलवाया है इनको, इसलिए ख़र्चा हमें ही देना चाहिए।" कहानी में ये अंश न होते तब भी कहानी पूरी होती लेकिन इन अंशों के होने से नैतिक मूल्यों में शुचिता का स्तर क्या हो सकता है इसका उदाहरण कहानी में नहीं आ पाता। इस दृष्टि से ये अंश महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं।

कहानी से एक बड़ा प्रश्न निर्मित होता है कि क्या नैतिक मूल्यों पर विश्वास की परंपरा भौतिकवादी सोच के समक्ष बहुत समय ठहर पायेगी, यदि नहीं, तो क्या उसका दुष्परिणाम अविश्वास पर ठहरी सामाजिक व्यवस्था होगा और वह हमें एक दिशा में आगे ले जाते हुए भी अन्य दिशा में इतना पीछे ढकेल देगा कि नैतिक मूल्यों और परंपराओं के लिये कोई स्थान ही नहीं बचेगा। दिशा चयन की बड़ी

चुनौती है समाज के सामने और समाज ने ही इसका निराकरण करना है। यह मनसा-वाचा-कर्मणा शुचिता से ही संभव है। समस्याओं का निराकरण न्याय व्यवस्था कर सके इसकी तो कोई संभावना निकट नहीं दिखती है। दौड़ते-दौड़ते हम जहाँ पहुँच गए हैं वहीं ठहरकर पीछे मुड़कर देखने और आगे का मार्ग निर्धारित करने से ही शायद नैतिक मूल्य और उनपर विश्वास बच सके। कहानी मूल प्रश्नों पर सोचने के लिए मजबूर करती है और यही इसकी सफ़लता है।

'कबीर माया पापणीं'- एक यात्रा का आरंभ। कहानी संकलन 'ख़ैबर दर्रा' की आठवीं कहानी है 'कबीर माया पापणीं'। कबीरदास ने कहा "कबीर माया पापणीं, हरि सूँ करे हराम, मुखि कड़ियाली कुमति की, कहण न देई राम॥" अर्थात् यह माया बड़ी पापिन है। यह प्राणियों को परमात्मा से विमुख कर देती है तथा उनके मुख पर दुर्बुद्धि की कुंडी लगा देती है और राम-नाम का जप नहीं करने देती। कबीर तो कह गए। भारत की बात करें तो अधिकांश ने कबीर के दोहे सुने भी और पढ़े भी, बस गुढ़े नहीं। हम अपने आस-पास नितदिन बड़े-बड़े आदर्श वाक्य सुनते हैं, भजन सुनते हैं और बस सुनते ही हैं। काश् कभी उनको समझ कर आत्मसात भी कर पाते। शायद यही मायावी जगत् की नियति है जिससे शायद ही कोई बच पाया हो। इसी के साथ ही एक ऐसी मानसिक समस्या भी है जिससे शायद ही कोई अछूता हो लेकिन स्वीकार नहीं करता है, वह है स्पिलिट पर्सनैलिटी की जो और अधिक सही रूप में जानी जाती है डिसोसिएटिव आईडेन्टिटी डिसआर्डर के रूप में।

'कबीर माया पापणीं' कहानी इसी पढ़ने-सुनने के बाद आत्मसात न करने और 'डिसोसिएटिव आईडेन्टिटी डिसआर्डर' पर आधारित है। कहानी का प्रमुख पात्र एक ज़िला कलेक्टर है जो एक ओर तो फैक्टरी वर्कर की दुर्घटना में मृत्यु हो जाने के प्रश्न पर मुआवज़े को लेकर नियम-क़ायदों की बात करता है, उसके निम्न आय वर्गीय परिजनों विशेषकर मृतक की माँ में लालच की बात करता है, रिश्ते नातों की लाश पर पैसे की चाहत देखता है; विधायक एवं राजनीतिज्ञों के चरित्र में खोट देखता है; वहीं स्वयं उसके आचरण के विषय में यही सब उसमें भी मौजूद है। उसे स्वयं की मृतावस्था में पड़ी माँ के अंतिम दर्शन से अधिक महत्त्वपूर्ण अगले दो दिन में आय की संभावनाएँ दिखती हैं। उसे दिखता है कि यदि वह अपनी माँ को देखने चला गया तो संभावित आय उसे न होकर उसकी अनुपस्थिति में प्रभारी अधिकारी को होगी। कहानी उदाहरण मात्र से व्याप्त भ्रष्टाचार को इंगित करती है और उस भ्रष्ट आचरण की जड़ में समाये उस चरित्र की बात करती है जिसकी धन-पिपासा कितनी भी समृद्धि प्राप्त कर लेने पर भी शान्त नहीं होती है। कहानी के मुख्य पात्र के माध्यम से चारित्रिक दोगलापन और मायाजाल की जकड़न खुलकर आती है। कहानी एक बार तो सोचने पर मजबूर करेगी कि आख़िर किसलिये और आख़िर कब तक। जिसने यह सोच लिया उसकी एक नई यात्रा का आरंभ सुनिश्चित है।

'इजाज़त@घोड़ाडोंगरी'- कड़वाहट की स्थिति में संबंधों की निरंतरता का प्रश्न। कहानी संकलन 'ख़ैबर दर्रा' की नौवीं और अंतिम कहानी है 'इजाज़त@घोड़ाडोंगरी'। पंकज सुबीर की अधिकांश कहानियों में कुछ विशिष्टियाँ होती हैं जिनमें से एक है कि यदि किसी भोगौलिक क्षेत्र का संदर्भ कहानी में आता है तो वह समुचित अध्ययन पर आधारित होता है, कोरी कल्पना मात्र नहीं। ऐसा ही इस कहानी में भी है। इसके अतिरिक्त यदि स्त्री-पुरुष प्रेम कहानी में कहीं होता है तो उसमें इन संबंधों में निहित प्रश्नों पर स्पष्ट विचार होते हैं; लेखक अथवा संवाद के माध्यम से। ऐसा ही इस कहानी में भी है।

कहानी की मुख्य पात्र 'धरा' एक स्पष्ट विचारों वाली स्त्री है और सामान्यत: सौम्य व्यक्तित्व की स्वामिनी होते हुए भी अपनी वैचारिक स्पष्टता के कारण दृढ़ भी है। वह प्रतिरोध की मर्यादा भी समझती है और शक्ति भी। कहानी का संवाद उसके पूर्व पति 'ध्रुव' के एकाएक एक रेलवे स्टेशन के वेटिंग रूम में मिल जाने से बनी स्थिति में होता है। संवाद यह स्पष्ट करता है कि ध्रुव ब्राह्मण होने, सुंदर होने और पुरुष होने के दंभ से पीड़ित है और उसका यही दंभ उनके वैवाहिक जीवन के बिखराव का कारण बना। ध्रुव को एकाएक छोड़कर चले जाना और ध्रुव की नज़रों में उससे निम्नतर व्यक्ति के साथ धरा का विवाहेतर जीवन व्यतीत करना ध्रुव के दंभ को स्वीकार नहीं है। संवाद में श्वेतकेतु के पौराणिक संदर्भ से विवाह परंपरा के आरंभ की बात आती है और यह भी कि वैवाहिक संबंध में प्रेम के साथ देह के महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता है। ध्रुव और धरा के संवाद में जहाँ धरा में स्पष्ट विचारों के साथ विनम्रता और दृढ़ता दिखती है वहीं ध्रुव में अर्थहीन दंभ और कटाक्ष। भारतीय समाज में आज भी विवाहेतर सम्बंधों को सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता है जबकि लिव-इन रिलेशनशिप को व्यक्ति के कानूनी अधिकार के रूप में मान्यता प्राप्त है। ऐसी स्थिति में यह कहानी इस विषय पर कानून और सामाजिक स्वीकार्यता में सामंजस्य के अभाव को इंगित करती है। कहानी से उभरकर आने वाला मुख्य प्रश्न यह है कि क्या संबंधों में कड़वाहट का गरल पीते रहने के स्थान पर पृथक होने का मार्ग चुन लेना एक उत्तम विकल्प है?

इन सभी कहानियों में एक विशेषता स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है और वह यह है कि इन कहानियों की दिशा पाठक के पूर्वानुमान ध्वस्त करती हुई धीरे-धीरे बदलती रहती है और कहानी कहीं ऐसी जगह जाकर ठहरती हैं जहाँ पाठक के समक्ष प्रश्न खड़े हो चुके होते हैं। अधिकांशत: कहानियों का अंत अप्रत्याशित रहता है और यह कहानी का सामान्य सोच से हटकर दिशा बदलते हुए अप्रत्याशित अंत तक पहुँचना कहानी में पाठक की रुचि निरंतर बनाये रखता है। इन कहानियों में विषय-चयन में विविधता की विशिष्टता भी स्पष्टत: देखी जा सकती है। कहानियों में जहाँ प्रेम का संदर्भ आता है वह सामान्य से हटकर दैहिक आकर्षण से मुक्त रहता है।

000

शोध-आलोचना

(कहानी संग्रह)

दिन हुए दिवंगत

समीक्षक : डॉ. दिलबागसिंह विर्क

लेखक : प्रियंका ओम

प्रकाशक : श्वेतवर्णा प्रकाशन

2023 में श्वेतवर्णा प्रकाशन से प्रकाशित हुआ कहानी-संग्रह 'दिन हुए दिवंगत' प्रियंका ओम का तीसरा कहानी-संग्रह है। 96 पृष्ठीय इस संग्रह में दस कहानियाँ हैं। प्रियंका ओम के दूसरे कहानी-संग्रह 'मुझे तुम्हारे जाने से नफ़रत है' के 183 पृष्ठों पर सिर्फ पाँच कहानियाँ थी, ऐसे में इस संग्रह की कहानियाँ छोटी हैं। यूँ तो कहानियों की लंबाई कोई अर्थ नहीं रखती, लेकिन इस संग्रह की सामान्य आकार की कहानियों का तात्पर्य यह तो निकलता ही है कि लेखिका ने विषय-वस्तु को अनावश्यक विस्तार नहीं दिया। पहली कहानी 'अजीब आदमी' महज तीन पृष्ठों पर सिमटी हुई है और इस संग्रह की सबसे लंबी कहानियाँ बारह-बारह पृष्ठ की हैं।

कहानियों की लंबाई को छोड़कर अगर विषय-वस्तु की बात करें तो पहली कहानी 'अजीब आदमी' को कहानी कहने की बजाए रेखाचित्र कहा जाना चाहिए। नायिका नायक की तस्वीर देखकर उसके बारे में उसी तरीक़े से वर्णन करती है, जैसे कोई संस्मरण सुना रहा हो और इसकी भाषा इस संस्मरण को रेखाचित्र बनाती है। "हाँ तुम्हारी आँखों की वर्णमाला इतनी तिलिस्मी होती थी कि कई बार मैं उसमें इस तरह उलझ कर रह जाती कि फिर अगली मुलाक़ात तक उसकी गिरहें सुलझाती रहती। कभी-कभी तुम मुस्कराते भी थे जिन्हें तह कर मैं अपने होंठों के गिर्द रख लेती और जब तुमने कहा था - "वो लड़की हँसती है तो रजनीगंधा महकते हैं" और मैं आधी उजली, आधी नारंगी हो शिउली की तरह बिखर गई थी।" (अजीब आदमी, पृ. - 8)

दूसरी कहानी 'चाय खाई नहीं, पी जाती है' पिया और व्योम की पहली ऑफ़िशियल डेट के चित्रण से शुरू होती है और फिर लेखिका फ्लैशबैक तकनीक के सहारे दोनों के इस दिन तक पहुँचने का वर्णन करती है। पिया बंगाली है, इसीलिए उसके अनुसार चाय खाई जाती है। पिया का उच्चारण शुद्ध नहीं, लेखिका ने नायक से यह कहलवाया है, हालाँकि पिया ऐसा कोई वाक्य नहीं बोलती, जो अशुद्ध हो। 'चाय खाई जाती है', इसे उनकी परंपरा माना जाएगा, अशुद्ध उच्चारण नहीं। स्वीटी नामक पात्र की व्यावहारिकता के कारण पिया व्योम की ओर झुकते अपने दिल को समझाती है, लेकिन व्योम उसे डेट पर ले जाने में सफल रहता है।

तीसरी कहानी 'जट्टा और चिरैया' सुहृदय राजपूत परिवार की कहानी है जो जट्टा नामक अनाथ को आश्रय देते हैं। जट्टा ख़ुद को हनुमान और ठाकुर साहब का भक्त बताते हैं। छोटी दुल्हन का पति जब डाकू गंधरवा मुनिया की गोली का शिकार होता है और पति की मृत्यु के बाद वह पुत्री को जन्म देकर उपेक्षित हो जाती है, तो जट्टा उसके प्रेम में पड़ जाता है और उसको लेकर जाने लगता है, तब ठकुराइन भी उसे नहीं रोकती। कहानी की शुरूआत जट्टा की वापसी से होती है और फ्लैशबैक में प्रियंवदा ठाकुर उर्फ चिरैया जट्टा के ठाकुर परिवार से जुड़ाव को याद करती है। कहानी की शुरूआत में चिरैया ग़ुरूर से तनी हुई है, लेकिन अंत में वह अपने माँ के प्रेमी के चरणों में झुक जाती है।

चौथी कहानी 'पज़ल का हल' बाल मनोविज्ञान पर आधारित है। कहानी में अगत्य और फ़लक दो बच्चे हैं, जो सहपाठी हैं। लेखिका ने लड़के-लड़की के अंतर को दिखाया है, लेकिन मुख्य समस्या बच्चों के एकांत की है। अगत्य अकेला है, उसकी माँ दूसरे बच्चे के महत्त्व को समझती है- "मैं समझती हूँ बच्चों के व्यक्तित्व के विकास के लिये भाई या बहन का होना कितना ज़रूरी है। बच्चों में रिश्ते को समझने के लिये और रिश्तों का अस्तित्व बचाये रखने के लिये कम से कम दो बच्चे बेहद ज़रूरी हैं। नहीं तो आने वाले समय में चाचा या बुआ जैसे रिश्ते लोप हो जाएँगे।" (पज़ल का हल, पृ. - 33)

लेकिन डॉक्टर के अनुसार वह दूसरे बच्चे को जन्म नहीं दे सकती। अगत्य को भी मना लिया जाता है, लेकिन उसका दुख कम नहीं होता। फ़लक के दादा-दादी उसे मिलने आ रहे हैं, अगत्य से यह सुनकर माँ को पज़ल का हल मिल जाता है। यह कहानी विदेशी पृष्ठभूमि पर आधारित है और इसी कारण अगत्य दादा-दादी से दूर है। विदेश में आकर उसके स्वभाव में आया परिवर्तन प्रवासियों को दरपेश आने वाली अनेक समस्याओं में से एक के साथ पाठकों को रू-ब-रू करवाता है। साथ ही कम संतान का अर्थ कितना कम होता है, इसे स्पष्ट करता है- "कम का

डॉ. दिलबाग सिंह विर्क
गाँव व डाकघर- मसीतां, डबवाली,
जिला- सिरसा 125104, हरियाणा
मोबाइल- 9541521947
ईमेल- dilbagvirk23@gmail.com

अर्थ एक नहीं होता, कम से कम दो तो होने ही चाहिए, बच्चों के व्यक्तित्व के विकास के लिए यह बेहद ज़रूरी है।" (पज़ल का हल, पृ. - 32)

पाँचवी कहानी 'बाज़ मर्तबा ज़िंदगी' में सोशल मीडिया के ट्रोलर्स के व्यवहार का किसी व्यक्ति विशेष पर क्या प्रभाव पड़ता है, को दिखाया गया है। उमा पर इसी कारण वर्टिगो (मानसिक द्वंद्व का विकार) का अटैक होता है। लेखिका सहायिका के द्वारा उमा के बदले व्यवहार को दिखाती है- "उसने आगे कहा, कुछ दिनों से ठीक नहीं चल रहा, मैडम बेहद तनाव में रहती हैं। खोई-खोई सी दीखती हैं। होकर भी नहीं होतीं। दिमाग़ कहीं और रहता है अभी परसों की ही बात है, दाल के लिए काट रखा टमाटर चाय के लिए उबलते दूध में डाल दिया और दाल में चाय पत्ती। आजकल बहुत झल्लाती हैं, बात-बेबात खीज उठती हैं। बारंबार फ़ोन देखती हैं, जैसे कुछ घटने का इंतज़ार हो। फिर न जाने क्या देखकर व्याकुल हो जाती हैं। सहायिका अबके ठहर-ठहर कर कह रही थी, याद करती हुई, आज सब्ज़ी लेते हुए भी पहले की तरह सजग नहीं थीं। मुझे भिंडी चुनने भी नहीं कहा और लौकी तो बगैर नाख़ून खुबाये ही उठा ली, मैंने देखा ठीक नहीं था तो बदल लिया। ऐसी अनमनी पहले कभी नहीं देखा, क्या कोई गंभीर बात है ? सहायिका चिंतातुर थी।" (बाज़ मर्तबा ज़िंदगी, पृ. - 39)

यह कहानी उन तथाकथित नारीवादियों के सच को भी नंगा करती है, जो पति को भी पर मानती हैं। "उसे हैरत हुई, सोशल मीडिया के इस चरम युग में क्या पति की तारीफ़ भी गुनाह है? हो क्या गया है आजकल की स्त्रियों को? गोद में रखा उमा का पैर खींच महेश ने उसे गले से लगा लिया। आईडेंटिटी क्राइसिस के मारे हैं, बेतरह मौक़ा परस्त।" (बाज़ मर्तबा ज़िंदगी, पृ. - 40)

कहानी में पति-पत्नी के विचार-विमर्श के द्वारा लोगों के दोहरे मापदंड रखने पर टिप्पणी है, विवाहेतर संबंधों में पुरुष के साथ स्त्री को भी दोषी माना गया है। सोशल मीडिया को चरस से बदतर नशा बताते हुए घटती हुई सहनशीलता को दिखाया गया है। उमा को लगता है कि उसका पति महेश उसके साथ है और वह उसे बचा लेगा अन्यथा लोग ट्रॉलिंग से तंग आकर आत्महत्या कर रहे हैं।

छठी कहानी 'रात के सलीब पर' भाषागत और विषयगत, दोनों दृष्टियों से गंभीर कहानी है, जो पाठक को बोझिल और मुश्किल लग सकती है। यह कहानी केतकी और सुकेश के वैवाहिक संबंधों पर आधारित है, जो ठंडे पड़ चुके हैं। बीच मे लेथाबो का प्रसंग है, जिसमें वह अपनी प्रेमिका अपने पिता को सौंपकर उससे रिसोर्ट हासिल करता है, यह प्रेम की दोयमता को दर्शाता है। केतकी विवाह की तेईसवीं वर्षगाँठ पर देवाता नामक वेश्या को पति के पास भेजती है, क्योंकि उसे लगता है कि वह पति की ज़रूरत को पूरा नहीं कर पाती, जबकि वह उसे प्रेम करती है। वह प्रेम और देह के बारे में कहती है - "मेरे लिये प्रेम और देह दो अलग शै हैं, मैं प्रेम को मन का संबंध समझती हूँ और देह को ज़रूरत।" (रात के सलीब पर, पृ. - 52)

और कहानी का अंत मोबाइल पर मिले इस संदेश से होता है, "आपके पति को उपहार मंजूर नहीं।"(रात के सलीब पर, पृ. - 53)

यह संदेश उसके पति के प्रेम को दिखाता है, जो भले पत्नी से सेक्स की माँग करता है, लेकिन शरीर की भूख के लिए इतना अधीर नहीं कि पत्नी को धोखा देकर पर स्त्री से संबंध बना ले।

सातवीं कहानी 'विष्णु ही शिव है' बाल विधवा की दुर्दशा का चित्रण करती है - "गोतिया समाज उसकी छाया से भी दूर भागता, घर की सुहागनें नहा धो बिना सिन्दूर उसका मुँह नहीं देखतीं, एक बार तो अम्मा ने भी कह दिया था "सिन्दूर लगावे से पहले तू सामने न आया कर।"

घर में शादी, गौना, गोदभराई, छट्ठी, मुंडन होता रहा लेकिन वह बंद कमरे से सिर्फ शोर सुनती रही, जो कभी वह किसी शुभ कार्यों में सामने पड़ जाती तो आजी अम्मा को ख़ूब कोसतीं, करमजली को साँकल काहे नहीं चढ़ा रखती, अभगली का नज़र पड़ेगा तो शुभ्हो अशुभ हो जाएगा।" (विष्णु ही शिव है, पृ. - 62)

बाल विधवा को जब घर में रहने वाले उसके हमउम्र विष्णु की उँगली छू जाती है, तो उसकी देह में कंपन पैदा होता है। उसे शिवलिंग की पूजा का अधिकार नहीं, लेकिन आजी की बात सुनकर वह अपनी देह को शुद्ध करने का निर्णय लेती है - "आजी कहती थीं औरत की देह तभी शुद्ध होती है जब उसके भीतर पौरुष का निर्वासन होता है, शिवाला में शिवलिंग और गौरा योनि की प्रस्तर मूर्त है जिसकी पूजा विधवाएँ नहीं कर सकती हैं। शिव गौरा के संगम की कल्पना उसकी कामनाओं का पृथक संसार रच रहा था। अनदेखा। अनछुआ। अबूझा।

किंतु अब वह बूझना चाहती है। अपने भीतर तरंगें महसूस करना चाहती है। वह स्त्री होना चाहती है अपने भीतर पुरुष देह को महसूस करना चाहती है। अपनी अनछुई देह का वितान नहीं होना चाहती है। क्यूँकि उसे विष्णु में अपना शिव मिल गया है।

और वह उसकी कोठरी की ओर चल दी।" (विष्णु ही शिव है, पृ. - 65)

विष्णु के चले जाने के बाद बाल विधवा इसके लिए हस्तमैथुन को अपनाती है। इसका वर्णन कहानी के आरंभ में है। इस प्रसंग के बाद कहानी फ्लैशबैक में कही जाती है। हस्तमैथुन को भारतीय नारियाँ अपवित्र मानती हैं, इसे भी इस कहानी में दिखाया गया है।

आठवीं कहानी 'शर्त एक सौ अस्सी रुपये की' में कथानायक भूत से मिलने की बात को सुनाता है। शिशिर जो कथानायक के साथ हॉस्टल में रहता था और भूतों में विश्वास करता है, वह भूत बनकर उससे मिलने आता है और पर्ची के माध्यम से बताता है कि भूत होते हैं और तुम शर्त हार गए हो।

नौवीं कहानी 'हाँ, आख़िरी प्रेम' एक ऐसे प्रेम की कहानी है, जिसका इज़हार नहीं हुआ या यह भी कह सकते हैं कि लड़का लड़की के इज़हार को समझ नहीं पाया। वह उसे प्रेमिका की बजाए नायिका के रूप में ही देखता है।

अंतिम कहानी 'धूमिल दोपहर' प्रेमी के शादी के बाद मिलने की कहानी है। नायिका

अपने दो पड़ोसियों के सहारे कहानी आगे बढ़ाती है और उसका प्रेमी भी उसका पड़ोसी है। वह अपने पति को बताती है कि वह जिस डॉक्टर के पास जा रही है, वह उसका पूर्व प्रेमी है। उसका पति उसे समझता है, तभी उसे जोला आंटी की चिट्ठी मिलती है जो अपनी पहले कही गई बात के विपरीत इस बात को स्वीकार कर लेती है कि विवाह में प्रेम होता है। नायिका का बेटा जो पहले प्रेम में न होने की बात कहता है प्रेम में होने को स्वीकार कर लेता है।

लोक परंपरा और आम जनजीवन का सजीव वर्णन लेखिका ने किया। शगुन-अपशगुन की धारणा को दिखाया है - "ताई जी कहतीं, "गुरुवार को काला न पहना कर और शनिवार को पीला, अपशगुन होता है।" दुनिया के शुरू होने से पहले से ही शनिदेव और बृहस्पति देव में निरंतर शीत युद्ध चल रहा है।" (जट्टा और चिरैया, पृ. - 17)

बर्तन और बर्तनों में परोसे भोजन से घटनाक्रम के काल और स्थान का बोध करवाने में लेखिका सफल रही है - "एक इंच ऊँची घेरे वाली बड़ी सी काँसे की थाली। आधी थाली में थाली के भीतरी आकार के मकई की एक मोटी रोटी के दो टुकड़े को एक के ऊपर एक रख दिया गया था और बची हुई आधी थाली को गरम-गरम अरहर की दाल से भर दिया गया था।" (जट्टा और चिरैया, पृ. - 18)

वातावरण के चित्रण में भी लेखिका सफल रही है - "शहर से दूर पश्चिमी तट पर संपर्क तंत्र से रहित, लम्बेतर ताड़ दरख्तों से घिरा यह पोशीदा जज़ीरा बुजदिला वास्ते बहिश्त है। शोर शराबे से पस्त भागम भाग वाली चलती-फिरती दुनिया से दूर केतकी अक्सर यहाँ आती रहती है। उसे यहाँ का एकांत लुभाता है, यहाँ वक़्त ठहर जाता है। आईवरी कोस्ट का यह खुला अहाता उसकी पसंद की जगह है, विशेष कर ठीक बीच में झूलता सफेद रस्सियों से बुना हम्मोक जहाँ अभी वह बैठी है। यहाँ से अनन्त समंदर और आकाश दोनों दिखाई देते हैं। चंद्र मास के शुक्ल पक्ष की अंतिम तिथि वह देखती है आसमाँ के माथे पर चाँद का बड़ा सा टीका और बदन पर सितारों जड़ा दोशाला ओढ़े नई दुल्हन-सी इठलाती हुई रात। नीचे चाँदी के वर्क में लिपटा बहर यहाँ से वहाँ तक पिघले पारे का पसारा और उसपे मटकती किरणों की स्वरोवोस्कियाँ। सुदूर मगरमच्छ की आँखों-सा टिमटिमाती लड़ियों वाला पूर्व की ओर बढ़ता वृहदकाय पोत, ठीक उसके पीछे वृतम तैल-वाहक और ज़रा दूर होकर तैरता दोनों से छोटा ड्रिल-शिप।" (रात के सलीब पर, पृ. - 46)

पात्रों के पहरावे का वर्णन है - "सफ़ेद पारदर्शी टॉप और रॉयल ब्लू जींस पहने वह बेहद संजीदा लग रही थी। टॉप के भीतर से स्पष्ट दिखाई देते नीले रंग के फ्लोरल ब्रा पर उसके शैम्पू किये खुले बाल बिखरे हैं। आज से पहले मैंने कभी उसके कपड़ों पर ग़ौर नहीं किया था। न जाने क्यूँ आज कर रहा था। उसने गहरी पिंक कलर की लिपस्टिक लगायी है। मैनिक्योर्ड उँगलियों के नेल भी पिंक रंग से रंगे हैं। बायीं अनामिका में छोटे-छोटे हीरे से घिरे बड़ी सी रूबी जड़ित अँगूठी, गले में पतली सी चेन से लटकता मैचिंग पेंडेंट और दाँयीं कलाई में स्लीक घड़ी। लड़की ज़्यादातर हलके रंग के कपड़े पहनती है। मैं उसे किसी अन्य रंग के कपड़ों में नहीं सोचता। वह जो पहनती है, मुझे वही मुग्ध करता है।" (हाँ, आख़िरी प्रेम, पृ. - 82)

पात्रों के चरित्र-चित्रण में तुलनात्मक शैली का भी प्रयोग है - "काका कभी-कभी ठकुराइन के क्रोधी और दुल्हिन जी के मृदुल स्वभाव का चित्रण किया करते थे। वो कहते - ठकुराइन ने दुनिया देखी है। दुल्हिन अभी कच्ची मिट्टी का घरौंदा है, उसको पकने में समय लगेगा।" (जट्टा और चिरैया, पृ. - 22)

भाषा सौंदर्य इस संग्रह की विशेषता कही जा सकती है। प्रेम में तड़पते पुरुष का चित्रण लेखिका ने बड़े सुंदर शब्दों में किया है - "दालान पर जब दोपहर करवट लेकर साँझ को पुकारती, उस वक़्त उसका हृदय मरण पर सुदूर का रुदनगीत हो जाता और रात के नीम अँधेरे में उसकी जवानी खेत हो जाती। उसे प्रेम का सूद चुकाना था। द्वैत चाहनाओं की बाती अनुल्लंघ्य नियमों की ढिबरी में रात भर जलती। उसकी रातें रीती ही रहतीं।" (जट्टा और चिरैया, पृ. - 24)

स्थानीय भाषा का पात्रानुसार सुंदर प्रयोग मिलता है - "ठकुराइन को जट्टा कभी नहीं सोहाया। कहतीं- "कंजी आँखों वाला अपसगुन होता है। जेतना धरती के बाहर ओतना धरती के भीतर। जेकरा अप्पन मतारी-बाप नहीं पूछा, उसको मालिक घर के भीतर काहे ले आए।" (जट्टा और चिरैया, पृ. - 20)

अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयोग सभी कहानियों में भरपूर मात्रा में हुआ है। एक नमूना - "बाज़ दफ़ा दुनिया से गैरवाकिब हो एक तवील एकांत की चाह में शहर के भीड़-भाड़ से दूर बसा यह कैफ़े मुझ जैसे दुश्चिंताओं के दोराहे पर खड़े आदमी के लिए बहिश्त मालूम पड़ती है। मैं यहाँ बारहा आता हूँ, बार-बार आने से यह जगह मुझे अपनी लगने लगी है।" (हाँ, आख़िरी प्रेम, पृ. - 79)

अंग्रेज़ी के शब्दों का भरपूर प्रयोग है, जो विषयानुकूल है, लेकिन इक्का-दुक्का शब्दों को रोमन में लिखा जाना एकरूपता को तोड़ता है। "प्रेम में आँखों की अपनी मूक भाषा होती है इसके फोनेटिक्स को समझने के लिये अलग से भाषा की आवश्यकता नहीं होती है प्रेम में अंधी आँखों की नजरें स्वयं एक्सेंट एक्स्पर्ट हो जाती हैं।" (चाय खाई नहीं, पी जाती है, 14)

पुस्तक का शीर्षक किसी कहानी पर आधारित नहीं, लेकिन यह बीते दिनों की ओर इंगित करता है और तमाम कहानियों में प्रेम साझा तत्त्व है। अत: इसे प्रेम कहानियों का संग्रह भी कहा जा सकता है, लेकिन प्रेम कई रंगों का है। पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव भी इन कहानियों में है, लेकिन भारतीय समाज का चित्रण भी हुआ है। कहानियाँ पाठक को बाँधे रखने में सक्षम हैं और उम्मीद है इस कहानी-संग्रह का भरपूर स्वागत होगा और यह हिन्दी साहित्य में अपनी छाप छोड़ने में सफल रहेगा।

000

शोध-आलोचना

(कहानी संग्रह)

गोद उतराई

समीक्षक : दीपक गिरकर

लेखक : तेजेन्द्र शर्मा

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545

मोबाइल- +91-9806162184

ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

हिन्दी के सुपरिचित प्रवासी कथाकार और प्रसिद्ध कहानी संग्रह "काला सागर" और "ढिबरी टाईट" के लेखक श्री तेजेंद्र शर्मा एक संवेदनशील लेखक होने के साथ एक संपादक भी हैं। हाल ही में इनका नया कहानी संग्रह "गोद उतराई" शिवना प्रकाशन से प्रकाशित होकर आया है। तेजेंद्र जी की प्रमुख रचनाओं में "काला सागर", "ढिबरी टाईट", "देह की कीमत", "यह क्या हो गया!", "बेघर आँखें", "सीधी रेखा की परतें", "क़ब्र का मुनाफ़ा", "दीवार में रास्ता", "प्रतिनिधि कहानियाँ", "मेरी प्रिय कथाएँ", "श्रेष्ठ कहानियाँ", "सपने मरते नहीं", "ग़ौरतलब कहानियाँ", "मौत... एक मध्याँतर", "स्मृतियों के घेरे" (समग्र कहानियाँ भाग-1), "नई ज़मीन नया आकाश" (समग्र कहानियाँ भाग-2), "मृत्यु के इंद्रधनुष", "तू चलता चल", "संदिग्ध", "गोद उतराई" (कहानी संग्रह), पुरवाई पत्रिका का संपादन शामिल हैं।

तेजेंद्र शर्मा का लेखन प्रवासी साहित्य में अपनी विशिष्टता के लिए जाना जाता है। उनकी कहानियाँ भारतीय प्रवासियों की संघर्षपूर्ण जीवन यात्रा को चित्रित करती हैं, जबकि पश्चिमी समाज की जटिलताओं और संबंधों की गहराइयों को भी बख़ूबी उजागर करती हैं। समकालीन हिन्दी कथाकारों में तेजेन्द्र शर्मा अपनी अलग पहचान बनाने में सफल रहे हैं। तेजेंद्र शर्मा का दृष्टिकोण यथार्थवादी है। उनके यथार्थवादी दृष्टिकोण से पात्रों के आंतरिक द्वंद्व सजीव हो उठते हैं। विमान परिचालन की व्यवसायिक सेवा, लंदन प्रवास, लंदन में रेलवे की नौकरी, कैंसर पीड़ित पत्नी का जीवन संघर्ष आदि व्यक्तिगत एवं व्यावसायिक अनुभवों ने तेजेन्द्र शर्मा को न सिर्फ नई कथावस्तु प्रदान की है, बल्कि कहानियों के वातावरण को अत्यंत जीवंत बना दिया है। तेजेंद्र शर्मा अपने जीवन के अनुभव–संसार से हिन्दी कहानी को समृद्ध कर रहे हैं और पाठकों को संवेदनात्मक धरातल पर नितांत नूतन अनुभव लोक से परिचित करा रहे हैं। तेजेंद्र जी की लेखनी मानवीय संवेदनाओं से लबरेज़ है, जिससे पाठक पात्रों के साथ गहरा जुड़ाव महसूस करते हैं। इनके कथा साहित्य में ये पात्रों के संवादों द्वारा गहरी भावनाओं और विचारों को सरलता से व्यक्त करते हैं। तेजेंद्र शर्मा के कथा साहित्य में भारतीय संस्कृति की सौंधी महक है तथा लेखनी में ताज़गी और नवीनता है। उनकी लेखनी पाठकों को सोचने के लिए प्रेरित करती है और मानवीय रिश्तों की जटिलताओं को उजागर करती है। उनकी कहानियों में न केवल सामाजिक मुद्दों का गहरा विश्लेषण होता है, बल्कि वे अपने पात्रों के माध्यम से जीवन के विभिन्न पहलुओं को भी उजागर करते हैं। तेजेंद्र जी की कथा शिल्प में नवीनता और गहराई दोनों हैं, जिससे पाठक न केवल मनोरंजन पाते हैं, बल्कि अपने दृष्टिकोण में भी विस्तार करते हैं। उनकी कहानियाँ वैश्विक संदर्भ में भारत और प्रवासियों के संघर्षों को समझने में मदद करती हैं और यही उनकी विशेषता है। इस प्रकार तेजेंद्र शर्मा का लेखन न केवल साहित्यिक मूल्य रखता है बल्कि समाज को एक नई दिशा भी प्रदान करता है। तेजेन्द्र शर्मा की रचनाएँ प्रवासी जीवन की गहराई और विविधता को समझने का एक सशक्त माध्यम हैं, जो पाठकों को एक नई सोच और संवेदनशीलता से अवगत कराती हैं। इस कृति में जीवन के नित नवीन पक्षों को उजागर करती कहानियाँ हैं। मुझे इस संग्रह की अधिकाँश कहानियाँ सशक्त लगीं। कहानी संग्रह में कुल 7 कहानियाँ हैं। इस कहानी संग्रह की कहानियों में यथार्थवादी जीवन, मानवीय संवेदनाएँ, धोखाधड़ी, पारिवारिक रिश्तों के बीच का ताना-बाना, दोगलापन, संवादहीनता, ईमानदारी, मानसिक और भावनात्मक संघर्ष, लेखक का द्वंद्व, अकेलेपन का दंश आदि का चित्रण मिलता है।

"गोद उतराई" कहानी एक जटिल और संवेदनशील स्थिति को दर्शाती है, जिसमें मानवीय भावनाओं, ज़िम्मेदारियों, और क़ानूनी पहलुओं का मिश्रण है। कहानी अपने कथ्य और कथानक से काफी रोचक बन पड़ी है। दंपत्ति ने बच्चे को गोद लिया, लेकिन एजेंसी द्वारा बीमारी छिपाने के कारण उन्हें बच्चे से भावनात्मक रूप से जुड़ने में कठिनाई हुई। यह कहानी इस बात को भी उजागर करती है कि कैसे एजेंसी की ज़िम्मेदारी थी कि वे दंपत्ति को पूरी जानकारी दें, ताकि वे सही निर्णय ले सकें। जब दंपत्ति ने क़ानूनी सहारा लिया और बच्चे को एजेंसी को वापस

दीपक गिरकर
28-सी, वैभव नगर, कनाडिया रोड, इंदौर- 452016 मप्र
मोबाइल- 9425067036
ईमेल- deepakgirkar2016@gmail.com

कर दिया, तो यह उनके लिए एक कठिन और आहत करने वाला निर्णय था, क्योंकि एक समय के बाद वे उस बच्चे को अपनी ज़िंदगी का हिस्सा मानने लगे थे। इस बीच, उनकी बेटी के लिए यह और भी कठिन था, क्योंकि वह अपने भाई को खोने से दुखी थी। इस पूरी घटना में एजेंसी की धोखाधड़ी और उसके परिणामस्वरूप जुर्माना उसकी ज़िम्मेदारी को कम नहीं करता। यह कहानी न केवल क़ानूनी पहलू को दर्शाती है, बल्कि मानवीय संबंधों और बच्चों के भावनात्मक विकास के महत्त्व को भी उजागर करती है। कहानी में पात्रों की मनोवैज्ञानिक गहराई का प्रभावशाली चित्रण किया गया है।

"गेटलाइन" कहानी लंदन के ओवरग्राउंड रेलवे में, जब यात्री बिना टिकट यात्रा करते हैं, तो वे गेटलाइन को पार करते समय धक्कामुक्की करते हैं। पाश्चात्य देशों में रेलवे में यात्रियों को बिना टिकट यात्रा करने की प्रवृत्ति होती है और उन्हें रोकने के लिए अधिकारियों को किसी प्रकार की कठोर कार्रवाई नहीं करने दी जाती। यहाँ तक कि अगर कोई अधिकारी यात्री को रोकने का प्रयास करता है और उस यात्री से बहस या मारपीट करता है, तो रेलवे अधिकारी को ही निलंबित कर दिया जाता है। कहानी में रॉय के साथ यही हुआ। रॉय ने एक यात्री को जो कि गेट को धकेल कर बाहर जा रहा था, रॉय ने पीछे से उसकी कॉलर पकड़ कर उसे गिरा दिया। यात्री ने शिकायत कर दी। रेलवे प्रबंधन ने पहले रॉय को सस्पेंड किया और फिर नौकरी से निकाल दिया। इससे यह स्पष्ट होता है कि पाश्चात्य रेलवे प्रणालियों में, अधिकारियों को यात्रियों के साथ किसी भी प्रकार का कठोर व्यवहार करने की अनुमति नहीं होती। इस दृष्टिकोण से भारतीय रेलवे और पाश्चात्य रेलवे प्रणालियों में अंतर देखा जा सकता है, जहाँ भारतीय रेलवे में अधिकारियों के पास यात्रियों को नियंत्रित करने के लिए अधिक अधिकार होते हैं।

"दर-ब-दर" कहानी एक संवेदनशील और भावुक स्थिति को दर्शाती है, जिसमें पुनीता जी को वृद्धावस्था के अकेलेपन का दर्द गहरे रूप में महसूस होता है। वह एक प्रतिष्ठित पेंटर हैं, जिन्होंने वर्षों तक कला की दुनिया में अपने योगदान से पहचान बनाई है। लंदन में उनकी पेंटिंग्स की प्रदर्शनियाँ होती हैं, जहाँ उन्हें सम्मान और प्रशंसा मिलती है। पुनीता जी का परिवार भरा-पूरा होने के बावजूद वह अपने घर में अकेली महसूस करती हैं। उनका पति अब इस दुनिया में नहीं है और उनके बच्चे भी उनसे दूर हैं। बेटी तूलिका, जो शायद किसी कारणवश अपनी माँ से नफ़रत करती है, कभी उनसे मिलती नहीं और बेटा अमेरिका में बस चुका है, जिसने सभी से रिश्ते तोड़ लिए हैं। वह पैसों से समृद्ध हैं, लेकिन समृद्धि से बढ़कर एक चीज़ की उन्हें सख्त ज़रूरत है - संगति। यही कारण है कि वह अपनी सहेलियों के घर भोजन करने और रात में सोने के लिए जाती हैं, ताकि उनके अकेलेपन को कुछ राहत मिल सके। उनके लिए ये छोटे-छोटे पल बहुत मायने रखते हैं, क्योंकि इनसे उन्हें वह सुकून मिलता है जो उनका परिवार नहीं दे पा रहा। उनकी कहानी हमें यह एहसास दिलाती है कि उम्र बढ़ने के साथ अगर रिश्तों की अहमियत कम हो जाए, तो अकेलापन कितना भयानक रूप ले सकता है। पुनीता जी का अकेलापन उन्हें मानसिक और भावनात्मक रूप से टूटने की कगार तक पहुँचा देता है। हालाँकि, उनका दोहता अपनी छुट्टियों में नानी के पास आता है तो उन्हें ख़ुशी मिलती है, लेकिन यह पल अस्थायी होते हैं। पुनीता जी के लिए, वृद्धावस्था में अकेलेपन से संघर्ष करना एक कठिन और कष्टकारी यात्रा है। इस प्रकार, पुनीता जी की कहानी अकेलेपन, रिश्तों की अहमियत और जीवन के अंतिम दौर में सुकून की तलाश को बहुत ही संवेदनशीलता से प्रस्तुत करती है।

"साथी न कोई मंज़िल" कहानी का मुख्य किरदार ऐडी है जो सियेरा लियोन से है। वह ब्रिटेन में दो नौकरियों के बीच अपना जीवन यापन करता है, वह एक बैंक में सिक्योरिटी अधिकारी है और वह लोकल गवर्नमेंट में काउंसलर भी है। ऐडी की पत्नी एंजेला, यू.के. में सियेरा लियोन की राजदूत थी और उसकी प्रतिष्ठा और सम्मान का असर सीधे तौर पर ऐडी की ज़िंदगी पर भी पड़ता था। वह अपने मित्रों के सामने गर्व से अपनी पत्नी के ऊँचे पद और उसकी भूमिका के बारे में बात करता है और उसे इस बात का भी अहसास होता है कि इस सम्मान और प्रतिष्ठा की वजह से उसे समाज में एक ख़ास स्थान मिला हुआ था। राजदूत के पति होने का जो सम्मान और सुख उसे मिलता था, अब उसकी पत्नी की मृत्यु के बाद वह सब ख़त्म हो चुका है। अब ऐडी के सामने दो चुनौतियाँ थीं – पहली, वह ख़ुद को इस नए ख़ालीपन से जूझने के लिए तैयार कर रहा था और दूसरी, उसे यह सोचने का समय मिल रहा था कि क्या उसने अपनी पत्नी से सही तरीक़े से प्यार किया था, या वह सिर्फ अपनी पत्नी के पद और सम्मान में लिप्त था। ऐडी का जीवन अब पहले जैसा नहीं था। उसकी दिनचर्या में बदलाव आ चुका था और यह बदलाव उसकी पहचान और जीवन के उद्देश्य को भी प्रभावित कर रहा था। वह यह सोचने को मजबूर था कि उसने अपनी पत्नी के साथ बिताए गए तीस सालों को सिर्फ एक उच्च पद के साथ जीने के रूप में देखा था या फिर वह वास्तविक प्रेम और जुड़ाव से उसके साथ था। कहानी में ऐडी के भीतर एक अंदरूनी संघर्ष का चित्रण किया गया है, जहाँ वह अपनी पत्नी की मृत्यु के बाद ख़ुद को पहचानने की कोशिश कर रहा है। ऐडी की व्यक्तिगत ज़िंदगी में आए इस बदलाव को समाज, राजनीति और भ्रष्टाचार मुक्त व्यवस्था से जोड़कर, कथाकार एक गहरे सामाजिक और व्यक्तिगत संवाद को सामने लाते हैं।

"माफ़ीनामा" कहानी बहुत ही दिलचस्प और भावनात्मक है। एक बालक ने बचपन में सोढ़ी अंकल की दूकान में आइसक्रीम की चोरी की। वह बड़ा होने पर अपनी ग़लती स्वीकार करता है और एक ईमानदार इंसान बनने का संकल्प लेता है। सोढ़ी अंकल और डेविड के बीच के संवाद भी कहानी में एक गहरी अर्थवत्ता लाते हैं।

"आत्मा कहाँ है" कहानी वास्तव में लेखन की गहरी और संवेदनशील प्रकृति को उजागर करती है। यह कहानी एक लेखक के

अंतर्मन और उसके द्वंद्व को बहुत ख़ूबसूरती से प्रस्तुत करती है। लेखन केवल शब्दों का खेल नहीं होता, बल्कि यह एक आत्मिक प्रक्रिया है, जिसमें विचार, भावनाएँ और संवेदनाएँ जुड़ी होती हैं। तकनीकी कौशल या काव्यात्मक प्रदर्शनों का अत्यधिक प्रयोग कभी-कभी इन गहरे भावनात्मक पहलुओं को ढंक सकता है, जिससे लेखन की असली आत्मा खो जाती है। कभी-कभी लेखक जितना अधिक सशक्त और तकनीकी रूप से सक्षम बनता है, उतना ही उसे अपनी सृजनात्मकता और आंतरिक आवाज़ को बचाए रखना कठिन हो सकता है। उसे यह सोचने पर मजबूर होना पड़ता है कि क्या वह अपने लेखन में सच्चाई और ईमानदारी को बनाए रख पा रहा है, या फिर केवल बाहरी प्रभाव और पांडित्य का प्रदर्शन कर रहा है। इस द्वंद्व में, लेखक आत्ममंथन करता है और यह महसूस करता है कि केवल शब्दों का कुशल चयन और तकनीक का सही इस्तेमाल करने से लेखन की आत्मा जीवित नहीं रहती। असल में, लेखन का सार वही होता है जब वह सीधे पाठक के दिल को छूता है, जब उसमें एक सच्चाई होती है, एक गहराई होती है, और जब लेखक की आत्मा उस लेखन में प्रवाहित होती है।

"यह उत्सव मेरा है" कहानी वाक़ई एक गहरे और संवेदनशील विषय पर आधारित है, जो जीवन और मृत्यु के बीच के जटिल रिश्ते को उजागर करती है। लूसी का ब्रेस्ट कैंसर के साथ जीवन का सामना करना और इस कठिन समय में अपनी मृत्यु को एक उत्सव के रूप में मनाने का निर्णय, उसे न केवल अपनी स्थिति को स्वीकार करने की क्षमता देता है, बल्कि यह उसके जीवन के प्रति उसकी गहरी समझ और सराहना को भी दर्शाता है। इस कहानी में लूसी न केवल शारीरिक बीमारियों, बल्कि मानसिक और भावनात्मक संघर्षों का भी सामना करती है। लूसी का अपनी मृत्यु से पहले ख़ुशी के पल जीने की इच्छा, जीवन को अर्थपूर्ण बनाने का एक तरीक़ा है। वह इस अंतिम यात्रा को न केवल अपने लिए, बल्कि अपने क़रीबी लोगों के लिए भी एक सुंदर और सकारात्मक अनुभव बनाना चाहती है। इस कहानी के माध्यम से यह संदेश मिलता है कि जीवन चाहे जितना भी कठिन हो, हम इसे अपने तरीके से जीने का अधिकार रखते हैं और मौत भी एक अंतिम संस्कार नहीं, बल्कि एक उत्सव, अपने साथियों के प्रति एक कृतज्ञता का अवसर बन सकती है। इस कहानी में कथाकार ने कैंसर के अंतिम स्टेज से गुज़र रही लूसी की मन स्थिति और उसके मनोविज्ञान का चित्रण सफलतापूर्वक किया है।

तेजेन्द्र शर्मा की कहानियाँ किसी भी सामान्य कथासंरचना से परे होती हैं, क्योंकि वे समाज और जीवन की गहरी और जटिल परतों को उजागर करती हैं। उनके अन्वेष्णात्मक दृष्टिकोण से यह स्पष्ट होता है कि वे न केवल बाहरी घटनाओं पर, बल्कि उनके मानसिक, सामाजिक और भावनात्मक आयामों पर भी अपनी पैनी नज़र रखते हैं। तेजेन्द्र शर्मा जी का लेखन न केवल पाठकों को मनोरंजन प्रदान करता है, बल्कि उन्हें जीवन के विभिन्न पहलुओं पर सोचने के लिए भी प्रेरित करता है। उनका अन्वेषणात्मक दृष्टिकोण, जिसमें वे घटनाओं को नए संदर्भ और दृष्टिकोण से देखते हैं, उनके पाठकों को हमेशा कुछ नया सिखने और समझने का अवसर प्रदान करता है। उनकी कहानियों में अक्सर सामाजिक और व्यक्तिगत संबंधों की जटिलता, मनोविज्ञान, और जीवन की विसंगतियाँ देखने को मिलती हैं, जिससे उनकी रचनाएँ विचारों और संवेदनाओं का एक समृद्ध खजाना बन जाती हैं। इस संग्रह की कहानियाँ ज़िंदगी की हक़ीक़त से रू-ब-रू करवाती हैं। तेजेन्द्र शर्मा की कहानियों में सिर्फ पात्र ही नहीं समूचा परिवेश पाठक से मुखरित होता है। तेजेन्द्र शर्मा के इस संग्रह की कहानियाँ वाकई एक अनोखा अनुभव प्रस्तुत करती हैं। उनकी शैली में जो सूक्ष्मता और गहराई है, वह पाठकों को सिर्फ कथानक में नहीं, बल्कि उसके पीछे की भावनाओं और मनोविज्ञान में भी खींच ले जाती है। तेजेन्द्र शर्मा के संवाद पाठकों को इस तरह बाँध लेते हैं कि वे पात्रों के साथ जुड़ जाते हैं, उनके विचारों और संवेदनाओं को महसूस करते हैं। यह संवाद की शक्ति ही है, जो पाठकों को उस कहानी के साथ एक गहरे स्तर पर जोड़ देती है और पाठक ख़ुद को उस कथा के प्रवाह में पूरी तरह से खो देता है। कई कहानियों के अंत तो पाठकों को न केवल चौंकाते हैं, बल्कि अंदर तक झकझोर कर रख देते हैं। वे कहानी के प्रवाह को तोड़कर पाठकों के मन में एक अनिश्चितता का माहौल पैदा करते हैं, जो अंततः एक नई अंतर्दृष्टि के साथ समाप्त होता है। तेजेन्द्र शर्मा का यह तरीक़ा न केवल कहानियों को रोचक बनाता है, बल्कि यह पाठकों को सोचने और महसूस करने पर मजबूर भी करता है। वे जीवन के जटिल पहलुओं को सहजता से उजागर करते हैं, जिससे पाठक न केवल कहानी को बल्कि अपनी ज़िंदगी को भी एक नए नज़रिये से देखने लगता है। इनकी रचनाएँ संवेदनाओं के एक नए आयाम को छूती हैं। कथाकार तेजेन्द्र शर्मा की कहानियों में नारी पात्र के विविध रूप चित्रित हुए हैं। तेजेन्द्र शर्मा की कहानियों के स्त्री चरित्र स्वयं निर्णय लेने की क्षमता रखते हैं। तेजेन्द्र शर्मा की लेखनी में विशिष्टता और गहराई है। वे संवादों और विवरणों का कुशलता से इस्तेमाल करते हैं, जिससे पाठक कहानी के माहौल में ख़ुद को डूबा हुआ महसूस करते हैं। उनकी इन कहानियों की शैली में सूक्ष्मता और विचारशीलता दोनों हैं जो कहानी को और भी प्रभावी बनाते हैं। कहानियों के कथ्यों में विविधता हैं। सहज और स्पष्ट संवाद, घटनाओं, पात्रों और परिवेश का सजीव चित्रण इस संग्रह की कहानियों में दिखाई देता हैं। भाषा में चित्रात्मकता है। इस संग्रह की कहानियाँ पाठक के जेहन में अविस्मरणीय छाप छोड़ जाती हैं। लेखक ने परिवेश के अनुरूप भाषा और दृश्यों के साथ कथा को कुछ इस तरह बुना है कि कथा ख़ुद आँखों के आगे साकार होते चली जाती है। इनकी कहानियों के पात्र जेहन में हमेशा के लिए बस जाते हैं। बेशक "गोद उतराई" (कहानी संग्रह) एक पठनीय और संग्रहणीय कृति है।

000

(कहानी संग्रह)

मेरी कहानियाँ - रेखा राजवंशी

समीक्षक : ओम वर्मा
लेखक : रेखा राजवंशी
प्रकाशक : इंडिया नेटबुक्स

ओम वर्मा
100, रामनगर एक्सटेंशन
देवास 455001(म.प्र.)
मोबाइल- 9302379199
ईमेल- om.varma17@gmail.com

सैयद इंशाअल्लाह ख़ाँ की लिखी कहानी 'रानी केतकी की कहानी' (1803 या 1808) को यदि हिन्दी की पहली कहानी माना जाए तो मानना होगा कि कहानी आज लगभग 225 वर्ष की यात्रा पूर्ण कर चुकी है। हमेशा की तरह यहाँ भी विद्वानों में मतभेद है। कुछ विद्वान किशोरीलाल गोस्वामी की कहानी 'इंदुमती' (1900), कुछ माधवराव सप्रे की 'एक टोकनी भर मिट्टी' (1901) और कुछ आचार्य रामचंद्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय' (1903) को हिन्दी की पहली कहानी के रूप में शामिल करते हैं। इस बात में भले ही मतैक्य न हो, मगर इस बात में तो सभी समालोचक एकमत हैं ही कि इस यात्रा में हिन्दी कहानी विश्व साहित्य में अपनी पहचान बना चुकी है व एक मुकाम हासिल कर चुकी है। ख़ुशी व संतोष की बात यह है कि इस क्षेत्र में महिलाएँ भी पीछे नहीं हैं और अन्य विधाओं की तरह कहानी में भी उनका सार्थक हस्तक्षेप और पृथक पहचान दिखाई देती है।

भारत में रहकर तो साहित्यकारों ने हर विधा में जो काम किया वह तो सामने आ ही जाता है। मगर आजीविका के लिए या परिजनों के दूसरे देशों में जा बसने के बाद उन आप्रवासियों ने या उनके परिजनों ने वहाँ भी हिन्दी का परचम लहराने में कोई कोर-कसर नहीं रहने दी है। ऐसे कई साहित्यकारों की रचनाएँ समय समय पर कभी इंटरनेट की कृपा से तो कभी मुझे अपने ऑस्ट्रेलिया प्रवास पर देखने को मिलती रही हैं। ऐसे आप्रवासी हिन्दी साहित्यकारों में एक उल्लेखनीय नाम रेखा राजवंशी का है। सिडनी में बाल मनोविज्ञानी व शिक्षाशास्त्री के रूप में तो उनकी पहचान है ही, साहित्य, कला व संस्कृति के क्षेत्र में भी उन्होंने एक संस्था ILASA (इंडियन लैंगवेज एंड आर्ट सोसायटी) की स्थापना कर एक उल्लेखनीय कार्य किया है। इसके माध्यम से उन्होंने साहित्य, कला व संस्कृति में रुचि रखने वाले आप्रवासियों को जोड़ने का, उन्हें मंच प्रदान करने का, व उनमें इस बारे में रुचि पैदा करने का उल्लेखनीय कार्य किया है।

लेकिन यहाँ बात उनके रचनाकर्म की करना चाहता हूँ।

मेरे पास उनका दूसरा कथा संग्रह है। यह यह इंडिया नेटबुक्स, नोएडा द्वारा प्रकाशित की जा रही कहानिकारों की कथामाला शृंखला की 12 वीं कड़ी है। संग्रह में कुल 17 कहानियाँ हैं। हिन्दी साहित्य में एक जुमला अक्सर कहा जाता है कि स्वतंत्रता से पहले के भारत के ग्रामीण जनजीवन को जानना हो तो प्रेमचंद का कथा-साहित्य और उपन्यास पढ़ना चाहिए और बिहार के आंचलिक जनजीवन की पड़ताल करनी हो तो रेणु रचनाकर्म को आत्मसात् करना होगा। इसी तर्ज पर रेखा राजवंशी के कथा साहित्य को पढ़कर बहुत सहजता से यह कहा जा सकता है कि ऑस्ट्रेलिया में रह रहे आप्रवासी भारतीयों की जीवन शैली, उनके सुख-दुख, उनके वहाँ बसने के पीछे के कारण, औचित्य, उसके दूरगामी परिणाम, वहाँ रहकर ग़लत बातों को अपनाने वाले, या नाम कमाने वाले लोगों, वहाँ की संस्कृति को अपना लेने वाले या वहाँ रहते हुए भी अपने अंदर के भारतीय मनुष्य, बल्कि अपनी आत्मा को अक्षुण्ण रख सकने वालों का जीवंत दस्तावेज़ है ये सत्रह कहानियाँ।

इन कहानियों का एक विहंगावलोकन किया जा सकता है। पहली कहानी तलाश रेखा राजवंशी के ऑस्ट्रेलियाई जनजीवन के गहन अध्ययन, और वहाँ के मूल निवासियों के प्रति उनकी पक्षधरता को उजागर करती है। इस कथा को पढ़ने से पहले ऑस्ट्रेलिया का संक्षिप्त इतिहास जान लेना उचित होगा। यहाँ के मूल निवासी एबोरीजनल्स समुदाय के आदिवासी हैं। वर्तमान गोरे लोग यहाँ के मूल निवासी नहीं हैं। 1900 से 1960 के मध्य अँग्रेज़ों द्वारा अनुमानत: तीन लाख आदिवासी बच्चों को उनके परिवार से जबरन छीन लिया गया था ताकि वे 'सभ्य' होकर अँग्रेज़ी समुदाय में सामंजस्य स्थापित कर सकें और उनके काम आ सकें। इस कहानी में इसी 'स्टोलेन जेनेरेशन' यानी चुराई हुई पीढ़ी की पीड़ा को अभिव्यक्त किया गया है। यह भी सत्य है कि अब एबोरीजनल्स समुदाय का कोई उत्पीड़न नहीं होता और उन्हें वर्तमान शासन द्वारा कुछ विशेष सुविधाएँ या अधिकार भी दिए गए हैं। मैंने कुछ पब्लिक स्पॉट्स पर कुछ गोरे लोगों को एबोरीजनल समुदाय की तरह रँगे हुए शरीर व वेषभूषा में भी देखा है। यह वर्तमान पीढ़ी द्वारा यह संदेश देने का प्रयास है कि हमें उनके पुरखों पर हुए उत्पीड़न का न सिर्फ़ खेद है, बल्कि आज हम उनके साथ खड़े हैं। कहानी की नायिका नेटा ऐसी ही एक स्टोलेन जेनेरेशन की कन्या है जिसका उसकी बड़ी बहिन के साथ कथित 'सभ्य' लोगों द्वारा उसका गोरे लोगों से सामंजस्य स्थापित करने के नाम पर अपहरण कर लिया जाता है। ऐसे तमाम बच्चों का उत्पीड़न, एकांतवास और कुछ लड़कियों का शारीरिक शोषण आदि परिस्थितियों का सामना करते हुए सब ज़िम्मेदारियों से मुक्त होने के बाद नेटा अपने पुरखों और क़बीले को खोजने निकाल पड़ती है और आख़िर उन्हें पा ही लेती है। नेटा के माता-पिता भले ही दुनिया छोड़ चुके होते हैं, मगर उनकी मूल क़बीला संस्कृति अभी जीवित है, यही जानना और खोजना जैसे नेटा के जीवन का एकमात्र लक्ष्य था। कहानी में पाठक बहता चला जाता है और स्वयं को एबोरीजनल्स के नाम से जानी जाने वाली शोषित जनजाति के पक्ष में खड़ा पाता है जहाँ लेखिका तो मौजूद है ही।

'तुम्हारे लिए' एक बड़ी सी मासूम सी प्रेम कहानी है। तारा का जय से प्रेम हो जाता है। मगर जब उसकी नौकरी अमेरिका में लग जाती है तो वह यह बात सहजता से तारा को बताने में ही कुछ दिन लगा देता है। तारा को लग जाता है कि वह जय के लिए महज टाइमपास ही है। बाद में तारा को मालूम पड़ता है कि जय ने अमेरिका में अपना जीवनसाथी ढूँढ़ लिया है। यहाँ तक यह एक साधारण सी अनेक बार दोहराई गई प्रेमकथा भर है। मगर यही कहानी का टर्निंग पॉइंट व संदेश भी है। कहानी का संदेश यह है कि "शायद उसने (तारा ने) ही ज़्यादा उम्मीदें लगा ली थीं। उसने फ़ोन उठाया और जय का नंबर ब्लॉक कर दिया। इंस्टग्राम, फ़ेसबुक और ट्विटर सबसे उसे निकाल दिया। कई दिन तक अपसेट रही, ऐसे में उसकी सहेलियों ने बहुत साथ दिया। उसे आगे बढ़ना होगा, अपना भविष्य बनाना होगा।" और अब स्टूडेंट वीज़ा पर वह आ जाती है ऑस्ट्रेलिया यानी सिडनी जहाँ उसे भिन्न-भिन्न राष्ट्रीयता वाले मित्र मिलते हैं। यहाँ रेखा राजवंशी कहानी को एक कलात्मक मोड पर लाकर छोड़ देती हैं जब एक मित्र ट्रिस्टन उसके दरवाज़े पर उसकी पसंद के रजनीगंधा के फूलों का गुलदस्ता रखकर चला जाता है और तारा को कार्ड पर ट्रिस्टन का नाम पढ़कर लड़ता है जैसे तारा के बंद कमरे में राजनीगंधा की महक फैल गई, और परदेस में अचानक जैसे मौसम बादल गया।

'मंगलयम' कहानी में अंतरजातीय विवाह की कठिनाइयों का दंश झेल रही नायिका की व्यथा का चित्रण है। नायिका नमिता गुजराती होने के कारण और पति स्वामी के तमिल ब्राह्मण परिवार में स्वीकृत नहीं होती। मगर अंतत: वह अपने धैर्य और सेवाभाव से कैंसर पीड़ित सास की मृत्युपर्यंत सेवा-टहल कर ससुर का दिल जीत लेती है। 'चंदा मामा दूर के' पढ़कर पाठक द्रवित हो सकता है। कहानी का प्रॉटैगनिस्ट एक भ्रूण है जो माँ के गर्भ में है। वहीं से उसका आख्यान शुरू होता है। एक इंटेलेक्चुअल डिसेबिलिटी वाला बच्चा अपने जन्म से लेकर सात साल का होने तक की और फिर अपने सहोदर के आगमन तक की जो कथा सुनाता है उसमें पाठक रेखा जी के लेखन का कौशल व बालमनोविज्ञान की उनकी गहरी समझ का मुरीद होकर रह जाता है। यह बेहद मार्मिक कहानी है।

अगली कहानी है 'उन्नीस सौ पैंसठ' यानी भारत-पाक युद्ध। युद्ध की विभीषिका को लेखिका ने एक वाक्य में बता दिया है कि- "युद्ध हमारी ज़िंदगी कैसे बादल देता है, पहली बार पता चला। युद्ध तन ही नहीं मन भी तोड़ देता है।" कहानी में एक पाँच-छह साल की बच्ची द्वारा द्वारा देखा भुगता गया घटनाक्रम है जिसमें ड्यूटी करते समय बम से घायल हुए रेलवे के देशभक्त और ईमानदार पिता का देशभक्ति का जज़्बा सामने आता है। अपने स्वर्गीय पिता को उनके कार्य का उचित

मान-सम्मान भले ही न मिल पाता है, मगर कहानी की अंतिम पंक्तियाँ सब कुछ कह देती हैं- "आज मैं अपने पापा को एक देशभक्त, ईमानदार रेलवे अफ़सर और सबसे अच्छे पापा का अवार्ड देती हूँ। और हाँ, मेरे पापा पर मुझे बहुत गर्व है!"

'आख़िर क्यों' मिली और ओलिवर की डायरी शैली में लिखी प्रेम कहानी है। 'टेन पाउंड पाम' संग्रह की सबसे छोटी कहानी है। यह ऑस्ट्रेलिया में न्यूज़ीलैंड, इंग्लैंड, इटली और भारत से आ बसे चार आप्रवासी मित्रों मे मेल-जोल और नोक-झोंक की कहानी है। 'वह अधूरी नहीं...' एक उम्दा प्रेम कहानी है जिसमें नायक दलित वर्ग से होने के कारण नायिका के पिता द्वारा ठुकरा दिया जाता है। अपर्णा सिडनी सेटल हो जाती है। जहाँ उसे ब्रेस्ट कैंसर हो जाने के कारण उसका एक स्तन काटना पड़ता है। अब वह 'अधूरी औरत' होने की हीनभावना से ग्रसित होकर जीवन गुज़ार रही होती है। परिस्थितियाँ बदलती हैं और पिता को अपनी ग़लती का अहसास हो जाता है और वे प्रायश्चित करते हुए बेटी के प्रेमी आदित्य को बेटी का नंबर देकर सिडनी जाकर उसे अपनाने की सलाह देते हैं। आदित्य अपनी अपर्णा से सच्चा प्यार करता है इसलिए उसे उसके वर्तमान स्वरूप में अपनी जीवनसंगिनी के रूप में स्वीकार करता है। अपर्णा में आत्मविश्वास जाग जाता है कि वह एक पूर्ण औरत है।

'इत्तेफ़ाक़' कहानी अपने प्रेमी के निधन से एकाकी हो चुकी नायिका की कहानी है। अपने एकाकीपन को वह पैट की देखभाल में व्यस्त होकर दूर करती है। फिर उसे मिलता है एक और पैट लवर जिसके कारण उसके मुरझाए जीवन में फिर बहार आ जाती है। 'अद्भुत शादी' एक समलैंगिक जोड़े के विवाह की कहानी है। इस कहानी में सिडनी में हर वर्ष आयोजित होने वाली एलजीबीटी परेड व एक भारतीय दंपती द्वारा अपने बेटे के समलैंगिक पार्टनर के साथ होने जा रही सगाई की पार्टी के माध्यम से समलैंगिक संबंधों पर एक खुली बहस को जन्म दिया है। कहानी के माध्यम से यह तथ्य उभरकर सामने आता है कि यह एक प्रकृतिजन्य व्यवस्था है जिसे समाज को स्वीकारना होगा।

'शून्य' भी एक लाजवाब कहानी है। लड़की जैसे जैसे बड़ी होती जाती है, उसे कहाँ कैसे और किन-किन रूपों में दैत्यों का सामना करना पड़ता है... यह इस कहानी का कथासार है। कहानी पूरी तरह फेंटेसी व प्रतीकों की शैली में लिखी गई है। मैं इसे एक कलात्मक कहानी का दर्जा देना चाहूँगा। कहानी 'कच्चे ज़ख्म' 1990 में कश्मीरी पण्डितों पर हुए ज़ुल्मों का जीवंत दस्तावेज़ है। कहानी का सशक्त कलापक्ष यह है कि इसमें किसी समुदाय या दल के ख़िलाफ़ कोई उपदेश या टिप्पणी नहीं है। सिर्फ़ एक कश्मीरी पण्डित परिवार की महिला द्वारा नायिका को सुनाई गई अपनी दर्द भरी कहानी है जिसे सुनाकर वे हल्की हो लेती हैं और नायिका सहानुभूति के दो शब्द बोलकर उनके कच्चे ज़ख्म पर थोड़ा सा मरहम लगा देती है।

अगली कहानी है 'शुक्रिया मे'म'। इसे पढ़कर आप बहुत देर तक सहज अवस्था या चैतन्यता की अवस्था में नहीं लौट सकते। यह कहानी रेखा राजवंशी की श्रेष्ठ आठ-दस कहानियों में रखी जा सकती है। इसमें सुपरनेचुरल एलीमेंट का बेहद कलात्मक ढंग से उपयोग किया है। और वह कलात्मकता इस बात में दिखाई देती है कि नायिका का सामना जीवित व्यक्ति से होता है या उसकी रूह से, यह तय करने का फ़ैसला वे पाठको के विवेक पर छोड़ देती हैं। 'रिश्ते पर बैंडेड' कहानी आप्रवासी भारतीय परिवार के युवकों की असफल प्रेमकहानी है। 'टैक्सी ड्राइवर' ऑस्ट्रेलिया में टैक्सी चलाने वाले एक आप्रवासी भारतीय की कहानी है जो अनजाने में दो अपराधी पैसेंजरों को लाने-ले जाने व घुमाने का काम कर बैठता है मगर उनकी संदिग्ध गतिविधि देखकर विवेक से काम लेता है और उनसे पल्ला झाड लेता है। बाद में टीवी न्यूज में उसे उनके अपराधी होने की जानकारी मिलती है तो प्रायश्चित के लिए उनसे टिप में मिली 500 डॉलर की राशि को अनाथालय में डोनेट कर 'पापमुक्त' हो जाता है। संग्रह की हर कहानी की अपनी कुछ विशेषता है मगर अगली कहानी 'छम...छम...छम' मेरी नज़र में सर्वश्रेष्ठ है। किसी परिवार में कोई बालक जन्म ले और कालांतर में जब पता चले कि वह ट्रांसजेंडर है तो परिवार के बाकी सदस्यों पर क्या बीतती है, सब की क्या क्रिया-प्रतिक्रिया होती है और एक कड़वी सच्चाई को स्वीकारना कितना मुश्किल होता है, यह कहानी का कथानक है। बहुत कम कथाकार ट्रांसजेंडर पर ऐसी कलाम चला पाए हैं। इससे पहले पंकज सुबीर ने इस विषय पर एक सशक्त कहानी लिखी है, या कहें कि मेरे पढ़ने में आई है और निर्मला भुराड़िया का उपन्यास 'ग़ुलाम मंडी' पढ़ा है। इस वर्ग पर फ़िल्म 'कुँवारा बाप' में मजरूह सुल्तानपुरी का एक बेहतरीन गीत भी है। बहरहाल रेखा राजवंशी की इस कहानी की जितनी भी प्रशंसा की जाए, कम है। रेखा जी ने बताया कि यह कहानी 'वागर्थ' में 'सच्चाई' शीर्षक से प्रकाशित हो चुकी है, जहाँ स्वाभाविक है कि पाठकों ने ख़ूब सराहा है। मुझे कहानी का शीर्षक 'छम...छम...छम' अधिक उपयुक्त लगता है, वागर्थ में पता नहीं क्यों इसका शीर्षक बदलने की ज़रूरत पड़ी! संग्रह की अंतिम कहानी है 'अलादीन का चिराग़'! ऑस्ट्रेलिया में रह रही बेटी दिल्ली अपनी वयोवृद्ध माँ के पास छुट्टियों में आती है और अलादीन के चिराग़ की तरह माँ की अपने मायके प्रयागराज की गलियों में घुमवाने, अपने भाई और अपनी बचपन की सहेलियों से मिलवाने की इच्छा पूरी करती है। कहानियों की भाषा सुबोध सुगम है।

कहानियाँ चूँकि ऑस्ट्रेलिया की पृष्ठभूमि पर लिखी गई हैं इसलिए जहाँ भी आवश्यक हुआ, उन्होंने वहाँ की भौगोलिक विशेषताओं, दर्शनीय स्थलों और वर्तमान रीति-रिवाजों का उल्लेख भी किया है। यह सब कहानियों का आवश्यक तत्त्व बनकर सामने आता है। संग्रह पढ़कर कहना होगा कि रेखा राजवंशी तन से पूरी तरह ऑस्ट्रेलियाई हो गई हैं, मगर मन से वे पूरी तरह से भारतीय हैं। परदेस में रहकर भी उन्होंने हिन्दी की लौ को भी पूरी शिद्दत से प्रज्ज्वलित कर रखा है।

000

शोध-आलोचना

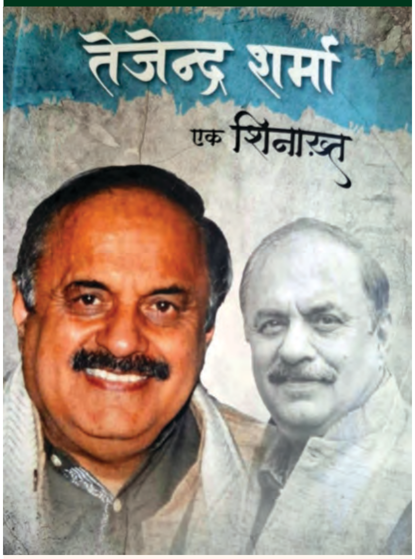

(व्यक्तित्व)

तेजेंद्र शर्मा एक शिनाख़्त

समीक्षक : सुधा जुगरान
संपादक : जितेंद्र पात्रो
प्रकाशक : प्रलेक प्रकाशन

सुधा जुगरान
दिव्या देवी भवन, 16 ई, ई.सी. रोड़
देहरादून- 248001, उत्तराखंड
मोबाइल- 9997700506
ईमेल- sudhajugran@gmail.com

तेजेंद्र शर्मा का नाम साहित्य जगत् में किसी भी परिचय का मोहताज नहीं है। वह अकेले ऐसे प्रवासी साहित्यकार हैं जिनकी ठोस धरातल पर बुनी कहानियाँ हमें अनेकों अनुभवों से गुज़ारते हुए बेहतरीन जानकारियाँ देती हैं, फिर चाहे वे विदेश की सामाजिक स्थिति-परिस्थितियाँ हों या हमारे समाज की दुश्वारियाँ। तेजेंद्र शर्मा एक ऐसे वैश्विक लेखक हैं जिनके पास अनुभवों का विराट ख़ज़ाना है। इसलिए उनकी कहानियाँ मात्र कल्पना नहीं है बल्कि एक दस्तावेज़ है विश्व के अनुभवों व जानकारीपरक परिदृश्यों का। उनकी एयर इंडिया की नौकरी ने उन्हें विश्व दर्शन व वहाँ के सामाजिक दर्शन के जितने अनुभव दिए, उन अनुभवों से पाठक एक नई और अलग दुनियाँ की महीनतम अनुभूतियों से रू-ब-रू होता है। हालाँकि विभिन्न देशों का सामाजिक परिवेश अलग हो सकता है पर जहाँ तक भाव, भावनाओं व अनुभूतियों की बातें हैं, ये कहानियाँ किसी भी देश के पाठक को ख़ुद से जोड़ लेंगी व लेती हैं। ऐसी कहानियाँ जिनका कि विश्व की भाषाओं में अनुवाद होना चाहिए। तेजेंद्र शर्मा की कई कहानियाँ पाठकों को बहुत अधिक प्रभावित करती हैं। लेखक की अनेक कहानियाँ मृत्यु को लेकर इतने अलग-अलग अनुभवों से गुज़रती है कि पाठक हतप्रभ रह जाता।

कहानियों में मृत्यु से पहले व मृत्यु के बाद की दुनिया एक अलग ही दृश्य प्रस्तुत करती है। क्या इन विषयों को लेकर भी कहानियाँ इतनी रोचक रोमांचक व जानकारीपरक बन सकती हैं? अनेक रचनाकारों और बुद्धिजीवियों ने पुस्तक में अपने-अपने आलेखों में तेजेंद्र शर्मा के व्यक्तित्व और कृतित्व पर बहुत गंभीरता व स्पष्टता से लिखा है जो कि तेजेंद्र शर्मा की कहानियाँ पढ़कर व उनसे मिलकर वास्तव में महसूस होता है। यह बिल्कुल सत्य है कि वे अपनी तरह के अलग ही रचनाकार हैं।

पुस्तक में प्रसिद्ध साहित्यकार पंकज सुबीर का भी आलेख पढ़ने को मिला जिसमें उन्होंने प्रवासी साहित्यकारों का दर्द भी उकेरा है। वह कहते हैं कि इन दिनों साहित्य को लेकर बहुत बहस चल रही है, हिन्दी साहित्य को बाँटा जा रहा है। कहीं विमर्श, विचार और वाद के नाम पर तो कहीं स्त्री और पुरुष के नाम पर। इन्हीं सभी बहसों के बीच में एक और बहस है प्रवासी हिन्दी साहित्य को लेकर के। भारत से बाहर रह रहे साहित्यकारों के मन में यह दर्द है कि प्रवासी नाम देकर उनको साहित्य की मूलधारा से अलग किया जा रहा है। प्रवासी साहित्यकार अंक, प्रवासी साहित्यकार सम्मान, प्रवासी साहित्य परिषद, आदि निर्धारित करके विदेश में रहने वाले साहित्यकारों को मुख्य धारा में सम्मिलित न कर उनकी एक अलग धारा बना दी गई है। इसके लिए आवश्यक यही है कि विदेश में रह रहे हिन्दी साहित्य की सेवा करने वाले साहित्यकारों को ही इस धारा का को तोड़ना होगा। प्रवासी साहित्यकार अंक जब निकलते हैं किसी पत्रिका के, तो उसमें हामी भरकर वे इसके पक्ष में खड़े होते हैं। प्रवासी सम्मान पुरस्कार को लेकर के वे इस सम्मान के पक्ष में खड़े होते हैं। अगर सुविधा चाहिए तो मुश्किलें भी लेनी पड़ेगी। इन सब बातों का विरोध भी करना पड़ेगा।

पंकज सुबीर प्रवासी साहित्य के बजाय वैश्विक साहित्य पर ज़ोर देते हैं। पंकज सुबीर तेजेंद्र शर्मा की "काला सागर" का ज़िक्र करते हैं कि यह कहानी मानसिकता की कहानी है। मानसिकता जो देश, काल परिस्थितियों को पार करती हुई कायम रहती है।

डॉक्टर जितेश कुमार कहते हैं कि तेजेंद्र शर्मा हिन्दी के प्रवासी साहित्यकारों की जमात में सबसे अलग हैं। विमर्शों के उत्थान में जागती उनकी कहानियाँ पाठकों को न केवल गति देती हैं बल्कि उन्हें गति में रहने को मजबूर भी करती है। जितेश कुमार कहते हैं कि अपने व्यस्त जीवन में भी इंटरनेट के माध्यम से तेजेंद्र शर्मा सामाजिक होने की भूमिका का बख़ूबी निर्वाह करते हैं। उनके संपादकीय, फेसबुक पर उनका विज़न, उनकी कहानी पढ़ने वाले पाठक, उनके बहुमुखी व्यक्तित्व से भली प्रकार परिचित है। ज्वलंत समस्याओं पर उनके संपादकीय आँखें, दिमाग़ व दृष्टि, विचार खोलने वाले और विचारणीय होते हैं।

पुस्तक में डॉक्टर योगिता भार्गव का एक काफी विस्तृत समालोचनात्मक आलेख तेजेंद्र

शर्मा के व्यक्तित्व और कृतित्व पर लिखा गया है। वे लिखती हैं, "तेजेंद्र शर्मा प्रवासी हिन्दी साहित्य के एक ऐसे हस्ताक्षर हैं जिन्होंने प्रवासी हिन्दी साहित्य को एक नई दिशा देकर पुन: चर्चा के केंद्र में लाकर खड़ा किया है। उनकी कहानियाँ भारत से लेकर लंदन की पृष्ठभूमि के साथ मानवीयता, भौतिकता और उसके पतन की भूमि के साथ मनुष्य के मन की परतों का एक ऐसा दस्तावेज़ हैं जो वर्तमान युवा पीढ़ी को सोचने पर विवश कर दे।

कहानीकार तेजेंद्र शर्मा की कहानियों में मृत्यु विभिन्न रंगों को लेकर आई है। कहीं वह व्यंग्यात्मक रूप से आई है, कहीं वह दर्द की विवेचना लेकर आई है, कहीं तकलीफ़ लेकर आई है तो कहीं आश्चर्यजनक रूप से पाठक को हतप्रभ करती है। इन्हीं मृत्यु के रंगों पर ऑस्ट्रेलिया की रेखा राजवंशी कहती हैं, "किसी भी साहित्यकार द्वारा लिखा गया साहित्य उसके व्यक्तित्व के बारे में बहुत कुछ दर्शाता है। उसकी सोच, चिंतन, मनन, जीवन-शैली के साथ-साथ उसके अनुभव को भी पाठक के सामने लाता है।"

डॉक्टर साधना अग्रवाल भी तेजेंद्र शर्मा की कहानियों में मृत्यु बोध पर बात करती हैं। उनका कहना है कि तेजेंद्र शर्मा की कहानियों पर एक आरोप लगाया जाता है कि "मृत्यु उनकी कहानियों में बार-बार आती है लेकिन हम इसे यूँ भी कह सकते हैं की तेजेंद्र शर्मा ने मृत्यु को इतने नज़दीक से देखा और अनुभव किया कि उनकी कहानियों में इसके अनेक शेड्स देखे जा सकते हैं यानि कोई भी एंगल उनसे ओझल नहीं हुआ है।"

वंदना पुष्पेंद्र लिखती हैं कि "मध्यमवर्गीय मनुष्य के जीवन के संघर्षों, सपनों और हक़ीक़त के कहानीकार हैं तेजेंद्र शर्मा।" वहीं डॉ. प्रभा मिश्रा कहानी में तेजेंद्र शर्मा की संवाद-कला की तारीफ़ करते हुए लिखती हैं, "तेजेंद्र शर्मा संवादों के नायाब शिल्पी हैं। उनके संवाद नए विमर्शों का क्षितिज खोलते हैं।"

इन सभी बुद्धिजीवियों के विचार पढ़कर पाठक को महसूस हो जाता है कि वह एक बहुआयामी रचनाकार की कहानियाँ पढ़ने जा रहा है। पुस्तक में तेजेंद्र शर्मा जी की 16 कहानियाँ हैं। सभी कहानियाँ अपनी विषय-वस्तु, शिल्प, शैली, व संवाद की दृष्टि से बेजोड़ हैं। कुछ बेहतरीन कहानियों का ज़िक्र करना तर्कसंगत रहेगा।

पैसे वालों की सोहबत में एक योग्य हुनरमंद इंसान भी ख़ुद को कैसे बौना समझने लगता है। लंदन परिवेश पर लिखी कहानी, "बेतरतीब सी ज़िंदगी" के कुछ संवाद चौंकाते है और एक पृथक नज़रिये से स्वदेशी व विदेशी पाठक विदेश को लेकर सोचने लगते हैं।

"ताहिरा जी मैं इस मुल्क को अपना मुल्क मानता हूँ। भारत उपमहाद्वीप के लोग यहाँ आते हैं, कमाते हैं, खाते हैं और अपने रिश्तेदारों को पैसे भेजते हैं मगर देश की बुराई करते नहीं थकते मैं इससे सहमत नहीं हूँ।" कहानी का नायक अपने अमीर दोस्त के साथ अपने शायर होने के फलस्वरूप एक अमीरों की महफ़िल में एक दिन की शायरी से कुछ कमाई के लोभ में पहुँच जाता है। वहाँ उसे मान-अपमान की ऊभ-चूभ महसूस होती है लेकिन अंत में वह अपनी शायरी के टेलेंट के माध्यम से सबको बगलें झाँकने को मजबूर कर देता है। इस कहानी का विशिष्ट अंत पाठक को सोच के भँवर में डुबो देता है।

"ढिबरी टाइट" एक ऐसी कहानी जो उन युवकों की आँखें खोलेगी जो अपने देश में कमाई के विकल्प न ढूँढ़, खाड़ी के देशों में या दूसरे देशों में अधिक कमाई व शानो-शौकत के लालच में चले जाते हैं। जब दूसरे देश के रूल्स-रेगुलेशंस उनको कभी अपने लपेटे में ले लेते हैं तब मोहभंग होता है और वे स्वदेश लौटने की सोचने लगते हैं। ऐसा ही कुछ होता इस कहानी के नायक के साथ और अपना सब कुछ लुटा कर अवसादग्रस्त हो वापस आता है।

तेजेंद्र शर्मा की कोई भी कहानी पढ़ना आरंभ करें तो लगता है, यह कहानी इनकी सबसे बेहतरीन कहानी है। "देह की कीमत" पाठक को सोच के भँवर की गहराई में उतार देती है। पंजाब से हरदीप घर में पिता का बिज़नेस सँभालने के बजाय विदेश जाने का ख़्वाब देखने लगता है। आख़िर एक दिन वह ग़ैरक़ानूनी तरीक़े से जापान पहुँच जाता है। एक बार घर आता है, शादी करता है। नई नवेली पत्नी को छोड़ फिर वापस चला जाता है और एक एक्सीडेंट में मर जाता है। अब इल्लीगल तरीके से गए आदमी की शिनाख़्त कैसे हो? वहाँ एंबेसी में नवजोत उनकी मदद करता है लेकिन क्या-क्या सवाल व समस्याएँ खड़ी हो जाती हैं इसे पढ़ना दिलचस्प रहता है। इसका एक-एक वाक्य हृदय बींध देता है जैसे "जिंदा इंसान का किराया लाश से कम लगता है।" उसकी पत्नी ने तीन लाख का ड्राफ्ट उठाया उसे समझ नहीं आ रहा था कि यह उसके पति की देह की कीमत है या उसके साथ बिताये 5 महीने की कीमत।

कहानी "खिड़की" और "क़ब्र का मुनाफा" विपरीत विषयों पर होते हुए भी एक हद तक पाठकों के मस्तिष्क में सम-भाव ही पैदा करते हैं।

विपरीत इसलिए कि जहाँ "खिड़की" अकेलापन होने के कारण संभावनाओं की एक नई खिड़की खोलती है, नए रिश्ते बनाती है। नौकरी में होते हुए भी नायक के जीवन में अपना परिवार होते हुए भी अकेलापन है। इसलिए वह नए सामाजिक रिश्ते जोड़ता है। वहीं "क़ब्र का मुनाफ़ा" में नौकरी में ऊँचाई पर पहुँचने के बाद भरा-पूरा परिवार होने के बावजूद सब कुछ हासिल कर लेने के बाद भी एक ठहराव दोनों दोस्तों के जीवन व ज़ेहन में एक तरह की क्षुब्धता व अकेलापन लाता है। वह उन्हें अब कुछ अलग सोचने को विवश कर रहा है। वे कहीं और जाकर बिज़नेस करने की बात भी कर रहे हैं साथ ही लंदन में एक पॉश क़ब्रिस्तान में क़ब्र रिज़र्व करने की बात भी कर रहे हैं ताकि मृत्यु के बाद वे अपने जैसे उच्च स्तर वाले लोगों के साथ चैन की ज़िंदगी जी सकें लेकिन उन में से जब एक दोस्त की पत्नी को यह पता चलता है तो वह इस पर सख़्त ऐतराज़ करती है और क़ब्र बुक करने वाली संस्था को फ़ोन कर क़ब्र कैंसिल करती है। तब उसे पता चलता है कि क़ब्र के रिज़र्वेशन के दाम बहुत बढ़ गए हैं और क़ब्र

बेचने पर उन्हें बहुत फ़ायदा हो रहा है। दोनों दोस्तों की सोच एक नई दिशा में घूम जाती है उन्हें नया बिज़नैस मिल जाता है। बहुत ही अलग तरह की कहानी। लंदन के परिवेश पर बुनी ये दोनों कहानियाँ कई जानकारियाँ पाठकों के समक्ष परोस देती है।

कहानी "हथेलियों में कंपन" के बहाने लेखक ने मृत्युयोपरांत होने वाले कर्मकांडों व हरिद्वार में अस्थि-विसर्जन के माध्यम से वहाँ के पंडो का इतिहास भूगोल सब बाँच डाला। कहानी बहुत सी अबूझ बातों से पर्दा उठाती है।

"मलबे की मालकिन" एक ऐसी कहानी है जो बहुत से विमर्शों को एक साथ सामने लाती है। अल्पशिक्षित कन्याओं का छोटी सी उम्र में विवाह, पति का वहशियाना आचरण, ससुराल वालों का तानाशाह रवैया और फिर पति द्वारा छोड़ा जाना। दरअसल यह छोड़ा जाना लड़कियों की शिक्षा व कम उम्र में उनके विवाह से पूरी तरह से जुड़ा हुआ है। अंत बहुत ही आश्चर्यजनक है लेकिन एक युवा माँ के साथ ऐसा होना कोई आश्चर्यजनक बात भी नहीं है।

"मुझे मार डाल बेटा" में मृत्यु शैया पर पड़ा पिता अपने लिए रहम मृत्यु की दरकार करता है। रहम मृत्यु की दरकार बहुत से मरीज़ों को होती है, लेकिन यह इतना आसान नहीं होता है। बेटा इसके लिए हिम्मत नहीं जुटा पाता। अच्छे ख़ासे आदमी की ज़िंदगी किसी भीषण बीमारी के लपेटे में कब आ जाए कहा नहीं जा सकता है। उसी बेटे का कहानी के अंत में लाइलाज बीमारी से ग्रस्त अपने अजन्में बच्चों के लिए रहम मृत्यु का निर्णय चौंकाता है लेकिन स्वाभाविक लगता है।

कहानी "उड़ान" पाठकों को ख़्वाबों के काल्पनिक उड़ान पर शिद्दत से ले जाती है, लेकिन कहानी का शुरुआती वाक्य, क्या मैं दिल्ली वापस जाने के लिए यहाँ आई थी, नायिका के एयरहोस्टेस बनने की ख़ुशी की उड़ान के साथ उड़ते पाठक के हृदय पर शूल जैसा गड़ा रहता है और यह संशय तब समाप्त होता है जब पता चलता है कि एयरलाइंस ने कर्मचारियों की छँटनी की है। कई कर्मियों को नौकरी से बाहर कर दिया है। यूरोप ट्रिप पर जाने की तैयारी करती नायिका अपने घर परिवार के हालात सुधारने का ख़्वाब लिए वापस घर आने को मजबूर हो जाती है। ऐसा दृश्य आज प्राइवेट कंपनियों में आम हो गया है।

ऐसे ही ख़्वाब "ज़मीन भुरभुरी क्यों है" की नायिका कोकिलाबेन के भी टूटते हैं जब लंदन में उसका पति एक गबन के केस में फँसकर जेल चला जाता है। पति का नाम एक लड़की के साथ भी उछलता है। कोकिलाबेन को सब कुछ बर्दाश्त है पर पति की बेवफाई, काँटा बन कर दिल पर चुभ जाता है। पति पर निर्भर रहने वाली स्त्री पति की अनुपस्थिति में मज़बूत बनती है। ड्राइविंग सीखती है। बेटे के साथ बिज़नेस स्टार्ट करती है। पति से गबन व लड़की का झूठ-सच पूछना चाहती है लेकिन पूछ नहीं पाती। पति जेल से वापस आता है तो कोकिलाबेन देखती है कि पति शारीरिक श्रम के कारण अधिक जवान हो गया है और वह मानसिक तनाव के कारण बूढ़ी दिखाई देने लगी है, सोचती है कि आख़िर सजा वास्तव में किसे मिली?

"गंध" कहानी पाठक को कहीं गहरे भटका देती है। बेटी हो या बेटा जब अपनी ग़रीबी से उठ कर कुछ ख़ास मुकाम पा जाते हैं तो उन्हें अपने ग़रीब माता पिता, ग़रीब घर और ग़रीबी से गंध आने लगती है और अगर इस गंध में जातिगत गंध भी जुड़ जाए तो गंध काफी तीक्ष्ण हो जाती है। प्रस्तुत कहानी में ग़रीब घर की नीची जाति की कन्या को एक अमीर घर का ऊँची जाति का युवक प्यार करता है। घर-परिवार व समाज से लड़ कर वह उसे अपना बनाता है। जब एक लंबे वक़्त के बाद वह अपने परिवार को मिलने अपने घर जाती है तो जो गंध उसके घर-परिवार से जो पहले युवक के माता-पिता को आती थी, वही गंध अब लड़की को भी आने लगती है।

ऐसी ही एक विचारणीय व दिलो-दिमाग़ को झिंझोड़ने वाली कहानी है, "काला सागर"। लंदन के पास एक प्लेन क्रैश के बाद मृतकों के भारतीय रिश्तेदार जब डेड बॉडी को पहचानने व सामुहिक क्रियाक्रम करने के लिए वहाँ एक प्लेन से ले जाए जाते हैं तो उनकी प्रतिक्रियाएँ व आपसी संवाद हृदय को व्यथित करता है। उन में से बहुतों के आपसी संवाद जता देते हैं कि किस कदर आपदा पर अवसरवादिता हावी हो जाती है। दिल पर दिमाग़ व भावनाओं पर भौतिकवाद अपना आवरण डाल देता है। बहुत ही बेहतरीन व सच्ची कहानी।

मृत्यु के बाद का अद्‌भुत दृश्य चित्रण करती कहानी, "वंस ए सोल्जर" एक अलग सी कहानी है जो मृत्यु के बाद के घटनाक्रम चित्रित करती है। बिली मेहता और उसकी पत्नी प्रभजोत की कार एक्सीडेंट में मृत्यु हो जाती है। इस एक्सीडेंट को एक दिन पहले उसी जगह एक्सीडेंट में मृत्यु को प्राप्त हुआ उनका दोस्त व कलीग दीपक देख रहा है। वे तीनों मिलते हैं। बहुत कुछ देखना चाहते हैं लेकिन उन्हें मृत्यु के बाद के तरीक़े व उस दुनिया के तौर- तरीक़े पता नहीं है। कोई अभी तक उन्हें गाइड करने भी नहीं आया। वे तरह-तरह की अटकलें लगा कर अपना मकसद पूरा करते हैं। अंत में वापस लंदन अपना दाह-संस्कार देखने चले जाते हैं। क़ब्र उन्होंने पहले से बुक करी हुई है।

ट्रांसजेंडर विमर्श को केंद्र में रख कर लिखी "ख़्वाहिशों के पेबंद" एक ग़ज़ब की कहानी है। नायिका अपने ब्वॉयफ्रेंड से पूरी तरह से संतुष्ट होने के बावजूद उसकी विकसित छातियाँ देख पसोपेश में पड़ जाती है। उसके बाद लड़का उसे अपनी कहानी सुनाता है। उसकी कहानी के दौरान पाठक किन्नर-विमर्श के रहस्यों से परिचित होते हैं। यह रोचक अंदाज़ में लिखी एक गंभीर कहानी है जो प्रतिष्ठित पत्रिका "हंस" में प्रकाशित हुई थी।

कुल मिला कर "तेजेंद्र शर्मा- एक शिनाख़्त" अपना मकसद शिद्दत से पूरा करती है। पुस्तक तेजेंद्र शर्मा जैसे वैश्विक साहित्यकार के व्यक्तित्व व कृतित्व का पूरा लेखा-जोखा पाठक समक्ष प्रस्तुत करता है। 396 पेज की यह पुस्तक एक रुचिकर उपन्यास पढ़ने का सा आनंद देती है।

000

शोध-आलोचना

(कहानी संग्रह)

अधजले ठुड्डे

समीक्षक : दीपक गिरकर

लेखक : डॉ. हंसा दीप

प्रकाशक : वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली

दीपक गिरकर
28-सी, वैभव नगर, कनाडिया रोड,
इंदौर- 452016 मप्र
मोबाइल- 9425067036
ईमेल- deepakgirkar2016@gmail.com

"अधजले ठुड्डे" सुपरिचित प्रवासी कथाकार डॉ. हंसा दीप का नौवाँ कहानी संग्रह है। समकालीन प्रवासी कथाकारों में डॉ. हंसा दीप ने अपनी सशक्त और अलहदा पहचान बनाई है। हंसा दीप की लेखनी में एक अद्वितीय सामर्थ्य है, जो समाज की जटिलताओं और विसंगतियों को इतने सरल और प्रभावशाली तरीक़े से उजागर करती है। वे न केवल समाज के सतही पहलुओं को छेड़ती हैं, बल्कि उन गहरे और अदृश्य द्वंद्वों को भी सामने लाती हैं जो हमारे अंदर दबे होते हैं। लेखिका अपने आसपास के परिवेश से चरित्र खोजती हैं। वे आम जीवन से अपने पात्र उठाती हैं। कहानियों के प्रत्येक पात्र की अपनी चारित्रिक विशेषता है, अपना परिवेश है जिसे लेखिका ने सफलतापूर्वक निरूपित किया है। डॉ. हंसा दीप एक ऐसी कथाकार हैं जो भारतीय और वैश्विक जनमानस की पारिवारिक पारम्परिक स्थितियों, मानसिकता, पीढ़ीगत अंतराल के कई पक्षों को यथार्थ की कलम से उकेरती हैं और वे भावनाओं को गढ़ना जानती हैं। लेखिका के पास गहरी मनोवैज्ञानिक पकड़ है। इस कहानी संग्रह में छोटी-बड़ी 17 कहानियाँ हैं। हंसा जी अपनी कहानियों के पात्रों के अंतस के तार-तार खोलकर सामने लाती हैं। हंसा जी की कहानियों में यथार्थवादी जीवन का सटीक चित्रण है।

"अधजले ठुड्डे" कहानी में सिगरेट का ठुड्डा और उसके साथ जुड़ा ग़ुस्सा दोनों ही किसी बड़े आंतरिक संघर्ष की ओर इशारा करते हैं। एक तरह से, यह संघर्ष लीवी के भीतर की उथल-पुथल और निराशा को व्यक्त करता है। सिगरेट के ठुड्डे को कुचलते हुए, जैसे वह अपनी परेशानियों और ग़ुस्से को भी दबा रहा हो, लेकिन फिर भी वह शांत नहीं हो पा रहा है। 'पैरों तले दुनिया को रौंदने' का विचार भी मानसिक शांति की तलाश का प्रतीक हो सकता है, जहाँ व्यक्ति अपने भीतर के तूफ़ान को नियंत्रित करने की कोशिश करता है, लेकिन वह असल में इस प्रयास में ख़ुद को और भी उग्र करता है।

"एक बटे तीन" कहानी एक बहुत ही गहरे और भावनात्मक संघर्ष की ओर इशारा करती है, जिसमें परिवार, रिश्ते, और पहचान की जटिलताएँ हैं। कहानी के सूत्रधार का अनुभव, जब वह अपनी माँ की संपत्ति के बँटवारे से बाहर कर दिया जाता है, एक भावनात्मक तूफ़ान का रूप ले लेता है। यह न केवल संपत्ति के बँटवारे की बात है, बल्कि इसमें उस भावनात्मक जुड़ाव का संघर्ष भी है, जो एक बेटे और माँ के बीच था और उस रिश्ते का टूटना जो दूरियों के कारण कमज़ोर हो गया। कहानी के सूत्रधार ने विदेश जाकर जिस तरह अपनी जड़ों को उखाड़ लिया था, उसकी मानसिक स्थिति और तात्कालिक अनुभवों का परिपेक्ष्य स्पष्ट रूप से सामने आता है। उसकी पीड़ा, जो पहले संपत्ति से जुड़ी नहीं थी, अंततः रिश्तों के टूटने और माँ से दूर होने के कारण गहरी हो जाती है। यह बँटवारा न केवल संपत्ति का था, बल्कि परिवार के भीतर रिश्तों का था, और यह सूत्रधार को यह अहसास दिलाता है कि वह अपने परिवार का हिस्सा नहीं रह गया। कहानी की गहरी परतें उन भावनाओं को उजागर करती हैं, जिन्हें कहानी के सूत्रधार ने न केवल अपनी माँ के प्रति, बल्कि अपने भाइयों के प्रति भी महसूस किया। संपत्ति का बँटवारा एक प्रतीक बन जाता है, जो रिश्तों की उलझनों और पीड़ाओं का प्रतीक है। कहानी के सूत्रधार का माँ के प्रति वह विशेष प्रेम, जो उसे हमेशा 'लाड़ला' बना देता था, अंततः एक ख़ाली और अनसुलझे संबंध के रूप में सामने आता है। माँ का चित्र, उसके आशीर्वाद और उसका प्यार लेखक के लिए एक स्थायी सहारा बना हुआ है, जो सभी भौतिक चीज़ों और संपत्ति से परे है। बँटवारे के बाद भी, कहानी का सूत्रधार यह महसूस करता है कि माँ का आशीर्वाद और प्यार उसे किसी भी संपत्ति से ज़्यादा मिला था। इस प्रकार, इस कहानी में भौतिक संपत्ति से अधिक महत्त्वपूर्ण वह मानसिक और भावनात्मक सम्पत्ति है जो माँ ने उसे दी।

"अम्मी और मम्मी" कहानी दो देशों के बीच गहरी नफ़रत और संघर्ष के बावजूद दोस्ती के सुंदर उदाहरणों को दर्शाती है। तहरीम और तृपित, जो अलग-अलग सांस्कृतिक और धार्मिक पृष्ठभूमियों से आती हैं, एक दूसरे के साथ एक मज़बूत और शुद्ध दोस्ती बनाती हैं। वे न केवल अपनी भाषाओं और संस्कृतियों में समानताएँ पाती हैं, बल्कि उनकी दोस्ती एक ऐसी मिसाल

बन जाती है, जो यह दर्शाती है कि प्रेम और समझ से कोई भी दीवार या सीमा पार की जा सकती है। यह कहानी उस समय की नाज़ुकता को भी उजागर करती है, जब वैश्विक राजनीति और देश के भीतर के तनाव व्यक्ति की व्यक्तिगत मित्रता पर असर डालते हैं। दोनों लड़कियाँ, जिनके बीच दोस्ती की कोई भी सीमा नहीं है, अचानक से उन सीमाओं के साथ जूझती हैं जो उनके परिवार और समाज ने उनके लिए निर्धारित की हैं। इन प्रतिबंधों के बावजूद, उनका प्यार और समझ एक शक्तिशाली संदेश देता है कि व्यक्ति का वास्तविक कनेक्शन किसी देश या धर्म से नहीं, बल्कि मानवीय संवेदनाओं और मित्रता से होता है। कहानी का अंत एक ख़ौफ़नाक घटना से जुड़ा है, जब एक शूटिंग ने सबकी ज़िंदगी बदल दी। इस तनावपूर्ण वातावरण में, यह कहानी बताती है कि कैसे जीवन में अनिश्चितता और भय का सामना करते हुए भी मानवीय रिश्ते सबसे ज़्यादा महत्त्वपूर्ण होते हैं।

"घुसपैठ" कहानी रिश्तों की जटिलता और मानवीय अहंकार को बहुत गहरे रूप में व्यक्त करती है। यहाँ पर परिवार के भीतर उत्पन्न होने वाली छोटी-छोटी नोकझोंक और तनावों का विस्तार से चित्रण किया गया है। रुबिन, रेने और मार्शलीन के बीच का संघर्ष केवल व्यक्तिगत स्तर पर ही नहीं, बल्कि सामाजिक और मानसिक स्तर पर भी एक महत्त्वपूर्ण सवाल उठाता है - क्या रिश्तों में प्रेम और समझ का स्थान है या सिर्फ अहंकार और नियंत्रण की भावना है? कहानी में यह दिखाया गया है कि कैसे एक घर, जो कभी सुख-शांति का प्रतीक था, केवल अहंकार और अविश्वास के कारण टूटता है। हर व्यक्ति अपने दृष्टिकोण से सही लगता है, लेकिन जब हम एक-दूसरे की भावनाओं और ज़रूरतों को नहीं समझते, तो वही रिश्ते धीरे-धीरे तनाव और घुटन में बदल जाते हैं। रुबिन का अपना अपमान महसूस करना, उसकी मेहनत को न समझना और उसे एकतरफा तरीके से नियंत्रित करने का प्रयास, इस बात का संकेत है कि रिश्ते में संप्रेषण की कमी है। वहीं, रेने और मार्शलीन के लिए रुबिन का दृष्टिकोण और व्यवहार अजनबी और चुनौतीपूर्ण हो जाते हैं, क्योंकि वे अपनी आदतों और परंपराओं को नहीं बदल सकते। यह कहानी हमें यह सिखाती है कि जब हम सिर्फ अपने दृष्टिकोण को सही मानते हैं और दूसरों की भावनाओं या ज़रूरतों की अनदेखी करते हैं, तो रिश्ते खोखले हो जाते हैं। घर में शांति, समझ और सहयोग की आवश्यकता है, न कि नियंत्रण, आलोचना और अविश्वास की।

"भर दोपहर" कहानी केवल व्यक्तिगत भावनाओं की ही नहीं, बल्कि समाज की उन धारणाओं की भी प्रतिनिधित्व करती है जो परिवार और रिश्तों को लेकर अपेक्षाएँ रखती हैं। घर के भीतर जो तापमान बढ़ता है, वह सिर्फ शारीरिक गर्मी नहीं है, बल्कि भावनात्मक उथल-पुथल भी है। पति का बदनाम होना और पत्नी का अपनी प्रतिष्ठा को ख़तरे में महसूस करना, पारिवारिक रिश्तों की असलियत को उजागर करता है, जहाँ कभी पारदर्शिता थी, वहीं अब दीवारें खड़ी हो गईं हैं। यह कहानी बहुत सी बातों पर सवाल उठाती है, जैसे विश्वास, रिश्तों में समझ, व्यक्तिगत सम्मान और उन सीमाओं को लेकर जो हर रिश्ते के भीतर बुनियादी होती हैं।

"लाइलाज" कहानी एक बहुत ही दिलचस्प और सच्ची घटनाओं से भरी हुई है। यह दिखाती है कि कैसे भारतीय मानसिकता और मेडिकल सिस्टम को लेकर हमारी अपेक्षाएँ अक्सर विदेशों से अलग होती हैं, और इसके साथ ही यह भी स्पष्ट करती है कि किसी समस्या का समाधान हमेशा जो हम सोचते हैं, वह नहीं हो सकता। मिनी की बीमारी और उसके इलाज की कहानी में हम देख सकते हैं कि कैसे सही डॉक्टर का चुनाव और समय के साथ धैर्य रखना इलाज का अहम हिस्सा है। इसमें डॉ. खड़ूस के बारे में भी एक दिलचस्प पहलू है। पहले तो वे एक खड़ूस डॉक्टर के रूप में दिखते हैं, लेकिन अंत में उनकी सख्ती और पेशेवरता ने ही मिनी की बीमारी का समाधान किया और साथ ही उसकी माँ-पापा की मानसिक स्थिति को भी सुधारा। यह भी दिखाता है कि कभी-कभी हमारे लिए जिन चीज़ों को कठिन या अप्रिय समझा जाता है, वही असल में हमारी भलाई के लिए होती हैं।

मैटरनिटी लीव कहानी में विदेशी नागरिकों के जीवन व संस्कृअति की एक-एक बारीक बातों का सूक्ष्म चित्रण किया है। घूमने जाने की जल्दबाजी ने छह-सात महीने के लम्बे तनाव के बाद पाँच हजार डॉलर का फाइन, वकील की फ़ीस, हवाई आइलैंड यात्रा के कीमती टिकट और साथ ही मैटरनिटी लीव की सारी शान्ति को लील लिया था।

"बैटरी" कहानी में सोफी की स्थिति को चित्रित किया गया है, जहाँ उसकी ज़िंदगी में एक अचानक बदलाव आया है और वह एक नए दृष्टिकोण को महसूस करने लगी है। सोफी मुश्किलों से जूझ रही थी, तभी एक अदृश्य मदद से वह अपने जीवन में एक नई रोशनी और शक्ति महसूस करती है। "उसकी गाड़ी किसी देवदूत के विमान की तरह लग रही थी," इस वाक्य में यह महसूस कराया गया है कि वह मददगार व्यक्ति, जो सोफी की ज़िंदगी में अचानक आया, एक देवदूत की तरह प्रतीत होता है। इस व्यक्ति का अचानक आना और फिर वापस जाना, उसके जीवन में एक महत्त्वपूर्ण मोड़ को इंगित करता है। वह व्यक्ति कुछ क्षणों के लिए उसकी ज़िंदगी में आया और उसकी बुझती हुई आशाओं में एक नई ऊर्जा भर दी। वह एक "लड़की के जीवन की बुझती आग में ईंधन डालकर" चला गया, जैसे उसने सोफी की उम्मीदों और ज़िंदगी को फिर से जीवित किया हो। इसके बाद, बैटरी का रूपक बहुत ही प्रभावी तरीके से इस्तेमाल किया गया है। बैटरी यहाँ केवल तकनीकी नहीं, बल्कि जीवन की ऊर्जा और शक्ति का प्रतीक है। कार की बैटरी, फ़ोन की बैटरी, सोफी की अपनी बैटरी – ये सब जीवन की ऊर्जा को दर्शाते हैं। बैटरी का ख़त्म होना, एक व्यक्ति के मानसिक और शारीरिक थकावट की ओर इशारा करता है, जबकि ऊर्जा का भरा होना एक नई उम्मीद और ताकत का संकेत है। "ख़ास तौर से उस अनजान फरिश्ते की बैटरी, " यह लाइन सोफी के जीवन में उस व्यक्ति के योगदान को महसूस कराती है,

जिसने उसे एक नई शक्ति दी। उसकी मदद की वजह से सोफी के भीतर एक "सुखद ऊर्जामयी अहसास" पैदा हुआ, जो लंबे समय तक उसे ताक़त और शांति देता रहेगा। यह वाक्य जीवन के उन विशेष क्षणों को बयाँ करता है, जब कोई बिना किसी अपेक्षा के मदद करता है और वह व्यक्ति हमेशा के लिए किसी के दिल में एक अमिट छाप छोड़ जाता है।

"कॉफ़ी में क्रीम" कहानी दोस्ती, एक-दूसरे का समर्थन और समर्पण की एक बेहद सुंदर मिसाल है। इवा और बॉब के रिश्ते में जो गहराई है, वह उनकी अलग-अलग पृष्ठभूमि और जीवन के विभिन्न अनुभवों के बावजूद बन पाई है। उनकी दोस्ती में जो सहजता और विश्वास है, वह बहुत प्रेरणादायक है। कहानी में इवा की संवेदनशीलता और बॉब का शांत और सुदृढ़ व्यक्तित्व बहुत ख़ूबसूरती से दर्शाया गया है। उनकी दोस्ती का जो रूप विकसित हुआ, वह न केवल उनके व्यक्तिगत जीवन की एक महत्त्वपूर्ण कड़ी बनता है, बल्कि यह हमें यह भी सिखाता है कि कैसे दो अलग-अलग दुनिया के लोग एक-दूसरे के करीब आ सकते हैं, एक-दूसरे का समर्थन कर सकते हैं, और बिना किसी विशेष संबंध के भी एक-दूसरे के लिए मायने रख सकते हैं। इसके अलावा, इवा की माँ की मृत्यु के बाद बॉब का उसके पास आना और उसे समर्थन देना, यह वह क्षण था जब दोस्ती का वास्तविक रूप सामने आता है - बिना शब्दों के, सिर्फ एक दूसरे के साथ होने से जो राहत मिलती है, वह कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है। सचमुच, यह एक गहरी और भावनात्मक कहानी है, जो दोस्ती, समर्थन और संबंधों की जटिलता को बहुत ही संवेदनशील तरीके से दिखाती है।

अपनी माँ को कैंसर की बीमारी का पता चलने पर मुश्किल हालात से गुज़रती, तथाकथित उसूलों से सामना करती एक नवयुवती डॉक्टर स्वाति के संघर्ष की बेहद सच्ची, भावुक और मर्मस्पर्शी कहानी है "भिड़ंत"। कथाकार ने इस कहानी का गठन बहुत ही बेजोड़ ढंग से प्रस्तुत किया है। "भिड़ंत" कहानी की नायिका डॉ. स्वाति त्याग और संयम की मूर्ति है। वह अपने पारिवारिक दायित्वों को बख़ूबी निर्वहन करती है और सामाजिक परंपरा, नियमों की पाखंडी तस्वीर को तोड़ती है। अपनों के बीच सभी चुनौतियों का सामना करते हुए साहसी नारी के रूप में डॉ. स्वाति का चरित्र हमारे सामने प्रखर हो उठता है। इस कथा में डॉ. स्वाति का किरदार प्रभावशाली है। रिश्तेदारों की संवेदनहीनता और माँ-बेटी के संघर्ष पर लिखी गई सशक्त कहानी है जिसमें कथ्य का निर्वाह कुशलतापूर्वक किया गया है।

"स्ट्राइक" कहानी में प्राथमिक कक्षाओं के बच्चे अपने टीचर्स को स्ट्राइक करते देख अपने घरों में स्ट्राइक करना सीख गए।

"शून्य के भीतर" कहानी में कौमुदी अपने माता-पिता और भाई-बहनों की ज़िम्मेदारी अपने कधों पर उठाते हुए कब वह अधेड़ उम्र में पहुँच जाती है, उसे स्वयं पता नहीं चलता। पचास साल की होने के बाद वह अकेलेपन को दूर करने के लिए पालतू जानवरों को पालना शुरू कर देती है।

"काठ की हाँडी" कहानी जीवन और मृत्यु के बीच के संवेदनशील और गहरे क्षण को बेहद प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करती है। रोज़ा की स्थिति में आधे जागे और आधे सोये रहने का चित्रण इस बात का संकेत है कि वह जीवन के अंतिम पल में है, जहाँ मृत्यु उसके पास खड़ी है, लेकिन वह उससे डरती नहीं है। स्टीव का वहाँ होना, उसे उसका हाथ पकड़ने के लिए एक तरह से सुकून और आराम दे रहा है। रोज़ा की मुस्कान यह दिखाती है कि वह मृत्यु से भयभीत नहीं है, बल्कि वह इसे एक प्राकृतिक अंत के रूप में स्वीकार कर चुकी है। "जीवन का लेनदेन हो गया था" और "मौत ने आमंत्रण स्वीकार कर लिया था" जैसे वाक्य यह संकेत देते हैं कि रोज़ा ने अपने जीवन के हर पहलु को अनुभव किया है और अब वह मृत्यु को एक हलके, शांति भरे रूप में देख रही है। काठ की हाँडी चूल्हे पर चढ़ने का उदाहरण जीवन के उन क्षणों की प्रतीकात्मकता है, जब व्यक्ति का आंतरिक संघर्ष समाप्त हो जाता है और सब कुछ स्वाभाविक रूप से घटित होता है। यह जीवन और मृत्यु के बीच की अंतिम समझ का संकेत है।

"उल्कापिंड", "कूच", "दो पटरियों के बीच", "पुआल की आग" इत्यादि कहानियों में कथाकार डॉ. हंसा दीप जीवन की विसंगतियों और जीवन के कच्चे चिठ्ठों को उद्घाटित करने में सफल हुई हैं।

डॉ. हंसा दीप की कहानियों में काव्यात्मकता, शिल्प सौंदर्य और भाषा का विशेष उपयोग पाठकों को अपने साथ बाँध लेता है। इस तरह की कहानियाँ केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि विचार करने का एक मौक़ा भी प्रदान करती हैं। उनका लेखन न सिर्फ समाज को समझने की एक गहरी दृष्टि देता है, बल्कि यह हमें अपने भीतर के मानवीय भावनाओं और संवेदनाओं से भी जोड़ता है। भूमंडलीकरण और बाज़ारवाद के प्रभाव में भी हंसा दीप की कहानियाँ मानवीय दृष्टिकोण को बनाए रखती हैं, जो इस युग में एक बडी आवश्यकता है। उनके कथा-संसार में जो शिल्पीय और भाषाई विशेषताएँ हैं, वे उन्हें अन्य लेखकों से अलग पहचान देती हैं, और उनकी कहानियाँ और भी सजीव और प्रभावशाली हैं। ये कहानियाँ जीवन के विभिन्न मनोवैज्ञानिक पहलुओं से पाठकों को रू-ब-रू करवाती हैं। डॉ. हंसा दीप की छोटी-छोटी कहानियाँ अपने कथ्य, शिल्प और सहज-सरल भाषा से वैश्विक धरातल पर मानवीय संवेदनाओं की एकरूपता को उकेरने का प्रयास करती हैं तथा वे अपने इस प्रयास में सफल भी होती हैं। कहानियों से गुज़रते हुए स्वाभाविकता का गहरा बोध होता है। कहानियाँ पाठकों से बातें करती हैं। उनके पात्र जीवन के हर क्षेत्र से आए हैं। कथाकार कहीं भी अपने चरित्रों को अनावश्यक उलझाती नहीं है। घटनाओं का सहज आरोह कथानक को गति देता है। कथाकार कथानक के माध्यम से पात्रों के अतल मन की गहराइयों की थाह लेती हैं। कहानियों के पात्र मानवीय संवेदनाओं को पूरी सत्यता के साथ उजागर करते हैं।

000

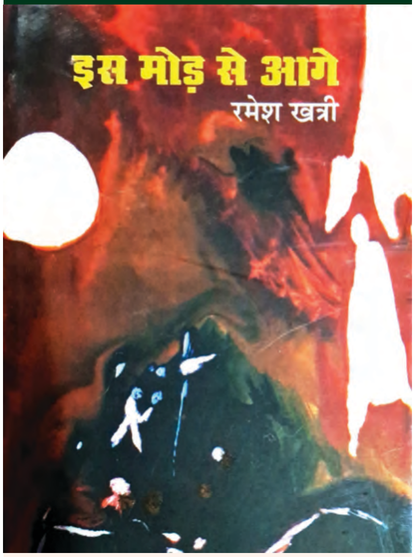

(उपन्यास)

इस मोड़ से आगे

समीक्षक : मोनिका मंथन

लेखक : रमेश खत्री

प्रकाशक : मंथन प्रकाशन, जयपुर

काव्य और नाटक की अपेक्षा नवीनतम होते हुए भी उपन्यास आज के साहित्य की सर्वाधिक लोकप्रिय और सशक्त विधा है। इसका कारण यह है कि इसमें मनोरंजन का तत्त्व तो अधिक रहता ही है, साथ ही साथ जीवन को इसकी बहमुखी छवि के साथ व्यक्त करने की शक्ति और अवकाश भी रहता है। वैसे तो ज्ञान की समस्त शखाएँ परस्पर एक दूसरे से आश्रित हैं। इनके अंतर्सबधों के आरंभ और अन्त का निर्धारण असंभव नहीं तो मुश्किल अवश्य है। जब ज्ञान की किन्ही आन्तरिक व बाह्य संबंधों की पड़ताल में गहरे उतरना पड़े तो कई प्रकार की जटिलताओं से आपका पाला पड़ता है। किन्तु साहित्य व्यक्ति के और समाज के आतंरिक जगत् को प्रकाशित करता है, इसमें उपन्यास गहरे तक प्रभावित करता है। क्योंकि ऐसा भी कहा जाता है कि रचनाएँ अपनी तरह का आतंक फैलाती हैं, आसपास घटने वाली स्थितियों को मुखौटे पहनाकर साधारण अनुभव को भी साधारण नहीं रहने देती हैं। हर यथार्थ में अतिरिक्त कुछ जोड़कर नई तरह से प्रस्तुत करने का प्रयास ही रचना को बेहतर बनाता है। हम यह जानते हैं कि साहित्य की कोई भी विधा हो उसका कालखंड से पूरा का पूरा समन्वय अति आवश्यक होता है। कथा का ताना-बाना बुनते हुए या उसे पढ़ते हुए अगर हम उस काल में पहुँच जाते हैं तभी उसका पूरा आस्वादन ले पाते हैं। अपने काल की अभिव्यक्ति सहज होती है किन्तु किसी अन्य समय की अनुभूत परिस्थितियों को अपने भावों द्वारा सामूहिक अनुभूति में बदलने की प्रक्रिया निस्संदेह क़ाबिल-ऐ-तारीफ़ है। अनदखे, अनछुए को दूसरों को दिखाने का प्रयास तो और भी कठिन होता है, किन्तु प्रस्तुत उपन्यास में रमेश खत्री ने पूरी निष्ठा से भूतकाल की छवियों को पकड़ कर, पूरी प्रतिबद्धता से पाठकों को उस समय की ऐतिहासिक पृष्टभूमि में सामाजिक चेतना की वस्तिविकता को सुन्दर शब्दों, भावों में पिरो कर इस तरह से साकार किया कि उस काल के सशक्त उपन्यास के रूप में हमारे सम्मुख यह उपन्यास आया है, "उन्होंने अख़बार अपने सामने फैला लिया, जिसमें एस.पी. की विज्ञप्ति समाचार के रूप में छपी थी, "अब सभी थाना अधिकारियों को शाम पाँच से छः बजे तक अपने अपने थानों में उपस्थित रहने के निर्देश दे दिये गए हैं।" इसका क्या मतलब है। वे सोचने लगे, "यानी अब शेष समय में कोई उनके बारे में पूछ भी नहीं सकता और जिसको काम हो वह पाँच से छः बजे के बीच में ही जाए।'..."इस देश का तो भगवान् ही मालिक है।" उनके मुँह से निकल गया। अख़बार को उन्होंने एक तरफ रख

मोनिका मन्थन
53/17, प्रतापनगर, सांगानेर,
जयपुर-302033, राजस्थान
ईमेल- manthan.monika@gmail.com

दिया।" उपन्यास को पढ़कर उस समय की सभी समस्याओं से सीधे तौर पर रू-ब-रू हुआ जा सकता है। स्वाधीनता संग्राम के समय सीमा को बाँधने का प्रयास नया नहीं है किन्तु इस उपन्यास में सभी किरदार अपनी विचारधारा, सोच, निजी जीवन और उसकी आर्थिक सामाजिक परिस्थिति, अपने बुद्धि बल और कौशल के अनुसार उसमें अपना योगदान देने की कोशिश अलग-अलग तरह से करते हुए नज़र आते हैं। उनकी सोच, उनका डर और उन सबके बीच उनके जीवन की दूसरी समस्याएँ समानांतर चलती रहती हैं जिससे मानवीय दृष्टिकोण को आसानी से उस समय के परिप्रेक्ष्य में अनुभूत किया जा सकता है, "दिल्ली से चलकर बँटवारे की हवा गाँवों तक रिसने लगी और आपस का भाईचारा बिला गया, उसकी जगह पर हैवानियत अपना स्थान बनाने लगी। चन्द लोगों के फितूर ने पूरे देश की आबो हवा को घुन की तरह चाटकर उसे पूरी तरह से दूषित कर दिया।"

कथा का आरम्भ अपनी ज़िंदगी के आख़िरी पड़ाव में पहुँच चुके रामप्रकाश की सोच से होता है वे बार-बार अपने पुराने दिनों को याद कर रहे हैं और उन्ही यादों को पकड़कर आल्हादित हो रहे हैं, "पूरे जीवन तो हम इस तरह दौड़ते रहे मानों हम आदमी न होकर रेस के घोड़े हों, एक दूसरे से आगे निकल जाने की होड़ में पूरा जीवन भागते हुए बिता दिया।" काश लोग यह बात पहले समझ सकें ताकि वे अपने जीवन को जी सकें। यही लेखक का उद्देश्य है जो आज के युवाओं के लिए बहुत सार्थक है। अपने बचपन को याद करते हुए वे अपने पुराने समय में पहुँच जाते हैं। स्वतन्त्रता आन्दोलन चरम सीमा पर था। आए दिन होने वाले दंगे, नारेबाज़ी, पुलिस से डंडे, अंग्रेजों की नाइंसाफी के बीच क़स्बे के एक बच्चे को सरकारी नौकरी मिलना उसके घर वाले को आल्हादित तो करता ही है किन्तु बच्चे का अपने परिवेश को छोड़कर दूर जाना घर के लोगों को किस तरह के असमंजस में डाल देता है यह बहुत ही जीवंत तरीक़े से दिखाया गया है, "एक ओर बेटे की नौकरी की ख़ुशी है तो वहीं दूसरी ओर एक डर उन्हें अन्दर ही अन्दर घेरे है। घर से बाहर निकलकर बेटा पराया हो जाएगा।" तो वहीं दूसरी ओर "इस समय ऐसे हालात नहीं है कि घर से बाहर निकला जाए। जिस तरह की गतिविधियाँ इन दिनों चल रही है उससे आतंक का वातावरण पूरे माहौल में समा गया है। ऐसे में बेटे का घर से इतनी लम्बी यात्रा के लिए निकलना और वह भी एक अनजान शहर के लिए।" पिता के अन्तर्द्वंद्व को गहरा करता है।

राजनैतिक सामाजिक स्थिति कोई भी हो, व्यक्ति का अपना समय, उसके कार्य कलाप, उसकी सोच, ऊपर उड़ने की आकांक्षा ज्यों की त्यों रहती है। अलग-अलग लोग एक ही समस्या को विभिन्न तरीक़े से लेते हैं। ऐसे माहौल में रामप्रकाश डरते-डराते अपनी नई नौकरी के लिए घर से दूर जाता है, मन में उड़ने की आशा के साथ साथ छूटते घर परिवार का मोह किस तरह व्यक्ति को जकड़े रहता है इसे बहुत सुंदर भाव के साथ सुंदर शब्दों में पिरोकर बड़ी ही कुशलता के साथ लेखक ने दर्शाया है। अकेला घर से दूर पहली बार जाने पर व्यक्ति तरह तरह के अंदेशों से भरा रहता है, इस समय दूसरे प्राणी का थोड़ा भी अपनापन उसे उस व्यक्ति से गहरे जोड़ देता है। समीक्ष्य उपन्यास का नायक राम प्रकाश भी अपने से बड़े अधिकारी जिसने अभिवावक बनकर उसके रहने आदि की सारी व्यवस्था की, उसे पिता तुल्य मानने लगता है और उसकी किशोर बेटी के प्रेम में पड़कर दुनिया की रंगीनियों की ओर बढ़ने लगता है जो आज उसकी पत्नी है। कुछ समय बाद साम्प्रदायिकता की आग में उनके घर का उजड़ जाना उन्हें आहत कर देता है, जिसका दर्द उसके हृदय में अंत समय तक ज्यों का त्यों बना रहता है। उस भयावहता का वर्णन लेखक ने इस तरह से किया है मानो हम उस दृश्य को साक्षात देख रहे हों, "कमला... कमला... तुम कहाँ हो कमला... बच्चियों... तुम कहाँ हो...? बेटा यह सब क्या हो गया... हे राम... अब मैं क्या करूँ...?" पिता की आवाज़ भर्रा गई। वो बेतहाशा चीखने लगे, "बेटा, रामू देख तो ये सब क्या हो गया रे... बेटा... तू देख तो सब जलता जा रहा है... तेरी माँ और बहनों का क्या हुआ होगा ? कहाँ होगी और किस हाल में... देख तो बेटा यह सब क्या हो गया रे...?" उनका गला रुँध गया और आँखें पथरा गई। वे वहीं पर ज़मीन पर ढह गए। ... राम प्रकाश भल्ला चाची के घर दौड़कर गया। भल्ला चाची का घर थोड़ी ही दूरी पर है। उनका घर आग की लपटों से अभी तक बचा हुआ था। यह सोचकर कि माँ और बहनें उनके घर पर ही हों शायद। बस यही एक आशा उसके मन में बची हुई थी। वह हाँफता हुआ सीधा घर के अंदर घुस गया। वहाँ का नज़ारा देखकर उसकी आँखें फटी की फटी रह गईं। पूरा मकान बुरी तरह से अस्त-व्यस्त पड़ा था मानों सारा उथल पुथल हो गया हो, जगह-जगह पर फटे कपड़े बिखरे पड़े थे। फर्श पर जगह-जगह ख़ून बह रहा था। दीवारों पर ख़ून के ताज़ा छींटे सने थे। यह देखकर वह पथरा गया, उसको कुछ होश नहीं रहा। सामने का नज़ारा उसको एक दूसरी ही दुनिया में ठेलता ले गया। मानों यहाँ पर किसी ने बड़ी ही बेरहमी से लूटपाट की और लोगों का क़त्ल किया हो। ये कैसा समय है आदमी ही आदमी का दुश्मन हो गया है। ये कौनसी रेखा खींची है जो आदमी के मन में उतरती चली गई। एक दूसरे का ख़ून बहाने में आज उसको ज़रा भी संकोच नहीं। कितना आततायी हो गया है आज आदमी। वह फटी आँखों से यही सब सोचता रहा, "तो क्या बलवाईयों ने यहाँ पर भी काफी कोहराम मचाया है ? यहाँ पर भी न जाने कितने लोगों को मौत के घाट उतारा गया होगा, यह घर भी मानो बूचड़खाना बन गया।" स्वतन्त्रता के तुरंत बाद देश का विभाजन और उस विखंडन से उपजी साम्प्रदायिक समस्या, नृसंशता, लूट, बर्बरता, हिंसा, अपहरण, बलात्कार, जघन्य हत्या, भयावहता की हदों को पार करती है और उसमे उलझे लोगों की छवियों को हमारे समक्ष उसी यथार्थ रूप में रखने में लेखक ने महारथ हसिल की है।

राजनैतिक विडम्बनाओं की वास्तविकता को बड़े ही सहज ढंग से, विश्वसनीय और रोचक तरीक़े से समीक्ष्य उपन्यास में प्रस्तुत

किया गया है। रंजीत स्कूल में जमा करने के लिए दी गई फीस से कांग्रेस की सदस्यता ग्रहण करता है। अपना पूरा जीवन देश की भलाई में लगा देता है किन्तु स्वतंत्र भारत में उसके पास अपनी बीमारी के इलाज के पैसे नहीं है, क्योंकि वह अपने देश के प्रति फ़र्ज समझ कर किये गए कार्यों को भुनाना नहीं चाहता है, दूसरी ओर उसका छोटा भाई राजन बिना कुछ किये ही मंत्री बना हुआ सारी सुख सुविधाओं से लैस राजनीति के दाव पेंच में संलग्न होकर जीवन के सारे भौतिक सुखों का उपभोग कर रहा है। उनकी अपनी बहन शांति राजन से कहती है, "रहने दे रहने दे। अब घर के अंदर भी राजनीति करने लगा...अच्छी तरह से जानती हूँ तुम्हें बचपन से।" रामप्रकाश सब कुछ देखते हैं, समझते हैं किन्तु निराश नहीं होते हैं, वे रंजित को कहते हैं, "देखा जाए तो तुम्हारे कर्म को तो कोई और ही भुना ले गया।" यानि कर्म किसने किया यह सब जानते हैं पर गंदी राजनीति में काम करना महत्त्वपूर्ण नहीं है वरना सच झूठ का प्रपंच ज़्यादा अहमियत रखता है। और यह कभी नहीं बदला, उस समय स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए प्रयास के समय जो आरम्भ हुआ सो अब तक चला आ रहा है, हाँ उसका रूप अवश्य बदल गया है। नायक के स्वर की व्यथा पाठक को आहत करती है, "ऐसा लगता है कि इतने सालों से हम लोग चलने का केवल स्वाँग करते रहे जबकि वास्तव में एक ही जगह पर बैठे हुए हैं किसी अजगर की तरह, अपने हाथ पाँव को अपने अंदर समेटे हुए।"

सामाजिक स्तर पर बदलाव को बड़े ही ख़ूबसूरत तरीक़े से कथा क्रम को धीरे-धीरे आगे बढ़ाते हुए दिखाया गया है जिससे कथा में प्रवाह बना रहता है। रामप्रकाश की तीनों बेटियों के माध्यम से लेखक ने माता-पिता और बच्चों के आपसी संबंधों को, उसके बिखराव को, उसकी सहजता में जटिलता के विरोधाभास को बहुत स्वाभाविक तरीक़े से पाठकों के सम्मुख रखा है। पारिवारिक माहौल में उन्होंने संबंधों की सघनता को बख़ूबी दिखाने का प्रयास किया है। घर के सभी सदस्यों की सोच भिन्न-भिन्न होते हुए भी किस तरह उनकी माला बिखरने के कगार पर नहीं पहुँचती है, एक दूसरे को पूरी तरह ग़लत समझते हुए भी उनकी एकता कहीं भी खंडित नहीं होती है। कई वर्षों तक एक दूसरे से न मिलने पर भी हम अपनों को ख़ूब अच्छी तरह समझते हैं। दूसरी और यह भी दिखाया गया है कि बच्चे के चरित्र का विकास उसकी परवरिश पर पूरी तरह निर्भर करता है, उसके अच्छे या बुरे व्यवहार के लिए अक्सर माता पिता ही ज़िम्मेदार होते हैं। रामप्रकाश की बड़ी बेटी तरुणा का ज़िद्दीपन माता-पिता की ही देन है, वह अपने पसंद के लड़के के साथ भागकर शादी कर लेती है और कुछ ही दिनों में रिश्ता तोड़ भी लेती है पर माता पिता को अपनी ख़ुशी या ग़म किसी में भी शामिल नहीं करती है। मँझली करुणा का बार-बार पति से झगड़ा कर मायके आना माता-पिता को व्यथित करता है पर वह किसी की एक भी बात नहीं सुनती है। बच्चे का मोह भी उनके रिश्ते में सामंजस्य स्थापित करने में नाकाम होता है। पिता ख़ुद स्वीकार करते हैं, "अत्यधिक लाड़-प्यार ने इनके जीवन में विष घोल दिया।" यह आज के सन्दर्भ में बहुत ही ज्वलंत समस्या है। घर में एक या दो बच्चे के होने के कारण माता-पिता उनसे अत्यधिक लाड़ करते हैं, जिससे बच्चे आने वाले समय में किसी से कोई भी समझौते के लिए तैयार नहीं होते हैं। एक तरह से स्वार्थी हो जाते हैं वे और आगे चलकर उनके लिए नए रिश्तों की डोर को पकड़ कर चलना मुश्किल हो जाता है और तब संबंधों में बिख़राब आरम्भ हो जाता है। राम प्रकाश अपनी बिटिया से कहते हैं, "तुम दोनों ही स्वार्थी हो।" किन्तु कहने से समस्या समाप्त नहीं होती वह तो वहीं की वहीं ज्यों की त्यों बनी रहती है, "उनके सामने करुणा किसी अनुतरित प्रश्न की तरह आकर खड़ी हो गई।"

समीक्ष्य उपन्यास में आज के आधुनिक समय की अनेक समस्याओं को उठाया गया है। सामाजिक पारिवारिक, राजनैतिक, साम्प्रदायिक लेकिन समाधान की और हल्का सा इशारा भी नहीं है। इसे यथार्थवादी कहा जा सकता है, जो जैसा है वैसा का वैसा खोल कर पाठकों के सम्मुख रख दिया गया है। अनेक समस्याओं से घिरे होने पर भी इस उपन्यास का कोई भी पात्र कभी भी किसी भी मोड़ पर निराश नहीं होता है। नायक का यह कथन जैसे आशा की नींव है, "कितनी बार हमने इस तरह के भीषण झंझावात झेले हैं। शुक्र है कि हमारी संस्कृति की जड़ें काफी गहरी हैं।"

अब पाठकों पर निर्भर है कि इस सबसे वे क्या और कैसे ग्रहण करते हैं ?

उपन्यास की भाषा बहुत ही सशक्त और प्रवाहमय है। सुंदर उपमाओं का प्रयोग भाषा को रोचक बनाता है, "हीरे से चमकते तारे किसी जौहरी की सम्पति जान पड़ते थे, चाँद भी अपनी सम्पत्ति को यूँ बिखरा हुआ देख कर मंद-मंद मुस्करा रहा था।" चरित्रों की स्थानीय बोली के द्वारा पात्रों की विश्वशनीयता पाठको को पूरी तरह अपने बंधन में बाँध कर रखती है। वह कहीं भी भटकाव का अनुभव नहीं करता है। उपन्यास पठनीय है, यह पाठकों की विचारधारा पर गहरी छाप छोड़ता है और उन्हें बहुत कुछ सोचने के लिए विवश करता हैं। इस तरह से यही कहा जा सकता है कि साहित्य साधना का जो उद्देश्य है वह इस पुस्तक में पूरी तरह परिलक्षित होता है।

000

लेखकों से अनुरोध

सभी सम्माननीय लेखकों से संपादक मंडल का विनम्र अनुरोध है कि पत्रिका में प्रकाशन हेतु केवल अपनी मौलिक एवं अप्रकाशित रचनाएँ ही भेजें। वह रचनाएँ जो सोशल मीडिया के किसी मंच जैसे फ़ेसबुक, व्हाट्सएप आदि पर प्रकाशित हो चुकी हैं, उन्हें पत्रिका में प्रकाशन हेतु नहीं भेजें। इस प्रकार की रचनाओं को हम प्रकाशित नहीं करेंगे। साथ ही यह भी देखा गया है कि कुछ रचनाकार अपनी पूर्व में अन्य किसी पत्रिका में प्रकाशित रचनाएँ भी विभोम-स्वर में प्रकाशन के लिए भेज रहे हैं, इस प्रकार की रचनाएँ न भेजें। अपनी मौलिक तथा अप्रकाशित रचनाएँ ही पत्रिका में प्रकाशन के लिए भेजें। आपका सहयोग हमें पत्रिका को और बेहतर बनाने में मदद करेगा, धन्यवाद।

-सादर संपादक मंडल

केंद्र में पुस्तक

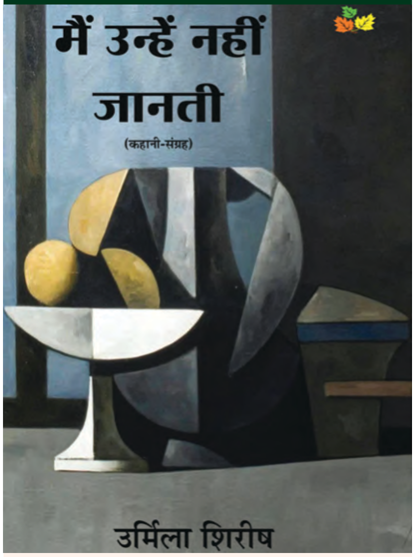

(कहानी संग्रह)

मैं उन्हें नहीं जानती

समीक्षक : डॉ. शरद सिंह, दीपक गिरकर, शैली बक्षी खड़कोतकर

लेखक : उर्मिला शिरीष

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545

मोबाइल- +91-9806162184

ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

डॉ. (सुश्री) शरद सिंह
एम-111, शांतिविहार, रजाखेड़ी,
मकरोनिया, सागर (म.प्र.) 470004,
मोबाइल- 7987723900
ईमेल- drsharadsingh@gmail.com

दीपक गिरकर
28-सी, वैभव नगर, कनाडिया रोड,
इंदौर- 452016 मप्र
मोबाइल- 9425067036
ईमेल- deepakgirkar2016@gmail.com

शैली बक्षी खड़कोतकर
ई-8, 157, भरत नगर,
भोपाल - 462039 मप्र
मोबाइल- 9406929314
ईमेल- shailykhadkotkar@gmail.com

मानवीय संबंधों के बूझे-अबूझेपन को रेखांकित करती कहानियाँ

डॉ. (सुश्री) शरद सिंह

हिन्दी कथा साहित्य जगत् में उर्मिला शिरीष एक स्थापित नाम है। अब तक उनके दो दर्जन से अधिक कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। उनकी कहानियाँ मन को उद्वेलित करने में सक्षम होती हैं। उनकी कहानियों का धरातल सामाजिक होते हुए भी मनोवैज्ञानिक होता है। वे हर कारण की तह तक उतरती हैं और फिर उसे अपनी कहानी का विषयवस्तु बनाती हैं, यही ख़ूबी है उनके कथा लेखन की। उनकी भाषा और शिल्प की चर्चा बाद में। पहले बात समीक्ष्य कहानी संग्रह "मैं उन्हें नहीं जानती" की। शिवना प्रकाशन, सिहोर से प्रकाशित इस संग्रह में उनकी चौदह कहानियाँ हैं।

उर्मिला शिरीष के जीवनानुभव की सीमा वृहद है जोकि उनकी कहानियों से गुज़रने के बाद दावे से कहा जा सकता है। वे मानवीय संबंधों की बारीकियों को बड़ी कोमलता से उठाती हैं और पूरे विश्वास के साथ उन्हें विस्तार देती हुई उस क्लाईमेक्स की ओर ले जाती हैं, जहाँ पहुँच कर पढ़ने वाले को यही लगता है कि इस कहानी का अंत इससे इतर और कुछ हो ही नहीं सकता था। "मैं उन्हें नहीं जानती" की कहानियों में विषय की विविधता है जिनमें विदेशी भूमि पर उपजी परिस्थियों की एक मार्मिक कहानी भी है जिसका नाम है "स्पेस"। यह संग्रह की पहली कहानी नहीं है, फिर भी मैं इसी कहानी से समीक्षा की शुरूआत करना चाहूँगी। बहुत पहले भारतीय मूल की अमेरिकी लेखिका झुम्पा लहरी का कहानी संग्रह "अनकस्टम्ड अर्थ" पढ़ा था। झुम्पा लहरी ने अमेरिका में बसे भारतीय परिवारों विशेष रूप से बंगाली परिवार के बारे में कहानियाँ लिखी थीं। अरसे बाद उर्मिला शिरीष की कहानी "स्पेस" पढ़ कर लगा कि जो पक्ष झुम्पा लहरी से छूट गया था, उसे उर्मिला शिरीष ने बड़ी गहनता एवं मार्मिकता से सामने रखा। अमेरिका में बसे बेटे बहू की घोर उपेक्षित एवं प्रताड़ित माँ की करुणामय कथा। जिस बेटे को अमेरिका में सेटल होने के लिए माँ ने अपना सब कुछ दाँव पर लगा दिया, वही बेटा माँ को अपनी पत्नी के अत्याचारों से नहीं बचा पा रहा था। साथ ही वह स्वयं भी मात्र इसलिए अपनी पत्नी के अमानवीय व्यवहार को सहन कर रहा था कि बेसहारा माँ को वह अपने से अलग नहीं कर पा रहा था। अमेरिका पारिवारिक संबंधों को ले कर कठोर है। एक फ़ोन कॉल पर पुलिस तुरंत हाज़िर हो कर दोषी को पकड़ कर जेल में डाल देती है, भारी जुर्माना करती है। एक बच्चा भी अपने माता-पिता की मार के विरुद्ध पुलिस बुला सकता है। एक भारतीय माँ अपनी बहू के विरुद्ध किसी से शिकायत करने का साहस भी नहीं जुटा पाती है। कारण कि माता-पुत्र अपनी बहू की भाँति निर्लज्ज नहीं थे। वे ख़ामोशी से सब कुछ सह रहे थे। वह तो उनकी एक पड़ोसन से यह सब सहन नहीं हुआ। जबकि पड़ोसन की तो बहू भी विदेशी थी किन्तु भारतीय परम्पराओं एवं संस्कारों का आदर करने वाली। अतः पड़ोसन और उसकी बहू उस माँ को उसकी बहू के अत्याचार से बचाने का बीड़ा उठाती हैं। जिस विस्तार से प्रताड़ना के विविध रूपों का वर्णन है उसे पढ़ कर कोई भी यही चाहेगा कि उस निरीह महिला की मदद की जानी चाहिए। इस कथानक के मूल में एक बहुत बड़ी पीड़ा इस बात की भी छिपी है कि बच्चों को विदेश भेजने और वहाँ उनके बसने पर ख़ुश होने वाले माता-पिता अपने-आप में कितने अकेले पड़ जाते हैं। फिर चाहे वे भारत में रहें या बच्चों के साथ विदेश में। बेशक सब के साथ यह नहीं होता है किन्तु ऐसा भी होता है, इससे इनकार नहीं किया जा सकता है।

संग्रह में एक बहुत चुलबुली कहानी है "दुपट्टा"। यह कहानी शुरू होती है एक नॉटी किस्म की घटना से और समाप्त होती है गहरे विमर्श पर। मॉर्निंग वॉक पर जाने वाले एक दंपति का

क़िस्सा है। पति एक पराई स्त्री को यह देख कर प्रभावित होता है कि वह चाहे भारतीय परिधान पहने या पाश्चात्य, पर एक दुपट्टा अवश्य ओढ़ती है। उसे देख कर वह अपनी पत्नी से भी दुपट्टा ओढ़े जाने की अपेक्षा करता है। बात बहस तक भी जा पहुँचती है। पत्नी सोचती है कि क्या दुपट्टा ओढ़ना या न ओढ़ना ही सब कुछ है? स्त्री की अपनी इच्छा कोई मायने नहीं रखती? एक वैचारिक द्वंद्व के बाद कहानी दिलचस्प मोड़ पर समाप्त होती है।

जब हम सोचते हैं कि हम अपने परिजन, परिचित, मित्र या संबंधी को पूरी तरह से जानते हैं, तभी कुछ ऐसा घटित होता है कि लगता है कि हम तो वस्तुत: उन्हें जानते ही नहीं थे। इसी धरातल की दो कहानियाँ हैं संग्रह में। रोचक बात ये है कि इसमें एक कहानी संग्रह की प्रथम कहानी है और दूसरी संग्रह की अंतिम कहानी। अंतिम कहानी की चर्चा पहले करना समीचीन होगा क्योंकि इसी कहानी के शीर्षक पर संग्रह का नाम है "मैं उन्हें नहीं जानती"। परिवार में प्राय: सबसे बड़ी बहन पर अपने छोटे भाई-बहनों को सँभालने का दायित्व होता है। भाई-बहनों को सँभालते-सँभालते वह कब अपनी माँ में ढल जाती है, उसे स्वयं पता नहीं चलता। इसके विपरीत उसके भाई-बहन उसके बारे में कितना जानते हैं अथवा उसके दुख-सुख की कितनी परवाह करते हैं, यह दावे से नहीं कहा जा सकता है। सच तो ये है कि पूरा परिवार उससे अपनी समस्याएँ कहता-सुनता है किन्तु उसकी समस्याएँ उससे कभी पूछता नहीं है। सभी यही मान कर चलते हैं कि वह तो बड़ी है, उसका घर पहले बस गया है, वह पूरी तरह सुखी है। ठीक यही स्थिति है इस कहानी की प्रमुख पात्र जिया की। जिस बहन को जिया ने उँगली पकड़ कर चलना सिखाया, उसे भी वर्षों बाद इस बात का अहसास होता है कि वह जिया को बिलकुल नहीं जानती है।

इसी अजानेपन की दूसरी और संग्रह की पहली कहानी है "देखेगा सारा गाँव बंधु"। एक बेटी अपनी माँ को कितना जानती है? या एक बेटा अपने पिता को कितना जानता है? यह एक जटिल प्रश्न है। क्योंकि संतान अपने माता-पिता को उसके एक पक्षीय रूप में अर्थात् माता-पिता के रूप में ही जानते हैं। वे यह कभी समझ नहीं पाते हैं कि एक व्यक्ति के रूप में माता और पिता का भी अपना एक निजी संसार होता है, निजी अनुभव होते हैं या यूँ कहा जाए कि उनका अपना एक गोपन संसार होता है। एक पुत्र अपने पिता के बारे में बहुत कुछ जानते हुए भी, मानों कुछ भी नहीं जान पाता है। चारित्रिक विशेषताओं एवं विभिन्न मनोदशाओं की गलियों को पार करती यह कहानी एक नास्टैल्जिक दुनिया में पहुचा देती है। संग्रह की बेहतरीन कहानी है यह।

कहानी "चल खुसरो घर आपने" को भी इसी क्रम में रखा जा सकता है। एक माँ, एक बेटी दोनों ही भरे पूरे परिवार के होते हुए भी अपने-अपने मोर्चे पर अकेलेपन से जूझने को विवश हैं। आयु के उस पड़ाव में जब सबसे अधिक सहारे की ज़रूरत होती है, उनकी आंतरिक पीड़ा समझने वाला कोई नहीं है। उस अवस्था में क्या मोक्ष का द्वार ही उनके अपने घर का द्वार है, जहाँ लौट कर उन्हें सुकून मिल सकता है? कहानी का मर्म विचिलित करता है।

"कहा-अनकहा" कहानी परिस्थितियों, अंतर्द्वंद्व एवं एक अदद सहारे की दबी हुई ललक के ताने-बाने से बुनी हुई है। एक अकेली महिला जिसकी बेटी-दामाद दूसरे शहर में हैं एक ऐसे व्यक्ति से अनायास टकराती है जो उसका मददगार बन कर सामने आता है। लेकिन आज कर समय आँख मूँद कर विश्वास कर लेने का भी समय नहीं है। वह महिला अस्पताल जाती है। कष्ट में है। अस्पताल में भीड़ है। परेशानियाँ हैं। तभी एक व्यक्ति उसकी मदद को तत्पर हो उठता है, नि:स्वार्थ। अस्पताल में एक अनजान व्यक्ति मदद करे और वह भी नि:स्वार्थ तो शंका जागना स्वाभाविक है। हर कदम पर मदद को बढ़ा हुआ हाथ और उस हाथ को थामते हुए भारी उधेड़बुन। यह संबंध किस मोड़ तक जा सकेगा यह उस महिला के निर्णय पर निर्भर है। घटनाक्रम की स्वाभाविकता ऐसी है गोया सब कुछ अपनी आँखों के सामने घटित हो रहा हो। सभी चरित्रों को उनकी पूर्णता के साथ प्रस्तुत करना उर्मिला शिरीष की लेखकीय विशिष्टता है जो कथानक को जीवंत बना देती है।

"नियति" एक नाटकीय घटनाक्रम के साथ क्लाईमेक्स पर पहुँचने वाली कहानी है जो कुछ पाठकों को असंभावित लग सकती है किन्तु जीवन विविधताओं से भरा हुआ है। यहाँ कुछ भी असंभव नहीं है। यह कहानी एक ऐसा हल भी देती है जिससे किसी स्त्री का जीवन संवर सकता है। एक विधवा स्त्री जिसकी युवा होती बेटी है। उस बेटी की पढ़ाई-लिखाई, लालन-पालन, सुरक्षा आदि की ज़िम्मेदारी उठाना असान नहीं है, वह भी अपनी सास एवं ससुरालियों के ताने एवं प्रताड़ना सहते हुए। उस पर अनुबंध का समय समाप्त होने पर उसकी नौकरी भी चली जाती है। तब उसकी एक मैडम उसका साथ देती है। उसके लिए एक विधुर भी तलाशती है। तब प्रश्न आता है बेटी का। इस प्रश्न का समाधान अस्वाभाविक लग सकता है किन्तु असंभव नहीं। आख़िर कहानी का नाम भी "नियति" है और नियति में कुछ भी असंभव नहीं होता।

"सप्तधारा" कहानी में जिस मुद्दे को उठाया गया है वह लगभग हर दूसरे घर का मुद्दा है। बेटियाँ तो पराई होती हैं का पुरातन फार्मूला, विवाह के बाद बेटियों के उन अधिकारों को भी छीन लेता है जो उन्हें मानवता के नाते मिलना चाहिए। मान लीजिए कि वृद्धावस्था में बाल-बच्चे दुत्कार दें तो एक अकेली वृद्धा कहाँ अपना सिर छुपाएगी? कहाँ शरण पाएगी? क्या वृद्धाश्रम में? एक छोटी-सी मानवीय सोच और पहल वृद्धाश्रम के सरवाजे बंद कर के स्वामित्व और गरिमा भरे जीवन के दरवाजे खोल सकती हैं बशर्ते बचपन से राखी बँधवा कर बहन की ताज़िन्दगी रक्षा करने का वचन देने वाला भाई रास्ता ढूँढ़ निकाले। यह एक सार्थक कहानी है जो एक सार्थक सोच को प्रस्तावित करती है।

"मैं उन्हें नहीं जानती" कहानी संग्रह उर्मिला शिरीष के चिरपरिचित अंदाज़ की कहानियाँ जिनमें वे संवेदनाओं को किसी तार-वाद्य के तार की भाँति झंकृत करती हैं और फिर उसकी अनुगूँज में शेष कथा कह

जाती हैं। यह अनुगूँज पाठक के मन-मस्तिष्क में भी देर तक गुंजायमान रहती है। चाहे परिवार हो या समाज हो, वे हर स्तर पर मानवता को स्थापित करना चाहती हैं। वे सकारात्मकता पर विश्वास करती हैं और इसीलिए उनकी कहानियाँ भी एक सकारात्मक संभावना के साथ अपनी पूर्णता को प्राप्त करती हैं। यूँ भी उर्मिला शिरीष की कहानियाँ मनोवैज्ञानिक खिड़कियाँ खोलती हैं। उनकी कहानियों में वर्णित संबंधों में स्वार्थपरता, एकाकीपन, अंतर्विरोध, सामाजिक एवं पारिवारिक द्वंद्व, मानों मौन यथार्थ को शब्द देते हैं। वे स्त्री स्वतंत्रता, स्त्रीशक्ति एवं स्त्री स्वाभिमान को अपनी कहानियों में रखती हैं किन्तु किसी स्त्रीवादी नारे की भाँति नहीं अपितु मानवतावादी दृष्टिकोण से, सहज रूप में। उर्मिला जी का शिल्प और भाषाई कौशल उन्हें अन्य समकालीन कथा लेखिकाओं से अलग ठहराता है। उर्मिला शिरीष का यह कहानी संग्रह इस दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इसमें मात्र समस्याएँ और प्रश्न नहीं उठाए गए हैं वरन उनके हल भी सुझाए गए हैं। यह पूरा संग्रह सामाजिक विमर्श का है।

000

रूढ़ियों को चुनौती देती कहानियाँ

दीपक गिरकर

मैं उन्हें नहीं जानती सुपरिचित कथाकार उर्मिला शिरीष का इक्कीसवाँ कहानी संग्रह है। समकालीन कथाकारों में उर्मिला शिरीष ने अपनी सशक्त और अलहदा पहचान बनाई है। उर्मिला शिरीष की लेखनी प्रेमचंद की परंपरा से प्रभावित है, जो जीवन के गहरे यथार्थ को चित्रित करने के साथ-साथ उससे उबरने और बेहतर तरीक़े से जीने की राह भी दिखाती है। उनके लेखन में स्त्री जीवन की जटिलताएँ, बच्चों की मासूमियत और युवाओं के संघर्षों को एक नई और ईमानदार दृष्टि से प्रस्तुत किया गया है। उनकी कहानियाँ न केवल सामाजिक और मानसिक बदलाव की ओर इशारा करती हैं, बल्कि वे वृद्ध जीवन के उन पक्षों को भी उजागर करती हैं जिन्हें समाज अक्सर अनदेखा कर देता है। उर्मिला शिरीष के लेखन में जीवन की वास्तविकता के साथ-साथ जीवन जीने की ताक़त भी दिखाई देती है। उर्मिला शिरीष की लेखनी में स्त्री और वृद्धों के प्रति एक गहरी संवेदनशीलता और जागरूकता का अद्‌भुत मेल है। उर्मिला शिरीष उन पात्रों को अपनी कहानियों में जीवन देती हैं, जो अक्सर समाज के हाशिये पर होते हैं और जिनकी व्यथा और भावनाओं को हम अक्सर नज़रअंदाज़ कर देते हैं। वे इन पात्रों की आंतरिक दुनिया को बहुत कुशलता से उजागर करती हैं, जिससे पाठक उनके साथ गहरी भावनात्मक जुड़ाव महसूस करते हैं। उनकी कहानियों की स्त्रियाँ अपने अधिकारों और अपनी पहचान की तलाश में साहसिक कदम उठाती हैं, जो समाज की रूढ़ियों को चुनौती देती हैं। यह उनकी लेखनी की विशेषता है कि वे स्त्रियों की स्वतंत्रता और उनके अधिकारों की पक्षधर हैं, लेकिन वे इसे किसी एक पक्ष या वर्ग तक सीमित नहीं करतीं। उर्मिला शिरीष का समाज को समग्रता से देखना और उसकी समस्याओं का विश्लेषण करना उन्हें अन्य नारीवादी महिला कथाकारों से अलग बनाता है। वे समाज को खाँचों में बाँटने की बजाय उसकी जटिलता और विविधता को स्वीकार करती हैं, जिससे उनकी कहानियाँ न केवल स्त्री विमर्श बल्कि समग्र सामाजिक परिवर्तनों की भी गहरी समझ देती हैं। उनका दृष्टिकोण समावेशी और व्यापक है, जो हर वर्ग और हर आयु के पात्रों को समान रूप से मानवीय संवेदना और समझ के साथ प्रस्तुत करता है। उर्मिला शिरीष की कहानियाँ पाठकों को भीतर तक हिला देती हैं। उनका लेखन केवल बाहरी घटनाओं या सामाजिक समस्याओं का विवरण नहीं करता, बल्कि इनसे जुड़े गहरे मानवीय अनुभवों, भावनाओं और संघर्षों को भी उजागर करता है। उर्मिला शिरीष के पात्र समाज की वर्चस्ववादी और सामंतवादी सोच के ख़िलाफ़ खड़े होते हैं, और यही उनके लेखन का एक शक्तिशाली पक्ष है। वे अपने पात्रों के माध्यम से संवेदना, मनुष्यता और करुणा की गहरी धारा को प्रवाहित करती हैं, जो पाठकों के मन-मस्तिष्क में एक स्थायी छाप छोड़ती है। उनके पात्र सिर्फ अपने व्यक्तिगत संघर्षों का सामना नहीं करते, बल्कि वे सामाजिक और सांस्कृतिक संरचनाओं की सीमाओं को चुनौती देते हैं, जो अक्सर मानवीय अधिकारों और स्वतंत्रता को बाधित करती हैं। उनकी कहानियाँ न केवल समाज की कुरीतियों और असमानताओं पर रोशनी डालती हैं, बल्कि वे पाठक को यह भी महसूस कराती हैं कि जीवन के वास्तविक अनुभवों को समझने और उनसे जुड़ने के लिए संवेदना और करुणा की आवश्यकता है। इन कहानियों में जीवन के बिंब सघनता के साथ उभरते हैं, जो न केवल एक सशक्त साहित्यिक अनुभव प्रदान करते हैं, बल्कि समाज के विभिन्न पहलुओं को भी गहराई से समझने का अवसर देते हैं। उनका कथा कौशल हिन्दी पाठक समुदाय को हमेशा आकर्षित करता है। उर्मिला शिरीष की लेखन शैली वाक़ई अद्वितीय है। उनकी रचनाएँ गहरी संवेदनाओं और बारीकी से बुने गए पात्रों के साथ आगे बढ़ती हैं, जिससे पाठक या श्रोता ख़ुद को कहानी के अंदर महसूस करता है। वे शब्दों के माध्यम से एक चित्र प्रस्तुत करती हैं, जो न सिर्फ पाठक की कल्पना को उकसाता है, बल्कि कहानी को वास्तविकता का अहसास भी कराता है। उनका यह सहजता से कथानक को प्रस्तुत करने का तरीक़ा सचमुच एक दृश्यात्मक अनुभव देता है, जैसे आप एक फिल्म देख रहे हों। जीवन की छोटी-छोटी घटनाओं को संवेदना के स्तर पर उठाना और देर तक सोचने के लिए विवश करना इन कहानियों की विशिष्टता है। इस कहानी संग्रह में छोटी-बड़ी 14 कहानियाँ हैं।

"देखेगा सारा गाँव बंधु !" कहानी पिता और पुत्र के संबंधों की जटिलता को कथाकार बहुत कुशलता से चित्रित करती है। पिता का किसी दूसरी स्त्री के प्रति आकर्षण, जो कि सामाजिक और मानसिक रूप से चुनौतीपूर्ण होता है, यह पुत्र के लिए एक मानसिक द्वंद्व उत्पन्न करता है। पुत्र अपने स्वयं के प्रेम संबंधों में उतार-चढ़ाव को आसानी से सँभाल सकता है क्योंकि वह अपने अनुभवों को व्यक्तिगत और बाहरी समझता है। लेकिन जब

बात अपने पिता के रिश्तों की आती है, तो यह जटिल हो जाता है। पिता का दूसरा संबंध उसके आदर्श, उसकी पहचान और उसके परिवार के मूल्यों के ख़िलाफ़ प्रतीत हो सकता है। इस स्थिति में, पुत्र के भीतर एक संघर्ष पैदा होता है, क्योंकि वह न केवल पिता के व्यक्तित्व को समझने का प्रयास करता है, बल्कि उसे यह भी स्वीकार करना पड़ता है कि उसके पिता एक इंसान हैं, जिन्हें भी अपनी भावनाओं और इच्छाओं का पालन करने का हक है। कहानी में यह प्रश्न केंद्रित है कि क्या पुत्र अपने पिता के इस नए पहलू को सहजता से स्वीकार कर सकता है, या वह इससे असहज होगा। यह द्वंद्व कहानी का मुख्य आकर्षण है और इसका उत्तर कहानी के भीतर ही विकसित होता है। इस तरह की मानसिक और भावनात्मक जटिलताओं को उर्मिला शिरीष ने बहुत संवेदनशील तरीक़े से चित्रित किया है।

"कहा-अनकहा" कहानी एक संवेदनशील और भावनात्मक स्थिति को दर्शाती है, जिसमें सतीश की मदद करने की भावना, उसके व्यक्तिगत दर्द और एक महिला की अकेलेपन की स्थिति के बीच संतुलन दिखाया गया है। कहानी की शुरुआत सतीश की विशेषता से होती है- वह पचपन साल का, मद्धम क़द, गेहूँआ रंग और सफ़ेद बालों वाला व्यक्ति है, जो हमेशा अस्पताल में मरीज़ों की सहायता करने के लिए उपलब्ध रहता है। यह दिखाता है कि वह न केवल एक दयालु व्यक्ति है, बल्कि उसने अपनी ख़ुद की दुखद स्थिति को भी एक उद्देश्यपूर्ण दिशा में मोड़ लिया है। जब एक महिला फ्रैक्चर के कारण अस्पताल आती है, तो सतीश उसकी मदद करता है। महिला को जब सतीश से यह सवाल आता है कि वह रोज़ अस्पताल क्यों आता है, तो वह अपनी पत्नी के निधन की कहानी बताता है। उसकी पत्नी जो आईसीयू में अड़तालीस दिन एडमिट रही थी, अंततः सतीश को अकेला छोड़कर चल बसी। सतीश का दर्द और अकेलापन स्पष्ट रूप से झलकता है, क्योंकि रिश्तेदारों, दोस्तों और पड़ोसियों का समर्थन धीरे-धीरे समाप्त हो गया था। यह स्थिति उसे प्रेरित करती है कि वह अब अस्पताल में किसी भी मरीज़ को अकेला न छोड़े। यह उसका अपनी पत्नी के प्रति प्यार और दुख का एक रूप है। फिर जब वही महिला ऑपरेशन के लिए तैयार होती है, तो उसकी बेटी और बेटा आते हैं, लेकिन उनकी मदद सीमित होती है। बेटी तो ऑपरेशन के बाद जल्दी चली जाती है, और बेटा भी एक हफ्ते बाद चला जाता है। अब महिला एक बार फिर अकेली हो जाती है, और केवल कामवाली बाई उसकी मदद करने आती है। इस स्थिति में, सतीश उस महिला के लिए एकमात्र सहारा बनता है, लेकिन महिला को यह सोचने का मौक़ा मिलता है कि क्या उसे सतीश को घर के अंदर बुलाना चाहिए या नहीं, जब उसकी बेटी और बेटे ने उसे सतीश से दूर रहने की सलाह दी थी। "दुपट्टा" कहानी एक दिलचस्प और विचारणीय वार्ता को दर्शाती है, जो समाज में स्त्री के रूप, वेशभूषा और आधुनिकता को लेकर चलने वाले मतभेदों पर आधारित है। रंजीता नागर के संवाद में एक गहरी सोच और सामाजिक नजरिया झलकता है। कहानी की शुरुआत में शोभित अपनी पत्नी से एक ऐसी महिला के बारे में बात करता है, जो दुपट्टा पहनकर चलती है। शोभित का यह कहना कि दुपट्टा पहनना औरत के व्यक्तित्व को सौंदर्य और सम्पूर्णता देता है, इसे वह एक सकारात्मक विचार मानता है। हालाँकि, उसकी पत्नी इस विचार से असहमत हो जाती है और इसे दकियानूसी मानने का प्रतिकार करती है। यह दिखाता है कि आधुनिक समय में वेशभूषा को लेकर अलग-अलग दृष्टिकोण हो सकते हैं, ख़ासकर जब समाज के कुछ हिस्से इसे परंपरा और दूसरों को आधुनिकता के रूप में देखते हैं। इसके बाद, जब रंजीता नागर शोभित की पत्नी से मिलती हैं, तो वह यह स्पष्ट करती हैं कि हर वेशभूषा या खानपान केवल एक सामाजिक बयान या बहस का हिस्सा नहीं होता। वह कहती हैं कि यह एक व्यक्तिगत या सामाजिक अनुशासन और बेहतरी का भी प्रतीक हो सकता है। रंजीता नागर का यह विचार उनकी जीवनशैली और अनुशासन को दर्शाता है। वह दुपट्टे को न केवल एक पारंपरिक वस्तु के रूप में देखती हैं, बल्कि इसे सुरक्षा, मर्यादा और सौंदर्य का भी प्रतीक मानती हैं। उनका यह दृष्टिकोण शोभित की पत्नी को सोचने पर मजबूर कर देता है, और वह अंततः रंजीता के दुपट्टे की तारीफ़ करती है।

"स्पेस" कहानी एक माँ के अपने बेटे और बहू के बीच संघर्ष की है। एक तरफ, माँ का प्यार और त्याग है, और दूसरी तरफ, बहू का अहम और आत्मकेंद्रित व्यवहार। कहानी की शुरुआत एक माँ से होती है, जो अपने बेटे को बेहतर जीवन के लिए विदेश भेजती है। बेटे ने वहाँ नौकरी शुरू की, जहाँ उसे नैना नाम की महिला से प्यार हो जाता है और दोनों शादी कर लेते हैं। एक समय ऐसा आता है जब बेटे की माँ, जो अपने गाँव में अकेली थी, अपने बेटे के पास विदेश जाने का फ़ैसला करती है। माँ अपना सब कुछ बेचकर बेटे के पास आती है और उसे एक फ्लैट ख़रीदने के लिए पैसा देती है, लेकिन जैसे-जैसे समय गुज़रता है, बेटे और उसकी पत्नी के बीच का रिश्ता और भी ख़राब होता जाता है। नैना, जो अब बेटे की पत्नी है, रोज़ बेटे से झगड़ा करती है। वह न केवल पति को गालियाँ देती है, बल्कि सास से भी झगड़ा करती है। वह घर का कोई काम नहीं करती और अपने पति पर दबाव बनाती है। बेटा घर के सारे काम करता है, और इस तनावपूर्ण वातावरण में उसे अपनी माँ की मदद की भी उम्मीद रहती है। बेटे ने अपनी माँ से कहा कि जब नैना की माँ बीमार थी, तब उसने उनकी सेवा की थी। कहानी का एक और महत्त्वपूर्ण मोड़ तब आता है जब नैना अपनी सास से कहती है कि वह भारत वापस चली जाए, क्योंकि उसे "स्पेस" चाहिए। इस स्थिति में, माँ अपने बेटे और बहू के बीच के तनाव से थक चुकी होती है और अपने पड़ोसी की मदद से भारत लौटने का निर्णय लेती है। इस कहानी में पारिवारिक रिश्तों की जटिलता और त्याग की भावनाएँ सामने आती हैं। बेटे और बहू के बीच का रिश्ता भले ही तनावपूर्ण हो, लेकिन माँ का प्यार और बलिदान हमेशा उसे सही मार्गदर्शन

देने का काम करता है। "नियति" कहानी एक महिला, विभावरी, के संघर्ष और उसकी कठिन परिस्थितियों से उबरने की प्रक्रिया को दर्शाती है। विभावरी के जीवन में लगातार दुखों की लकीर रही है - पति की आत्महत्या, सास का तिरस्कार और बेरोज़गारी, लेकिन वह कभी हार नहीं मानती। उसकी परिस्थिति और रिश्ते ने उसे कड़े फ़ैसले लेने की ओर प्रेरित किया, और इसने उसे एक नई उम्मीद दी। कहानी में विभावरी की मदद करने वाली मैडम एक प्रेरणास्त्रोत बनकर सामने आती है। मैडम न केवल विभावरी को मानसिक और भावनात्मक सहारा देती है, बल्कि उसे एक नए अवसर की ओर भी मार्गदर्शन करती है। दिनेश, जो एक अकेला व्यक्ति है, विभावरी के साथ एक नए रिश्ते की शुरुआत करने का विचार करता है, जिससे विभावरी की परेशानियाँ ख़त्म हो जाती हैं और उसकी ज़िंदगी में ख़ुशियाँ लौट आती हैं। यह कहानी यह भी बताती है कि जीवन में कठिनाइयाँ आ सकती हैं, लेकिन सही समय पर किसी का समर्थन और सहारा मिलने से हम अपनी समस्याओं का समाधान पा सकते हैं। विभावरी का यह अनुभव समाज के धारणाओं और परंपराओं के ख़िलाफ़ जाकर एक नया रास्ता चुनने की प्रेरणा देता है।

"अत्र कुशलम तत्रास्तु" कहानी परिवार, परंपरा और रिश्तों की महत्ता को बयाँ करती है। दादाजी का प्रयास अपने परिवार को जोड़ने और रिश्तों में आई दरारों को ख़त्म करने के लिए था। वह चाहते थे कि उनकी कोशिशों के जरिए परिवार के सभी सदस्य एकजुट हों, और इस उद्देश्य के लिए उन्होंने भागवतकथा जैसे धार्मिक आयोजन का सहारा लिया। दादाजी का यह क़दम परिवार की भावनाओं और रिश्तों को फिर से एक साथ जोड़ने का था। वह चाहते थे कि उनके बाद भी उनका परिवार सम्मानपूर्वक एकजुट रहे, और यही कारण था कि उन्होंने अपने परिवार को इस आयोजन में शामिल होने के लिए प्रेरित किया। सिद्धांत, जो शुरू में इस आयोजन में रुचि नहीं दिखा रहा था, आख़िरकार परिवार के साथ जुड़ा और दादाजी की आशाओं को पूरा किया। दादाजी का जीवन भर का संघर्ष, उनकी तपस्या और परिवार के प्रति उनकी निष्ठा को सिद्धांत समझता है, और अंत में वह अपने दादाजी के आशीर्वाद को स्वीकार करता है। दादाजी ने अपने जीवन की सबसे बड़ी विरासत - परिवार की एकता और उस एकता को बनाए रखने की जिम्मेदारी सिद्धांत को सौंप दी। यह वही विरासत है जिसे सिद्धांत को अब निभाना है, और इसके लिए वह अपने दादाजी की प्रेरणा से अपनी ज़िम्मेदारी निभाने का संकल्प लेता है। इस कहानी में परिवार के प्रति ज़िम्मेदारी, एकता और प्यार की गहरी भावनाएँ प्रकट होती हैं। साथ ही यह भी दिखाया गया है कि रिश्तों को समय, ध्यान और समझ की आवश्यकता होती है, और हम सभी को अपने पूर्वजों की इच्छाओं और कड़ी मेहनत का सम्मान करना चाहिए। "सप्तधारा" कहानी एक व्यक्ति के त्याग, परिवार के प्रति प्रेम और सामाजिक ज़िम्मेदारी की भावना को दर्शाती है, जो अपनी पाँच बहनों के लिए एक बंगला बनवाता है। यह व्यक्ति अपनी बहनों की भलाई के लिए अपने पैसों का इस्तेमाल करता है, लेकिन उसकी पत्नी शोभा का दृष्टिकोण इसके विपरीत है। शोभा, जो अपनी बहनों को घर में आने से रोकती है और परिवार की सहायता करने के प्रति अनिच्छुक होती है, इस पूरे स्थिति को और जटिल बना देती है। कहानी में यह भी सामने आता है कि उस व्यक्ति के पिताजी ने अपनी बेटियों की शादी ग़रीब परिवारों में की थी, जिससे वह शायद कभी पूरी तरह से संतुष्ट नहीं हुए होंगे। इसका असर उस व्यक्ति पर भी पड़ा और वह अपनी बहनों के भविष्य को सुरक्षित करने के लिए यह बड़ा क़दम उठाता है। जब वह व्यक्ति अपनी बहनों के लिए नए बंगले की चाबियाँ रखता है और उनके ख़र्चों के लिए एक ट्रस्ट, सप्तधारा बनाता है, तो यह उसकी परिवार के प्रति ज़िम्मेदारी और प्रेम का प्रतीक है। वह अपने परिवार को एक स्थिर और सुरक्षित भविष्य देने के लिए जो कुछ भी कर सकता है, वह करता है, जबकि शोभा का रवैया उसके प्रयासों में बाधा डालता है। इस कहानी में कई पहलुओं की परतें हैं - एक ओर जहाँ व्यक्ति का प्यार और त्याग अपने परिवार के लिए है, वहीं दूसरी ओर शोभा का स्वार्थ और परिवार के साथ उसकी दूरी उसकी सोच और रिश्तों में दरार डालती है। सप्तधारा ट्रस्ट के माध्यम से वह अपनी बहनों को एक स्थिरता और सुरक्षा देने का प्रयास करता है, ताकि उनकी ज़िंदगी बेहतर हो सके, यह उसकी आत्मीयता और अपनी बहनों के प्रति उसकी निष्ठा को दर्शाता है।

"झूठ की चादर" कहानी समाज में व्याप्त असुरक्षा, शोषण और मानवता की दरकी हुई संवेदनाओं को उजागर करती है। यह न सिर्फ एक महिला की सुरक्षा की चिंता और संघर्ष की कहानी है, बल्कि हमारे समाज में धार्मिक विश्वासों और उनके नाम पर होने वाली धोखाधड़ी को भी दर्शाती है। कहानी में वसीम और इरफान जैसे अच्छे लोग हैं जो न केवल काम में निपुण हैं, बल्कि इंसानियत और ईमानदारी के प्रतीक भी हैं। जब महिला असुरक्षित महसूस करती है और उसे सहायता की आवश्यकता होती है, तब वसीम अपनी जान की परवाह किए बिना उसकी मदद करता है। इसके बावजूद, समाज में कुछ लोग धर्म के नाम पर शोषण करते हैं और दूसरों को डराने-धमकाने के लिए ऐसे कृत्य करते हैं। कहानी का एक और महत्त्वपूर्ण पहलू यह है कि इसमें वसीम जैसे लोग महिला की सुरक्षा की जिम्मेदारी उठाते हैं और यह बताता है कि सच में हमें मानवता और अच्छे कर्मों को प्राथमिकता देनी चाहिए। कुल मिलाकर यह कहानी न सिर्फ सामाजिक मुद्दों को छेड़ती है, बल्कि यह भी दिखाती है कि अच्छाई और इंसानियत हमेशा नफ़रत और हिंसा से ज़्यादा मज़बूत होती है। "कि ईश्वर तुम्हें माफ़ नहीं करेगा" कहानी एक ऐसे व्यक्ति की है, जिसका जीवन संघर्षों और सामाजिक प्रथाओं से प्रभावित है। देवेश, एक ड्राइवर, जो अपने परिवार की देखभाल करने के लिए टैक्सी चलाता है, लेकिन उसकी ज़िंदगी में कई कठिनाइयाँ हैं। वह टैक्सी चलाते समय बहुत ग़लतियाँ करता है। वह उच्च जाति से है और समाज में उसकी स्थिति को लेकर कई

सामाजिक मान्यताएँ और धारणाएँ हैं। देवेश का अपनी बेटी के साथ हुआ संघर्ष इस कहानी का मुख्य मोड़ है। उसकी बेटी, जो एक लिव-इन रिलेशनशिप में रहती है, उसके प्रेमी को देवेश अपना दामाद स्वीकार नहीं करता क्योंकि वह निम्न जाति का है। यह देवेश की मानसिकता को दर्शाता है, जिसमें समाज की जातिवाद और पुरानी परंपराओं के प्रति अडिग नज़र आती है। जब देवेश अपनी बेटी और उसके प्रेमी से मारपीट करता है और लड़के का सिर फोड़ देता है, तो यह उसकी कड़ी प्रतिक्रिया का परिणाम है, जो समाज के मानकों और उसकी पारिवारिक अपेक्षाओं से जड़ा हुआ है। हालाँकि यह बर्ताव ग़लत है, लेकिन यह दिखाता है कि देवेश की सोच पूरी तरह से पुराने और कड़े सामाजिक नियमों से बँधी हुई है। उसे यह समझ नहीं आता कि उसके बेटियों का जीवन उनके चुनाव पर आधारित होना चाहिए, न कि जाति या समाज की सोच पर।

"एक पेड़ उनके नाम" कहानी एक गहरी संवेदनशीलता और पर्यावरण के प्रति ज़िम्मेदारी की बात करती है। यह व्यक्ति, जो पेड़ लगाने और पर्यावरण को सहेजने के लिए इतने समर्पित था, अपनी पूरी ज़िंदगी इसी मिशन में लगा देता है। उसकी पत्नी को शुरू में उसकी इस आदत से चिढ़ थी, लेकिन समय के साथ वह देखती है कि उसका पति किस तरह से धरती और पर्यावरण के प्रति अपनी ज़िम्मेदारी निभा रहा है। उसकी मृत्यु के बाद, उसकी पत्नी ने उसके मिशन को आगे बढ़ाने का निर्णय लिया, और यह कहानी उसके संघर्ष और समर्पण का प्रतीक बन जाती है। वह ज़मीन, जो शुरुआत में पीली और पथरीली थी, वह अब हरे-भरे पेड़ों से घिर जाती है। यह कहानी न केवल पेड़ों की महत्त्वपूर्णता को बताती है, बल्कि यह भी दर्शाती है कि अगर एक व्यक्ति के प्रयासों में सच्ची लगन हो, तो वह न केवल ख़ुद को, बल्कि पूरी दुनिया को एक बेहतर जगह बना सकता है। इसमें जो सबसे महत्त्वपूर्ण संदेश है, वह यह है कि किसी का सपना अगर सच्ची मेहनत और समर्पण के साथ पूरा किया जाए, तो वह अपनी एक स्थायी छाप छोड़ जाता है, भले ही व्यक्ति स्वयं जीवित न हो। पेड़ लगाना और पर्यावरण की रक्षा करना न केवल व्यक्तिगत मिशन हो सकता है, बल्कि यह समाज और पीढ़ियों के लिए एक महत्त्वपूर्ण धरोहर बन जाता है। "मैं उन्हें नहीं जानती" कहानी एक गहरी सामाजिक और धार्मिक आलोचना के साथ-साथ एक व्यक्तित्व के उत्थान और संघर्ष की कहानी है। जिया, जो घर की सबसे बड़ी बेटी होती है, ने हमेशा अपनी छोटी बहनों और छोटे भाई के लिए अपनी ज़िम्मेदारी निभाई। इसके बावजूद, जब वह ससुराल जाती है, तो भी अपनी परिवार की चिंता करती रहती है। जिया का जीवन एक संघर्षों से भरा हुआ था, लेकिन उसने कभी हार नहीं मानी। उसका अपने परिवार के लिए त्याग और प्यार ही उसे अलग बनाता है। कहानी में जिया का एक नया रूप सामने आता है, जब वह मंदिरों में घूमते हुए अपनी नज़रें और सोच को एक नए दृष्टिकोण से देखती है। वह उन धूर्त पंडितों और गुंडों के ख़िलाफ़ खड़ी हो जाती है, जो भगवान् के नाम पर अपमानजनक तरीक़े से व्यवहार कर रहे थे। यहाँ जिया की बहन की नज़र से यह देखा गया है कि जिया की एक नई शक्ति और साहस उभर कर सामने आया है, जो उसने पहले कभी नहीं देखा था। जिया की प्रतिक्रिया में, उसकी विरोधाभासी भावना दिखती है - एक ओर वह गहरी श्रद्धा से भरी है, और दूसरी ओर, वह समाज में होने वाली कुरीतियों और ग़लत तरीकों के ख़िलाफ़ खड़ी हो जाती है। मंदिरों में घटित हो रही ग़लत बातों का विरोध करते हुए जिया यह सवाल उठाती है कि वह श्रद्धा और धन का प्रवाह कहाँ जा रहा है, और कैसे धार्मिक स्थल व्यापार का रूप धारण कर चुके हैं। इस कहानी के माध्यम से यह संदेश मिलता है कि समाज में बदलाव लाने के लिए साहस और जिम्मेदारी की आवश्यकता होती है, और कभी-कभी हमें अपने धर्म और विश्वास से जुड़ी कुरीतियों का विरोध करना पड़ता है। जिया का संघर्ष यह दिखाता है कि धार्मिकता, ईमानदारी और सचाई के रास्ते पर चलने के लिए हर किसी को अपने डर को पीछे छोड़ने की आवश्यकता है। "दरवाजे", "चल खुसरों घर आपने", "पीले फूल" जैसी कहानियाँ यथार्थवादी जीवन का सटीक चित्रण है। ये कहानियाँ मन को छूकर उसके मर्म से पहचान करा जाती है।

ये कहानियाँ अपने समय की चुनौतियों का सामना करती ही हैं और साथ ही समय और समाज से टकराने की चुनौती का सामना करने की ताक़त और दृष्टि भी देती हैं। ये कहानियाँ जीवन के विभिन्न मनोवैज्ञानिक पहलुओं से पाठकों को रू-ब-रू करवाती हैं। मुंशी प्रेमचंद का मानना था कि उत्कृष्ट कहानी वह है जिसका आधार मनोविज्ञान हो। इस दृष्टि से इस कहानी संग्रह की कहानियों में मनोविज्ञान का कुशलता के साथ प्रयोग हुआ है। सभी कहानियाँ लीक से हटकर हैं। इस संग्रह की कहानियों में भावनाओं का आवेग प्रकट हुआ है। ये कहानियाँ मानवीय संबंधों को हर कोण से अभिव्यक्त करती हैं। ये कहानियाँ अपने कथा फलक का पाठक से तारतम्य ही नहीं बिठातीं बल्कि अपने साथ बहा ले जाती हैं। प्रत्येक कहानी में विषय और प्रस्तुति के स्तर पर नयापन दिखाई देता है। इस संग्रह की कहानियों में समस्याएँ जितनी जटिल हैं, उनके समाधान उतनी ही सरलता से किया जाना कथाकार की रचनाशीलता को रेखांकित करता है। नवीन विषयवस्तु और सुंदर शिल्प में बुनी ये कहानियाँ सहज ही पाठकों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती हैं। ये कहानियाँ जिस तरह से बुनी गई है वह लेखिका के लेखकीय कौशल को उद्घाटित करता है। इनकी कहानियों के पात्र कई दिनों तक इनके मन-मस्तिष्क में छाए रहते हैं, फिर वे धीरे-धीरे बेहद संजीदगी और अपार धैर्य तथा लेखन-कला के विविध रंगों की सहायता से इत्मीनान के साथ कहानियों को बुनती हैं। उर्मिला शिरीष की ये कहानियाँ बिना किसी शोर-शराबे के दैनिक कार्यकलापों से आकार लेती, कभी भावुक कर देती हैं तो कभी हक़ीक़त सामने लाती हैं। उर्मिला शिरीष की छोटी-छोटी कहानियाँ अपने कथ्य, शिल्प और सहज-सरल भाषा में मानवीय

संवेदनाओं की एकरूपता को उकेरने का प्रयास करती हैं तथा वे अपने इस प्रयास में सफल भी होती हैं। कहानियों से गुज़रते हुए स्वाभाविकता का गहरा बोध होता है। कहानियाँ पाठकों से बातें करती हैं। उनके पात्र जीवन के हर क्षेत्र से आए हैं। कथाकार कहीं भी अपने चरित्रों को अनावश्यक उलझाती नहीं है। घटनाओं का सहज आरोह कथानक को गति देता है। कथाकार कथानक के माध्यम से पात्रों के अतल मन की गहराइयों की थाह लेती हैं। कहानियों के पात्र मानवीय संवेदनाओं को पूरी सत्यता के साथ उजागर करते हैं। कथाकार उर्मिला शिरीष को पढ़ना हमेशा समृद्ध करता है। आशा है उनके इस कहानी संग्रह को भी पाठकों का भरपूर प्यार और सम्मान मिलेगा।

000

जिजीविषा की कहानियाँ

शैली बक्षी खड़कोतकर

शिखर सम्मान से सम्मानित उर्मिला शिरीष के व्यापक रचना-संसार में नई आमद है, उनका ताज़ा कहानी संग्रह 'मैं उन्हें नहीं जानती'। उर्मिला जी की कहानियाँ मूलत: मानवीय सरोकार की कहानियाँ हैं। यहाँ मानवीय रिश्तों की उलझनें हैं, विदेश में बसे लोगों की बेचैनी और अंतर्द्वंद्व है, बुढ़ापे की दस्तक है, अकेलेपन की धुंध है, गहरी उदासी का कोहरा है और इन सबके बीच एक अदम्य जिजीविषा है, जो उम्मीद की लौ को बुझने नहीं देती। कुल चौदह कहानियों से सजा यह संग्रह शिवना प्रकाशन से हाल ही में प्रकाशित होकर आया है।

संग्रह की पहली कहानी 'देखेगा सारा गाँव बंधु' गहरी संवेदनाओं की कहानी है जो संभवत: उनकी चर्चित कहानी 'बाँधो न नाव इस ठाँव बंधु' की एक और कड़ी है। दोनों कहानियों की भावभूमि एक-सी है। हँसमुख, ज़िंदादिल पिता अपने मित्रवत युवा बेटे से अपने पहले प्रेम का रहस्य साझा करते हैं और उससे अमेरिका में अपनी प्रेमिका से मिलकर कुछ सामान (क़िताबें, चिट्ठियाँ) देने का आग्रह करते हैं। पिता के आकस्मिक देहांत से व्यथित बेटे के सामने विकट दुविधा है, पिता की अंतिम इच्छा पूर्ण करें या पिता को अपनी माँ का अपराधी मान कर इससे मुहँ मोड़ ले। उर्मिला जी ने मानवीय संबंधों की जटिलता को इस सहजता और कोमलता से छुआ है कि कोई किरदार ग़लत नहीं लगता, यह कहानी की ख़ूबसूरती है।

'कही-अनकही' आज के कटु यथार्थ की कहानी है। एकल परिवार, विदेशों में बसे बच्चे, घटती सामाजिकता, बुढ़ापा, अकेलापन, उस पर बीमारी और अस्पताल के चक्कर। अस्पताल के परिवेश का चित्रण इतना वास्तविक बन पड़ा है कि अस्पताल की अजीब महक महसूस होने लगती है। ऐसे मुश्किल वक़्त में सतीश जी जैसे किरदारों का इर्द-गिर्द होना ही कितनी बड़ी आश्वस्ति है।

'दुपट्टा' कहानी, पहनावे के संदर्भ में अति आधुनिकता से ग्रस्त मानसिकता पर प्रहार है। घर परिवार की बुज़ुर्ग महिलाएँ कभी बहू-बेटियों को दुपट्टे की मर्यादा और संस्कार समझाया करती थीं। लेखिका उन्हीं मूल्यों को अपने पात्र के ज़रिए सशक्त और प्रभावी तरीक़े से प्रेषित किया है कि स्त्री स्वतंत्रता और सशक्तिकरण का का अर्थ सिर्फ पहनावे की आधुनिकता नहीं है।

'स्पेस' संग्रह की सबसे मार्मिक कहानी है। इस कहानी को पढ़ना, विषाद की लहर से गुज़रना है। मन काँप उठता है और देर तक उसकी सिरहन बनी रहती है। एक बेटा जो विदेश में शादी के नाम पर उत्पीड़न के दुश्चक्र में फँस गया है और उसके पास आई माँ भी उनकी झगड़ों का शिकार बन गई है। माँ का मन असहाय बेटे के लिए तड़प रहा है पर बहू के हिंसक अत्याचारों को झेलना भी दुष्कर हो जाता है। आज जब हमारे यहाँ भी आए दिन इस तरह पुरुष उत्पीड़न की घटनाएँ हो रही हैं, यह कहानी बहुत प्रासंगिक हो जाती है।

'नियति' कच्ची उम्र में विधवा हो गई विभावरी की कहानी है, जो हर तरफ से संघर्ष में घिरी है। ऐसे कठिन समय में जब उसके अपने उसे सहारा नहीं देते, सीमा जी न सिर्फ उसे घर लेकर आती हैं बल्कि उसके भविष्य के लिए दूसरी शादी के लिए यत्न करती हैं। अंत में सीमा जी का उदार प्रस्ताव फिर एक बार सकारात्मक और भले लोगों पर विश्वास कायम करता है।

'अत्र कुशलम् तत्रास्तु' एक और भावपूर्ण कहानी है, बिलकुल हमारे परिवेश से निकली। दादाजी जैसे पात्र हम सभी के बुज़ुर्गों के प्रतिनिधि हैं, जिनके जीवन का ध्येय ही पूरे कुनबे को एकजुट करना है। एकता को ताक़त माने वाली इस पीढ़ी के लिए दूर, बिखरे रिश्ते सबसे बड़ी पीड़ा बन जाते हैं। परिवार को स्नेह के सूत्र में बाँधने की तीव्र इच्छा लिए दादाजी गाँव के घर को सर्व सुविधायुक्त बना लेते हैं, स्कूल खुलवाते हैं, बल्कि भागवत कथा का आयोजन भी करवाते हैं कि इस बहाने सब बच्चे साथ आएँगे। अंत में वे भावुक चिट्ठियों के रूप में संबंधों की विरासत पोते को सौंप देते हैं।

'मैं उन्हें नहीं जानती' संबंधों के ऐसे पक्ष को उजागर करती बेहतरीन कहानी है, जो बाज़दफ़े अनदेखा रह जाता है। यह कहानी रुक कर सोचने को विवश करती है। अक्सर कुछ रिश्तों या लोगों को ग्रांटेड ले लिया जाता हैं क्योंकि वे अपने कर्त्तव्य निभाते जाते हैं, न कभी शिकायत करते हैं, न कोई अपेक्षा। बड़ी बहन जिया अपने छोटे भाई-बहनों का जीवन संवारने में जीवन लगा देती है पर अपनी तकलीफ़ों का ज़िक्र भी नहीं करती। इसका एहसास होता है, जब जिया को हार्ट-अटैक आता है। इसके बाद जिया के साथ एक यात्रा पर निकली छोटी बहन जिया के दृढ़, साहसी व्यक्तित्व को देख हैरान है। तब उसे समझ आया कि इतने साल साथ रहकर भी वह जिया को जान नहीं पाई।

उर्मिला जी का अपना बड़ा पाठक वर्ग है, जो उनके अनूठे विषयों, सूक्ष्म दृष्टी और प्रवाहमयी भाषा के लिए उनकी कहानियाँ पढ़ता है। वे पाठक इस संग्रह को निश्चित ही पसंद करेंगे। संघर्षो और भावों को समेटे, ये यथार्थ की कहानियाँ हैं, पर इन में से झाँकती उम्मीद की रोशनी के लिए इन्हें ज़रूर पढ़ा जाना चाहिए। आदरणीय उर्मिला जी और शिवना प्रकाशन को हार्दिक बधाई।

000

केंद्र में पुस्तक

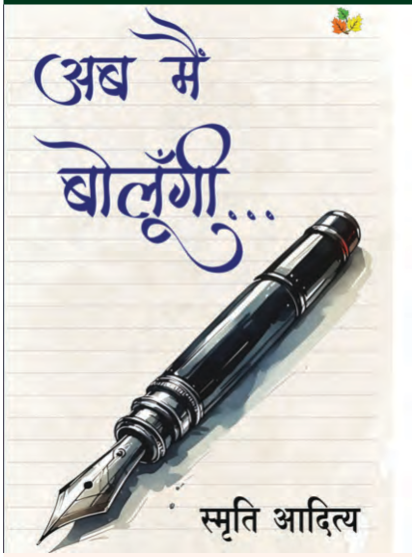

(डायरी)

अब मैं बोलूँगी

समीक्षक : ज्योति जैन, स्वरांगी साने, शैली बक्षी खड़कोतकर

लेखक : स्मृति आदित्य

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545 मोबाइल- +91-9806162184

ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

ज्योति जैन
1432/24, नंदा नगर
इंदौर 452011 मप्र
मोबाइल -9300318182

स्वरांगी साने
ए-2/504
अटरिया होम्स, धनोरी
पुणे 411015
मोबाइल- 9850804068

शैली बक्षी खड़कोतकर
ई-8, 157, भरत नगर,
भोपाल - 462039 मप्र
मोबाइल- 9406929314
ईमेल- shailykhadkotkar@gmail.com

समर शेष है नहीं पाप का भागी केवल व्याध

ज्योति जैन

समर शेष है नहीं पाप का भागी केवल व्याध, जो तटस्थ हैं समय लिखेगा उनके भी अपराध

लेखिका, पत्रकार स्मृति आदित्य की डायरी.... अब मैं बोलूँगी जब मैंने पढ़ना शुरू किया तो मेरे दिमाग़ में सबसे पहले जो पंक्तियाँ आई वे दिनकर की यही दो पंक्तियाँ थीं..।

पत्रकारिता के अनुभव कड़वे अधिक मीठे कम... उन अनुभवों का निचोड़ कहीं न कहीं यह भी कि पीड़ित तो सब हैं लेकिन स्वर मुखर कोई-कोई ही कर पाता है। मूसलाधार बारिश, चिलचिलाती धूप, कड़कड़ाती ठंड की परवाह किए बिना पत्रकार अपनी जान पर खेल जाते हैं। कई असमय कहीं न कहीं किसी दुर्घटना से पीड़ित भी हो जाते हैं और किसी को कोई फ़र्क नहीं पड़ता सिवाय उनके अपनों के...। इसलिए स्मृति कहती है कि रुको अपने व्यक्तित्व और अस्तित्व को मत मिटा डालो, किसी के लिए, किसी ऐसे के लिए जिसे तुम्हारी कोई परवाह ही नहीं...क्योंकि तुम्हारी भी एक ही ज़िंदगी है।

जब स्मृति ने इस पुस्तक को लिखने का मन बनाया होगा। अपनी डायरी के पन्नों को उल्टा पुल्टा होगा। उसके भीतर की स्मृति को उसने बाहर निकाला होगा जो कि समर्पित है, रंग बदलती दुनिया से डरती भी है, लेकिन फिर डटकर सामना करती है। वही स्मृति तब निकल आई होगी जब लेखनी को उसने थामा।

जब एक लेखक लिखना शुरू करता है तो कई बार उसे पता नहीं होता कि वह किस विधा में ढलकर बाहर निकलेगा...? लेकिन जो उद्गार लेखिका के थे, वे निश्चित रूप से डायरी विधा में ही आना थे।

अपनी पत्रकारिता की शिक्षा पूरी करने के बाद जब वह पहली नौकरी के लिए प्रयासरत रहती है तो बहुत ख़ूबसूरत उद्गार उसके मन से निकले हैं। क्योंकि वह बहुत सुंदर कविताएँ भी रचती है, इसलिए उसके उद्गार भी वैसे ही थे। द्वार पर सजा आँगन मिलेगा, आँगन में सजी अल्पनाएँ मिलेंगी, आरती उतारी जाएगी, स्तुति गान होगा..., पत्रकारिता की बारीकियाँ जो सीखकर आई है..! लेकिन वैसा कुछ नहीं था। तो एक कोमल मन वाली लड़की की भावना तो आहत होना ही था। वह समझ चुकी थी कि सबको मुफ्त के नौकर तो चाहिए, ऐसे मज़दूर जो 8-10 लोगों का काम अकेले ही कर लें। और साथ ही अपने किए का क्रेडिट लेने वाले दूसरे लोग भी मिल जाते हैं। प्रशिक्षुओं के साथ होने वाले दुर्व्यवहार या पीड़ा से स्मृति की डायरी की शुरुआत होती है। क्योंकि वह मेहनती है अपने दम पर अपना कार्य करने की ताक़त रखती है। पत्रकारिता... उसे लगता था कि बड़ी और सम्मानजनक बात है। लेकिन जब भीतर की असलियत से रू-ब-रू होती है तो उसे समझ में आ जाता है कि यह राह नहीं आसान....।

कुछ दिन एक जगह काम करती, फिर छोड़ देती। फिर दूसरी जगह करती, फिर छोड़ देती। लेकिन उसके साथ यह बहुत अच्छी बात थी कि जब डिप्रेशन में जाने का भरपूर माहौल था, तब भी वो ख़ुश रहती थी और ख़ुशी में वो अपने शौक पूरे कर लेती थी। अख़बारों में छपने का सुख भी उसने पूरी तरह उठाया क्योंकि उसकी क़लम पर सरस्वती का भरपूर आशीर्वाद था। नौकरी न सही लेकिन लेखन में तो उसे माँ सरस्वती का पूरा आशीर्वाद प्राप्त हुआ। जब धीरे-धीरे उसे लगा कि भरोसा टूट रहा है दुनिया पर बहुत अभिमान था, वह टूट रहा है। फिर उसने अध्यापन की राह चुनी और वहाँ पर उसे बहुत प्यार और आदर मिला। यह एक बहुत अच्छी बात है कि उसका युवाओं के साथ का अनुभव बहुत अच्छा रहा।

विद्यार्थियों ने उसे जाना और उसने विद्यार्थियों को। लेकिन फिर नौकरी के लिए कहीं ओर हाथ-पैर मारने से पहले अध्यापन के दौरान जो पैसे मिलना थे, वह भी उसे नहीं मिले, क्योंकि एक बंदे ने कहा मैडम चाय-पानी का इंतज़ाम करना होगा। चाय-पानी का मतलब तब ये भोली स्मृति नहीं जानती थी। लेकिन साथ वाली फैकल्टी ने बताया कि यह पैसे माँग रहा है। इस दुनिया में कभी न कभी ऐसा होता है कि स्वाभिमानी को अभिमानी या घमंडी समझ लिया जाता है।

स्मृति के साथ भी ऐसा ही हुआ। फाइनली वो वह नौकरी भी छोड़कर आ गई। अपनी डायरी में स्मृति कहती है कि बहुत लंबे अरसे के बाद बिना किसी तनाव के उठी न कोई हड़बड़ाहट, ना घबराहट...इतने आराम से सोई जैसे बरसों से नींद भी मेरी तलाश में थी। यह एक मज़बूत लड़की के मजबूत ह्रदय की निशानी है जिसने नकारात्मकता में भी सकारात्मक तलाशी।

वह इसे कहती है मन की शांति की शुरुआत... इस बार तो राखी भी धूमधाम से मनेगी। हर साल तो अपने त्यौहार मनाने से ज़्यादा लोगों के त्यौहार मनवाने की चिंता रहती थी...।

अपनी डायरी को आगे बढ़ाते हुए वह कहती है कि सेहत, सुंदरता, सौभाग्य, सफलता, सुख, शांति, सम्मान, सकारात्मकता, सक्रियता, सरलता, सहजता, सादगी, सात्विकता, संपत्ति....क्या चाहिए मुझे...? इनमें से कुछ या सब कुछ....?

अगर चाहिए तो मेरी प्राथमिकता क्या है....?

ज़ाहिर है अब लेखिका परिपक्व हो चली है और सेहत और सम्मान ही उसकी पहली प्राथमिकता है।

नौकरी छोड़ने की वजह भी यही थी। हालाँकि वो मानसिक रूप से अपने आप को मज़बूत रखने के लिए कटिबद्ध थी, क्योंकि उसे अपनी कर्मनिष्ठा पर हमेशा दृढ़ विश्वास रहा।

यहाँ वह यह भी स्पष्ट करती है कि चाहे वह पत्रकारिता हो या कोई और विभाग... यह कोई आवश्यक नहीं कि पत्रकारिता में ही ये सारी विसंगतियाँ हैं...।

वह कहती है कि विभिन्न संस्थानों में भी यह बातें होती है, जहाँ जूनियर को सीनियर के द्वारा कभी न कभी, कहीं न कहीं परेशान किया जाता है।

वह कहती है कि एक समय होता था कि जब मीडिया हाउस से थककर व परेशान होकर पत्रकार दूसरे मीडिया हाउस में भी संभावनाएँ तलाशता था। मगर इन दिनों जो हालात हैं वो दुखी कर देने वाले हैं। क्योंकि दुखी होकर के वह व्यक्ति किसी और क्षेत्र में जाने की सोचता है या तो एकेडमी या बिज़नेस शुरू करेगा। क्योंकि जो टॉक्सिक अनुभव उसे होते हैं वह कहीं और ज्वाइन करने की हिम्मत नहीं जुटा पाता।

तो अब लेखिका सोचती है, अब मेरे पास कोई ज़िम्मेदारी नहीं, कोई पद नहीं... लेकिन मनचाहा और रचनात्मक काम कर सकते है। नया सृजन कर सकते हैं क्योंकि नौकरी हो या न हो, रिश्ते हैं, यारियाँ हैं, ख़ुद्दारी है, मेरा आकाश, मेरी ज़मीं, मेरी बयार है और सबसे बड़ी बात मेरी हँसी सलामत है...।

उसकी डायरी पढ़ते हुए उसने मुझे बरसों पुराने एक फौजी भाई की व्यथा याद दिला दी...।

फौज की नौकरी छोड़ने के लिए उसका कारण था कि मैं अपने सीने में देशभक्ति की आग लेकर यहाँ आया था। मेम साहब, मतलब अफ़सरों की पत्नियों के कपड़े धोने या उनके लिए सब्ज़ी लाने या किराना लाने के लिए नहीं....।

नतीजा यह हुआ कि पहले उसे क्वार्ट गार्ड में डाल दिया गया और फिर नौकरी से निकाल दिया गया।

स्मृति के अनुभव भी ऐसे रहे कि मालिकों के परिवार के बच्चों के लिए प्रजेंटेशन बनाना, उनका होमवर्क करवाना ये सब किसी भी ख़ुद्दार पत्रकार को गवारा नहीं होगा। लेकिन करना पड़ा। लेकिन जब कहते हैं न कि रबर को कितना खींचेंगे, कभी तो टूटेगा तो यह रबर इसी तरह टूटना था।

शब्द ख़ुद के हों और नाम किसी दूसरे का इससे बड़ी विडंबना और क्या हो सकती है...? ख़ुद को जब छला हुआ महसूस करता है तो इंसान फिर कुछ भी छोड़ सकता है... और इसलिए उसने उस जगह को छोड़ना ज़्यादा बेहतर समझा जहाँ पर उसे यह दर्द मिलता था। जब भी नौकरी छोड़ने की बात आती है तो कई लोगों की सलाह, बिना माँगी सलाह ज़्यादा आने लगती है। विरोधाभास भी सुनने को मिलता है। कोई कहता है... आपको रुक जाना चाहिए था, ऐसा भी क्या इगो। कोई कहेगा आप में इतनी क़ाबिलियत थी, आपको उन्हें रोक लेना चाहिए था। तो कोई कहेगा आप रुक सकते थे। कोई कहेगा आपको उनसे एक बार बात करना चाहिए थी। और कोई कहेगा उन्हें आपसे एक बार बात करना चाहिए थी....।

किसी भी प्रोफेशन के उतार चढ़ाव में या किसी भी प्राइवेट सेक्टर में, जो काम कर रहे हैं उनकी छोटी-छोटी ख़ुशियाँ कई बार ईएमआई की भेंट चढ़ जाती है, उनके बारे में कोई नहीं सोचता। एक-एक छुट्टी माँगना ऐसा हो जाता है मानो उन्होंने अपराध कर दिया हो। इसलिए वह एक बहुत अच्छी सलाह देती है कि दुनिया के जितने भी बॉस हैं, मालिक या कंपनी को ख़ुश करने के लिए, जो तुम क्रूर विलन बनते हो न, वह किसी काम का नहीं है। एक दिन

तुम भी यहाँ से गुज़र जाओगे और फिर न अधीनस्थ तुम्हे याद रखेंगे ना मालिक।

और उनके लिए भी कहती है जो बिना अवकाश लिए समर्पित भाव से घंटों तक कंपनी के लिए काम कर रहे हैं। वह जो उदाहरण सेट करते हैं, यह दूसरों के लिए प्रेरणा नहीं बल्कि गालियाँ निकलवाने का ही सबब है। और एक बहुत महत्त्वपूर्ण बात कहती है कि जो तुम अपने नंबर बढ़वाकर कंधे पर स्टार लगवा कर, यानी चापलूसियाँ, चुगलियाँ करते हैं उनसे भी वह कहना चाहती है कि यह सब करके भी तुम कुछ दिन मज़े में गुज़ार सकते हो सारी ज़िंदगी नहीं....।

आपका हक़ मारने वाले हर जगह मिलेंगे। लेकिन कोई आपके कॅरियर से खेल सकता है, क़िस्मत से नहीं...

हम हमेशा कहते हैं कि सिक्के की तरह हर चीज़ के दो पहलू होते हैं। स्मृति ने पत्रकारिता के अनुभवों में कुछ अच्छे अनुभव भी लिखे हैं जो उसने महसूस किए हैं। किन्हीं सीनियर्स के द्वारा उसे दी गई मदद, उसे दी गई सलाह और नैतिक सपोर्ट को स्मृति भूली नहीं है.... जब उसने तय किया कि अब मैं बोलूँगी तो इसका मतलब यह नहीं था कि उसे कड़वा-कड़वा ही बोलना है। जलती आँखों पर ठंडी कोमल रूई के फाए से लगने वाले ठंडे स्पर्श भी उसने अपनी इस डायरी यानि विधा की पुस्तक में लिखे हैं। जो कहीं आश्वस्ति प्रदान करते हैं कि सब कुछ बुरा नहीं है, अच्छा भी होता है।

अमावस का अंधियारा सदा नहीं रहता उसके बाद चाँद के हर दिन बढ़ने के साथ पूरणमासी भी होती है...। लेकिन एक बात....जो लेखिका की सराहना के लिए बनती है, कि उन्होंने जो भी अनुभव लिखे हैं उन्होंने कई बार उनके मन को आक्रोशित किया होगा, लेकिन यह आक्रोश का तीखापन उसने शब्दों में नहीं आने दिया। सच लिखा है, साहस के साथ लिखा है, लेकिन सलीक़ा नहीं भूली। कुल मिलाकर 78 पेज की यह डायरी विधा की पुस्तक... अब मैं बोलूँगी, बहुत कुछ बोलती है सुनने वाला हृदय चाहिए।

शिवना प्रकाशन द्वारा प्रकाशित इस पुस्तक का आवरण बहुत सरल और सुंदर है। पत्रकारिता से जुड़े लोग भले ही इसे डरते हुए हाथ में थामेंगे। लेकिन जब वे ये पढ़ेंगे तो वे भी स्मृति की लेखनी के सलीके के क़ायल हो जाएँगे।

000

माचिस की तीली जैसी एक किताब

स्वरांगी साने

मेरे हाथ एक किताब आती है, किताब कहूँ या डायरी, चलिए डायरीनुमा किताब कह लेते हैं। उस किताब का शीर्षक है- 'अब मैं बोलूँगी'। यह शीर्षक धमकी है या सूचना, इससे अनजान होकर मैं कुछ पन्ने पलटती हूँ और लगता है यह तो एक विस्फ़ोटक किताब है। यह किताब माचिस की तीली की तरह है, जिसके भीतर बारूद का ढेर हो, वह इस किताब को पढ़ते ही फट सकता है। डरिए नहीं यह किताब कोई राजनीतिक या धार्मिक परिवेश पर नहीं लिखी गई है कि तुरंत फतवे जारी कर, इस पर रोक लगा दी जाए। यह किताब मीडिया जगत् की सच्चाई को बयाँ करती है। बीते लगभग एक दशक में मीडिया जिस तेज़ी से कॉरपोरेट जगत् में तब्दील हुआ है, उसकी हक़ीक़त को उजागर करती है। साहित्य समाज का दर्पण होता है, जैसी कोई बात इस किताब के बारे में कह सकते हैं। यह किताब अनगढ़ व्यक्तित्व का दर्पण है, कहीं-कहीं उसकी शैली भी उतनी ही अनगढ़ लगती है, पर इसलिए बहुत सरल और तरल भी है। किसी तरह का लाग-लपेट इसमें नहीं है। ऐसा लगता है दुनिया से बिरले होते जा रहे अनगढ़ लोगों की सामूहिक आत्मकथा ही इसमें एक व्यक्ति की क़लम से उभरी है।

शिवना प्रकाशन से यह किताब इसी साल आई है। इसकी लेखिका हैं- स्मृति आदित्य। जो लोग स्मृति को जानते हैं, वे जानते हैं कि स्मृति कितनी सरल और तरल है, वैसी ही उनकी लेखनी भी है। डायरी को जिस तरह पारदर्शी होना चाहिए, वैसी ही यह है। कई स्थानों पर व्यक्तियों के सही नाम छिपा दिए गए हैं। आंचलिकता का पुट इस किताब में है और जो उस अंचल के हैं, या मीडिया से जुड़े हैं वे बिना नाम के भी उन लोगों के वर्णन पढ़, उनके बारे में जान सकते हैं। बेख़ौफ़ होकर लिखा है तो नाम भी दे दिए जाते तो क्या ग़लत होता। किताब की पारदर्शिता और बढ़ती। डायरीनुमा किताब को ऐसा ही होना भी चाहिए कि जो सच है, उसे वैसे ही लिख दिया जाए। यह संकोच शायद लेखिका के व्यक्तित्व से आया है, जिसमें शालीनता की सीमा को लाँघा नहीं गया है।

लेखिका पर जिस तरह की तोहमतें लगीं और दूसरी ओर लगातार जिस तरह अवार्ड मिलते गए। यह विरोधाभास कॉरपोरेट जगत् के दोगलेपन को दिखाने के लिए काफ़ी है। लाड़ली मीडिया अवार्ड मिलने वाली लेखिका से संस्था में कहा जाता है कि उसे बेहतर काम करना नहीं आता तो कोई संवेदनशील उसे कैसे स्वीकारेगा। इस किताब को पढ़ते हुए यह बात रेखांकित हो जाती है कि आज के युग में संवेदनशील या आत्मसम्मान से जीने की चाह रखने वाले मिसफ़िट होते जा रहे हैं। संवेदनशील होना आज गुण के बजाय अवगुण बन गया है। पत्रकारिता जो पहले मिशन था, अब नौकरी भर बनकर रह गया है। आप नौकरी कर रहे हैं, हर महीने आपके खाते में वेतन जमा हो रहा है तो आप सारे अपमान, जिल्लत के ख़ून के घूँट पीकर नौकरी करते रहे। यदि आप ऐसा नहीं कर सकते तो बाहर का रास्ता दिखा दिया जाता है। इस डायरी की शुरुआत 26 जुलाई 2023 से होती है और दिसंबर तक के ब्यौरे इसमें दर्ज हैं। पतली-सी किताब है, कहने को आप एक बैठक में पढ़ सकते हैं पर यदि आप बिटवीन द लाइंस पढ़ने की चाह रखते हैं तो थोड़ा इत्मीनान से इसे पढ़िए।

यह डायरी केवल स्मृति की नहीं है। कई मीडियाकर्मियों को लग सकता है कि कमोबेश ये सब उनके साथ भी हुआ है या होता आ रहा है। पत्रकारिता के जिस जुनून को सिर पर बाँध उन्होंने क़दम रखा था वह सिर पर कफ़न बाँधने जैसा हो गया है। आज की पीढ़ी कॉरपोरेट युग की है। वह जानती है कि मीडिया में काम करना मतलब अख़बार के मालिक का चार भला करना और दो अपना भी कर लेना, उन्हें इस किताब में कुछ नहीं

मिलेगा। हो सकता है उन्हें यह भी लगेगा कि इसमें इतनी हाय-तौबा करने की क्या बात है। पर जिन्होंने सच के लिए लिखना स्वीकारा था और जिनका भ्रम तेजी से टूटा है उनके लिए यह उनकी अपनी अभिव्यक्ति है। वैसे अब यह कहना मुश्किल है कि आईने पर धूल है या लोगों के चेहरों पर ही, क्योंकि उन्हें आईना तो साफ़ ही दिख रहा है, शायद पहले से अधिक चमकदार और लुभावना भी। अख़बारों के पन्ने चिकने होने लगे हैं, चिकनी-चुपड़ी बातें करने वालों की बढ़ती तादाद की तरह। यह किताब आने वाले समय का दस्तावेज है जो बताएगी कि मीडिया का असली चेहरा धीरे-धीरे कितना दूषित होता गया। 'अब मैं बोलूँगी' किताब यदि 'हैश टैग मीटू' की तरह की लहर बन गया तो जाने कितनों के चेहरे और पर्दाफ़ाश हो सकते हैं। यह किताब पूछ रही है- क्या आपमें इतनी हिम्मत है, कि आप भी कहे कि अब तो मैं भी बोलूँ....

000

एक खरी और ज़रूरी किताब

शैली बक्षी खड़कोतकर

स्मृति आदित्य, मीडिया और साहित्य का सुपरिचित नाम, जब कहती हैं 'अब मैं बोलूँगी' तो सुनने वालों को सजग, सतर्क होकर सुनना होगा। शिवना प्रकाशन से प्रकाशित और हाल ही में पुस्तक मेले में विमोचित उनकी किताब 'अब मैं बोलूँगी' उन तमाम आवाज़ों की गूँज है, जो अव्वल उठाई नहीं जातीं या फिर दबा दी जाती हैं। इस किताब को पढ़ते हुए दुष्यंत कुमार बहुत याद आए-

तुम्हारे पाँवों के नीचे कोई ज़मीन नहीं,
कमाल ये है कि फिर भी तुम्हें यक़ीन नहीं।

मीठे लेकिन झूठे ख़्वाब से झकझोरकर उठाने का एहसास कड़वा हो सकता है, लेकिन उतना ही ज़रूरी भी। पत्रकारिता जगत् में लंबी और उल्लेखनीय पारी के बाद अपने अनुभवों को स्मृति ने इस किताब में सँजोया है। नहीं...शायद सँजोना कहना ग़लत होगा। सलीक़े से, करीने से सजा सँवार कर जो भी किया या कहा जाता है, उसमें कहीं बनावटीपन या दिखावा आ ही जाता है। जबकि यहाँ एक ईमानदार, मेहनती पत्रकार का सच्चा, अनगढ़, भावपूर्ण आवेग है, जो पाठक को बहा ले जाता है। इस किताब को पढ़ना साहित्य के राजपथ पर चलना नहीं है, उस पथरीली पगडंडी से गुज़रना है, जहाँ से हम में से बहुत से लोग गुज़रे हैं। उन खुरदुरे रास्तों के काँटों और पाँवों के छालों से कभी न कभी वास्ता पड़ा है।

डायरी विधा में लिखी यह किताब शुरू होती है, लगभग पंद्रह साल तन-मन से एक संस्थान से जुड़े रहने के बाद हुए मोहभंग और इस्तीफे से। फिर फ़्लैश बैक में पच्चीस साल पहले पत्रकारिता की शुरुआत के संघर्ष से होते हुए मीडिया संस्थानों के वर्क कल्चर पर आती है। उनके अनुभव इतने खरे और सच्चे हैं कि पाठक संवेदनाओं के साथ शुरू से अंत तक जुड़ा रहता है। जैसे 31 जुलाई वाले दिन, जो नौकरी का आख़िरी दिन था, वे लिखती हैं कि इतना हल्का महसूस कर रही थीं कि घर पहुँचकर 'कैडबरी गर्ल' की तरह नाची। इसमें पीड़ा और आक्रोश का जो अंडर करंट है, वह छू जाता है और पढ़ते हुए आँखों में अनायास नमी उतर आती है। बाई-लाइन और क्रेडिट के लिए जूझना, संपादकीय को हमेशा विज्ञापन और मार्केटिंग से कमतर आँकना, रिपोर्टिंग में आने वाले ख़तरे, इन स्थितियों का सामना लगभग सभी मीडियाकर्मी करते हैं। पर महत्त्वपूर्ण यह कि कार्यस्थल पर जिस प्रतिस्पर्धा, ईर्ष्या, असुरक्षा और शोषण की बात उठाई है, वह सिर्फ मीडिया तक सीमित नहीं है बल्कि प्राइवेट सेक्टर में काम करने वाले अमूमन हर शख़्स की कहानी है। इस स्तर पर किताब एक ऐसा आईना है, जिसमें बहुतों को अपने दर्द का अक्स नज़र आएगा। यहाँ यह डायरी निजी अनुभव होते हुए भी सार्वभौमिक हो जाती है। और बकौल स्मृति यही उनकी किताब का उद्देश्य भी है कि 'अपने हिस्से का प्रतिरोध दर्ज करना ही चाहिए और शुरुआत कहीं से तो हो।'

कामकाजी लड़कियाँ तो अधिकांश जगह उनके साथ रिलेट कर सकती हैं। वे लिखती हैं, 'हम छोटी जगह की लड़कियाँ संकोच और स्वाभिमान के मिश्रण से बनी होती हैं, जिन्हें अक्सर हमारा अहम मान लिया जाता है ...वास्तव में हम सही वक़्त पर सही क़दम न उठाने की पीड़ा से गुज़र रही होती हैं।' इससे उस समय और कुछ हद तक आज भी छोटे शहरों की अधिकांश लड़कियों के मन को कितना सही उकेरा है। पूरी किताब दरअसल एक सच्ची, संवेदनशील लड़की का अपने आत्मसम्मान को बचाते हुए संघर्ष का दस्तावेज़ है। गिरना, बिखरना, टूटना, फिर ख़ुद को समेटकर स्वाभिमान के साथ खड़ा होना, इसी जिजीविषा का नाम स्मृति है और यही जीवन है।

अंतिम पन्नों में वे कहती हैं, 'मैं हर हाल में ख़ुश रहने वाली लड़की बस इतना चाहती हूँ कि इस पेशे की 'नैतिकता' को यथासंभव बचाया जाए ताकि आने वाली पत्रकारीय नस्ल और फ़सल हरी रहे, लहलहाती रहे।' चूँकि स्मृति बच्चों के बीच सम्मानीय और प्रिय मीडिया शिक्षक हैं, उनकी यह चिंता वाजिब है। पत्रकारिता में आने वाली पीढ़ी के लिए यह एक ज़रूरी और मार्गदर्शक किताब हो सकती है।

जो बच्चे मीडिया की चकाचौंध से आकर्षित होकर इस क्षेत्र में आते हैं, उन्हें पहले इस तरह की किताबें पढ़ना चाहिए ताकि आने वाले संघर्षों के लिए तैयार होकर इस क्षेत्र में कदम रखें। बच्चे यह भी सीखेंगे कि मुश्किल वक़्त में परिवार और दोस्तों के अलावा कार्यक्षेत्र में कुछ भले लोग भी मिलते हैं, जिनसे दुनिया में उम्मीद कायम है।

स्मृति के इस साहस को सलाम, इस आशा के साथ कि इसे ख़ूब स्नेह मिले, समर्थन मिले और उनकी आवाज़ में और आवाजें शामिल हों।

फिर दुष्यंत कुमार के ही शब्दों में –

सिर्फ़ हंगामा खड़ा करना
मेरा मक़सद नहीं,
मेरी कोशिश है कि
ये सूरत बदलनी चाहिए।
मेरे सीने में नहीं तो तेरे सीने में सही,
हो कहीं भी आग,
लेकिन आग जलनी चाहिए।

000

केंद्र में पुस्तक

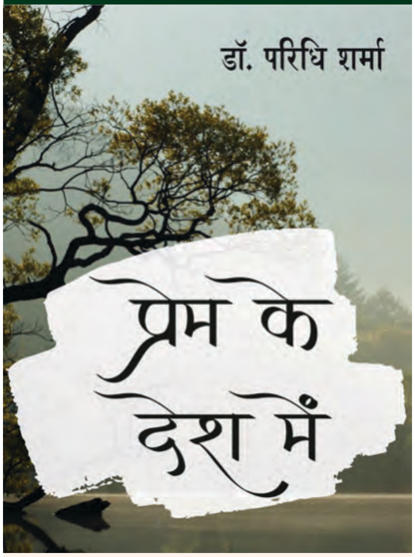

(कहानी संग्रह)

प्रेम के देश में

समीक्षक : दीपक गिरकर, रमेश शर्मा

लेखक : परिधि शर्मा

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545

मोबाइल- +91-9806162184

ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

दीपक गिरकर

28-सी, वैभव नगर, कनाडिया रोड,

इंदौर- 452016 मप्र

मोबाइल- 9425067036

ईमेल- deepakgirkar2016@gmail.com

रमेश शर्मा

92 श्रीकुंज, बोईरदादर,

रायगढ़, छत्तीसगढ़ 496001

मोबाइल- 7722975017

ईमेल- rameshbaba.2010@gmail.com

आंतरिक द्वंद्व और भावनात्मक संघर्ष को दर्शाती कहानियाँ

दीपक गिरकर

कथाकार डॉ. परिधि शर्मा की कहानियों का कई साहित्यिक पत्रिकाओं में निरंतर प्रकाशन हुआ है। "प्रेम के देश में" डॉ. परिधि शर्मा का पहला कहानी संग्रह है। डॉ. परिधि शर्मा ने इस संग्रह की कहानियों में नारी मन की व्यथा, समाज की सोच और परम्पराएँ, स्त्रियों की महत्त्वाकांक्षाएँ और उनकी ज़िम्मेदारियाँ, आंतरिक द्वंद्व और भावनात्मक संघर्ष, वृद्ध दंपत्ति के मनोस्थिति, स्त्रियों पर सामाजिक दबाव, परिवार के बीच की उलझनें और भावनात्मक बोझ, बुज़ुर्गों के प्रति सम्मान और प्रेम, जीवन में ज़िम्मेदारियों का बोझ, समाज की अपेक्षाओं और पारिवारिक दबाव, मानवीय संवेदना, प्रेम और त्याग की गहराई, सामाजिक और मानवीय त्रासदी, अनाथ बच्ची का द्वंद्व को अभिव्यक्त किया है। इस संग्रह की कहानियाँ ज़िंदगी की हक़ीक़त से रू-ब-रू करवाती है। इस कहानी संग्रह में छोटी-बड़ी 15 कहानियाँ संकलित की गई हैं।

"प्रेम के देश में" कहानी एक दिलचस्प आंतरिक द्वंद्व और भावनात्मक संघर्ष को दर्शाती है। रीमा, जो अपने जीवन के महत्त्वपूर्ण निर्णयों के बीच एक भारी मानसिक बोझ को महसूस कर रही है, वह सोच रही है कि क्या वह अपने माता-पिता की उम्मीदों को पूरा करे या अपने दिल की सुनकर अपने प्यार की राह पर चले। उसकी दुविधा और आत्मसंदेह को इस कथानक में बहुत अच्छी तरह से दर्शाया गया है। पिता का व्यावसायिक दृष्टिकोण और माता का अधिक सजीव और संवेदनशील दृष्टिकोण दोनों के बीच संतुलन बनाना एक कठिन कार्य है। यह तथ्य कि रीमा को अपने माता-पिता, ख़ासकर पिता के नज़रिए से जीने की बजाय अपने व्यक्तिगत इच्छाओं को आगे बढ़ाने के बारे में सोचना है, बहुत ही दिलचस्प है। वहीं, शशि बुआ की शादी का संदर्भ यह बताता है कि कभी-कभी परिवार अपनी पारंपरिक सोच से बाहर जाकर भी निर्णय लेते हैं। रीमा के मन में प्रेम, परिवार और अपने कर्त्तव्यों के बीच उभरता द्वंद्व वास्तव में जीवन के उस समय का प्रतीक है जब हमें अपने व्यक्तिगत इच्छाओं और परिवार के रिश्तों के बीच संतुलन बनाना होता है। उसकी यह सोच कि वह "प्यार की अँगूठी" को कभी द्वंद्व के जुए में नहीं हारने देगी, यह उस मानसिक दृढ़ता को दर्शाता है जो वह अपनी भावनाओं और इच्छाओं के प्रति बनाए रखना चाहती है।

"आर्थिक सर्वेक्षण" एक व्यंग्य कथा है। सरकारी योजनाओं का फायदा उठाने के लिए गाँव के लोग अपने आप को सरकारी अधिकारियों के सामने ग़रीब के रूप में प्रस्तुत करते हैं। रतन माँझी का उदाहरण दिलचस्प है, जहाँ उनके पास कई वाहन और खेत हैं, लेकिन फिर भी उनका नाम ग़रीबी रेखा के नीचे की लिस्ट में है। यह दिखाता है कि कभी-कभी संपत्ति की वास्तविक स्थिति और धन की सही स्थिति का आकलन सरकार के सर्वेक्षणों और मानकों द्वारा ठीक से नहीं किया जाता। ज़मींदार संपन्न होने के बावजूद, ज़मींदार का लड़का सरकारी योजना का फ़ायदा उठाना चाहता है और अपनी पत्नी का अलग से कार्ड बनवाना चाहता है।

"उम्मीद" कहानी एक वृद्ध दंपत्ति के मनोस्थिति का एक बहुत ही संवेदनशील चित्रण करती है, जो अपने बच्चों का इंतज़ार करते हुए समय बिता रहे हैं। यह अकेलेपन और बच्चों से बिछड़े होने की गहरी भावना का अहसास कराती है। घर के हर कोने में उन ख़ुशियों की गूँज थी, जो कभी बच्चों के साथ बसी हुई थी। अब घर में चुप्प है, बस दीवारों पर छाया है उनकी पुरानी यादों की। अब उनके जीवन के रंग जैसे फीके पड़ गए थे। हालाँकि वे जान रहे थे कि उनके बच्चे अपने जीवन में व्यस्त थे और शायद कभी नहीं लौटेंगे, फिर भी वे उम्मीद का दीपक जलाए रखते। यह केवल एक उम्मीद नहीं, बल्कि उस प्यार की जीवित परिभाषा थी, जो उन्होंने अपनी संतान के लिए दी थी और जो अब भी उनके दिलों में मौजूद था।

"तोहफा" कहानी एक सामाजिक और मानवीय त्रासदी को उजागर करती है, जिसमें बबली नामक एक बच्ची और उसके जैसे अन्य बच्चे अपने अधिकारों और सुरक्षा की घेराबंदी के

बावजूद ख़तरों का सामना कर रहे हैं। यह कहानी न केवल पर्यावरणीय संकट, बल्कि बच्चों के जीवन के प्रति समाज की असंवेदनशीलता को भी सामने लाती है। बबली का दोष केवल इतना था कि उसने एक असुरक्षित मैदान में खेलने का प्रयास किया, जिसमें ख़तरनाक गर्म राख बिछी हुई थी। यह संकेत करता है कि बच्चों का जीवन, विशेष रूप से उन स्थानों पर जहाँ समाज और सरकार की ओर से कोई सुरक्षा नहीं दी जाती, कितनी कठिनाइयों से भरा हुआ है। बबली का "दोष" यह था कि उसने एक सामान्य बच्चे की तरह खेलने की कोशिश की, लेकिन उसे इस दुनिया में खेलने की अनुमति नहीं थी, जहाँ उसे ख़तरे का सामना करना पड़ा। छत्तीसगढ़ के औद्योगिक नगरों का वर्णन जो वहाँ के कारखानों और उनके मालिकों के ग़ैरक़ानूनी रवैया को दिखाता है, यह स्पष्ट करता है कि उद्योगों के लिए मुनाफ़ा सबसे अहम है, चाहे इसके कारण वहाँ रहने वाले बच्चों और परिवारों की जान को ख़तरा हो। गर्म राख का डंपिंग और बच्चों के खेलने की जगह का छीन लिया जाना, यह समाज की असंवेदनशीलता और इस व्यवस्था की विफलता को उजागर करता है। जहाँ जीवन को व्यापारिक दृष्टिकोण से देखा जाता है और जहाँ बबली जैसी मासूम बच्ची की जान की कोई कीमत नहीं होती। "क्योंकि यहाँ दोषी वही होता है जो सज़ा पाता है," यह वाक्य समाज के उस दोगले तर्क को बताता है, जिसमें उस हादसे के लिए दोषी बबली को ठहराया जाएगा, क्योंकि उसने उस मैदान में खेलते वक़्त ख़ुद को ख़तरे में डाला। समाज, जो ख़ुद इस असुरक्षित माहौल को बनाए रखने में ज़िम्मेदार है, वह इस त्रासदी के लिए किसी और को ज़िम्मेदार ठहराएगा। यह एक व्यंग्यपूर्ण टिप्पणी है जो इस तथ्य को उजागर करती है कि समाज ख़ुद को अपनी असंवेदनशीलता और अज्ञानता के लिए कभी ज़िम्मेदार नहीं ठहराता, बल्कि अपने द्वारा पैदा की गई समस्याओं के लिए पीड़ितों को दोषी ठहराता है। यह कहानी सिस्टम की विफलता को दिखाती है, जो न केवल पर्यावरण की रक्षा करने में नाकाम है, बल्कि बच्चों के अधिकारों और उनके जीवन की सुरक्षा सुनिश्चित करने में भी विफल रहता है। यह संकेत देता है कि औद्योगिक क्षेत्र और उनके कारखानें बच्चों के जीवन के लिए ख़तरे का स्रोत बन गए हैं और समाज का ध्यान इस ओर नहीं जाता।

"नीला आसमान" एक अद्भुत कहानी है जो न केवल किसान के जीवन की कठिनाइयों को दर्शाती है, बल्कि मानवीय संवेदनाओं, प्रेम और त्याग की गहराई को भी उजागर करती है। "मोहन बाबू का स्कूटर" कहानी एक व्यक्ति की जीवन की कठिनाइयों और उसकी इच्छाओं के बीच संघर्ष को दर्शाती है। मोहन बाबू, जिनका जीवन गाँव में बीत रहा है और जिनके पास एक बड़ा परिवार होने के बावजूद वह अकेले हैं, उनकी इच्छाएँ धीरे-धीरे न पूरी होने वाली चीज़ों में बदल रही हैं। मोहन बाबू के पास एक बड़ा परिवार होने के बावजूद, वह अकेले रहते हैं, जो यह दिखाता है कि उनका परिवार शायद उनकी उम्मीदों और ज़रूरतों को पूरी तरह से समझ नहीं पा रहा है। इसके बजाय, वे अधिकतर अपने कर्त्तव्यों और ज़िम्मेदारियों में उलझे रहते हैं। उनके बड़े बेटे कमल का शहर में नौकरी करना और उसकी पत्नी के लिए मकान बनवाना, साथ ही बच्चों की फीस की चिंता, मोहन बाबू की इच्छाओं को पीछे धकेल देती है। मोहन बाबू ने अपने कामकाजी जीवन में बहुत कुछ जमा किया था, जैसे कि मछलियाँ बेचकर तीस हज़ार रुपये, जो कि वे मज़दूरों को देने के लिए अपने बेटे को दे देते हैं। लेकिन मोहन बाबू की अपनी एक साधारण इच्छा थी - एक स्कूटर, जिससे वह अपने गाँव में घूम सकें। यह एक साधारण सी इच्छा थी, लेकिन वह इसे पूरा नहीं कर पा रहे थे। यह कहानी यह भी बताती है कि कैसे मोहन बाबू की इच्छा को पूरा करने के लिए उनके पास पर्याप्त साधन नहीं थे, जबकि उनका पूरा परिवार अपनी ज़रूरतों और इच्छाओं को प्राथमिकता दे रहा था। उनका एहसास यह था कि वे अपनी स्कूटर की इच्छा कभी पूरी नहीं कर पाएँगे, क्योंकि जीवन में जिम्मेदारियों का बोझ और परिवार की ज़रूरतें अधिक महत्त्वपूर्ण बन चुकी थीं।

"वजूद" कहानी एक गहरी भावनात्मक और मानसिक संघर्ष को दर्शाता है, जिसमें रोज़ा अपने जीवन की जटिलताओं और व्यक्तिगत पहचान के बारे में विचार कर रही है। यह कहानी उसकी भावनाओं, रिश्तों और ख़ुद से जुड़ी जड़ों की खोज को उजागर करती है। रोज़ा की कोयल से जुड़ी सोच उसके भीतर की उलझन को व्यक्त करती है। कोयल का घोंसले में अंडे छोड़ना, एक तरह से रोज़ा के अपने वजूद और पहचान से जुड़ी एक चिंता का प्रतीक बन जाता है। जैसे कोयल अपने अंडों को किसी और के घोंसले में छोड़ देती है, वैसे ही रोज़ा को लगता है कि उसकी अपनी पहचान कहीं खो गई है, और वह अपनी माँ और परिवार से संबंधों की तलाश कर रही है। यह उसे ग़ुस्से और रोष की भावना की ओर ले जाता है, क्योंकि वह अपने अस्तित्व पर सवाल उठा रही है। उस स्त्री की बात जो रोज़ा को अपनी माँ नहीं मानती थी, यह रोज़ा के जीवन में एक बड़ा आघात रहा होगा। वह स्त्री जिसने एक अनाथ बच्ची को गोद लिया, आज जीवित नहीं है और रोज़ा अब इस पर सोच रही है कि उस स्त्री में इतनी हिम्मत कहाँ से आई थी। यह रोज़ा के भीतर एक गहरी खाई की ओर इशारा करता है, जहाँ उसे प्यार, अपनापन और ख़ुद को स्वीकार किए जाने की तलाश है। रोज़ा का जीवन विभिन्न रिश्तों से भरा हुआ था, जिनमें नानी और दादी की नफ़रत, मिस रिया की बातें, और उसके पिता का प्यार शामिल था। यह सभी रिश्ते उसे असमंजस में डालते हैं। उसका सवाल यह है कि क्यों वह अपनी जड़ें और परिवार के बीच इस असहज स्थिति में फँसी हुई है। उसे लगता है कि उसे कभी भी पूरी तरह से स्वीकार नहीं किया गया, चाहे वह उसके जन्म से हो या गोद लेने के बाद। रोज़ा का ग़ुस्सा और उसकी आत्म-चिंतन की यात्रा यह बताती है कि वह अपने अस्तित्व को समझने की कोशिश कर रही है। उसे यह समझ में नहीं आता कि वह अपनी पहचान और परिवार के संबंधों को कैसे ढूँढ़े। उसकी

मनोदशा यह दर्शाती है कि वह अपनी जड़ों से जुड़ी हुई नहीं है और उसके जीवन में यह कमी उसे आंतरिक रूप से दर्द देती है। "एक छुटती मेट्रो, एक तस्वीर, एक लड़की", "एक नई रौशनी", "एक साधारण आदमी की मौत", "ख़त", "खोटे सिक्के", "डर के पुतले", "मनीराम की किस्सागोई", "स्वप्न टूटने की पूर्व सूचनाएँ" इत्यादि संवेदनशील और विचारणीय कहानियाँ हैं जो पाठकों को सोचने के लिए मजबूर करती हैं।

लेखिका ने इन कहानियों में भारतीय समाज के यथार्थवादी जीवन, आम आदमी का आत्मसंघर्ष, स्त्री संवेगों और मानवीय संवेदनाओं का अत्यंत बारीकी से और बहुत सुंदर चित्रण किया है। संग्रह की सभी कहानियाँ आंतरिक द्वंद्व और भावनात्मक संघर्ष को दर्शाती है। डॉ. परिधि शर्मा की कहानियों में हर जगह गहन मानवीय पक्षधरता है।

कथाकार ने कहानियों में घटनाक्रम से अधिक वहाँ पात्रों के मनोभावों और उनके अंदर चल रहे अंतर्द्वंद्वों को अभिव्यक्त किया है। लेखिका के कहानियों के पात्र अपने ही करीबी रिश्तों को परत दर परत बेपर्दा करते हैं। लेखिका जीवन की विसंगतियों और जीवन के कच्चे चिठ्ठों को उद्घाटित करने में सफल हुई है। आशा है कि डॉ. परिधि शर्मा के इस कहानी संग्रह का हिन्दी साहित्य जगत् में भरपूर स्वागत होगा।

000

सच्ची कहानियाँ

रमेश शर्मा

डॉ.परिधि शर्मा युवा कथा लेखिका हैं। इनकी कहानियाँ पूर्व में महत्त्वपूर्ण पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। ख़ास बात यह है कि शिवना प्रकाशन के शिवना नवलेखन पुरस्कार 2024 अंतर्गत परिधि के कहानी संग्रह "प्रेम के देश में" को निर्णायक मंडल ने अनुशंसित किया है और फिर उसका प्रकाशन हुआ है। निर्णायक मंडल की इस अनुशंसा के उपरान्त लेखिका को साहित्य जगत् में अलग से पहचान मिलनी शुरू हुई है। यह किसी भी रचनाकार के लिए उत्साहजनक बात होती है।

इस संग्रह में 15 कहानियाँ हैं जिनमें ज़्यादातर कहानियाँ साहित्य की स्तरीय पत्र-पत्रिकाओं में पूर्व प्रकाशित हैं। संग्रह में एक कहानी है "एक साधारण आदमी की मौत"। इस कहानी में छत्तीसगढ़ के जनजीवन का जीवंत चित्रण है। आज भी वहाँ की बड़ी आबादी सब्ज़ियों के लघु व्यापार में संलग्न है और इस लघु व्यापार में संलग्न लोग मुख्यत: श्रमिक वर्ग से आते हैं। छत्तीसगढ़ से गुज़रने वाली लोकल पैसेंजर गाड़ियों का उपयोग ये सब्जियों के परिवहन हेतु किया करते हैं। ये लोकल गाड़ियाँ इन श्रमिक वर्गों के लिए जीवन रेखा की तरह हैं जिनमें कोई संभ्रांत आदमी कभी बैठ जाए तो वह इन श्रमिकों के प्रति तिरस्कार का भाव व्यक्त करने से नहीं रह पाता। कहानी में वर्गभेद को लेकर एक महीन सी रेखा लेखिका ने खींचने की कोशिश की है।

मूलत: व्यक्ति अपने बचपन या किशोरावस्था में मानवीय संवेदनाओं से परिपूर्ण रहता है। इस कहानी में प्रशांत नामक युवक के चरित्र से भी लगता है कि कभी वह भी अपने बचपन और अपनी किशोरावस्था में मानवीय संवेदनाओं से परिपूर्ण रहा होगा पर जैसे-जैसे जीवन में वह आगे बढ़ता है, नौकरी करने के उपरांत सुख सुविधाओं से लैस होकर अपना जीवन जीने लगता है तो दूसरों के प्रति सोचने समझने, उनकी चिंता करने के लिए उसके जीवन में कोई जगह नहीं है। जीवन की आपाधापी में वह ख़ुद में ही सिमट कर अपना जीवन जीने लगता है। फिर अचानक माखन कुमार बारीक नामक एक साधारण से आदमी की मृत्यु के बाद, जिसका संबंध उसके बचपन और उसकी किशोरावस्था से है और जो उसके स्कूल के दिनों में उसके स्कूल का माली भी था, उसके भीतर लगभग सुप्त हो चुकी संवेदना अचानक उसे भीतर से कचोटने लगती है। अपनी नौकरी में व्यस्त रहते हुए भी बार-बार माखन कुमार बारिक की मौत उसे बेचैन करती है। इस बहाने यह कहानी मनुष्य के भीतर मरती हुई संवेदना के पुनरस्थापन की बात करती है।

सुख सुविधा से जीवन यापन करने वाले व्यक्ति के मन में भी दूसरों के प्रति संवेदना जैसे मानवीय मूल्यों के प्रति एक आस्था होनी चाहिए, इस कहानी को पढ़ने के बाद हमारे भीतर इस तरह के विचार उत्पन्न होते हैं। कहानी की भाषा और शिल्प की बुनावट सहज होते हुए भी कलात्मकता और सम्प्रेषण से परिपूर्ण है।

संग्रह की एक अन्य धारदार कहानी है नीला आसमान। यह कहानी निपट शहरीकरण की चपेट में आए एक संवेदनशील मनुष्य के आत्मरुदन की कहानी है। जीवन-स्मृतियों के माध्यम से मार्मिक रूप में अपनी पूरी संवेदना और बचपन की वास्तविकताओं से गुम्फित घटनाओं के माध्यम से यह कहानी उस आत्मरूदन को जिस तरह बयाँ करती है, वह उल्लेखनीय है। शहरीकरण और उद्योगों के चलते किसानों की जीवन-स्थितियों में आ रही गिरावट की ओर भी यह कहानी हल्के से संकेत करती हुई आगे बढ़ती है। इस कहानी में रिश्तों को पुन: पुन: टटोलने और उसे बचा लेने की एक मार्मिक अपील भी भीतर ही भीतर प्रतिध्वनित होती है।

कहानी के संवादों में कथाकार के लेखन का कलात्मक सामर्थ्य उभरकर सामने आता है। परिधि के पास लेखन की जो शैली है उसमें कला और संवेदना एक साथ घुलमिलकर आती हैं और पाठकों के अंतर्जगत में अतिरिक्त प्रभाव उत्पन्न करती हैं।

संग्रह की कहानी मोहन बाबू का स्कूटर परिवार, प्रकृति, पालतू जीव जंतु और मनुष्य के जीवन संघर्ष के आपसी रिश्तों की कहानी है। यह कहानी मनुष्य के अकेले हो जाने की कहानी है जो परिस्थिति जन्य है। अधूरी इच्छाएँ किन परिस्थितियों की वजह से अधूरी रह जाती हैं, परिवार किन परिस्थितियों में उलझा रहता है, पालतू जीव जंतु का साथ मनुष्य को किस तरह सम्बल देता है और मनुष्य उनसे किस तरह जुड़ा रहता है इन सारी घटनाओं को यह कहानी बड़े सुंदर और मार्मिक ढंग से सामने रखती है। प्रकृति से तारतम्यता का एक जीवंत चित्रण यहाँ लेखिका ने प्रस्तुत किया है।

कहानी का अंत थोड़ा उदास करता है पर यह उदासी इस कहानी को यथार्थ के करीब भी ले जाती है। मोहन बाबू की विशलिस्ट में स्कूटर का "आउट ऑफ स्टॉक" होना प्रतीकात्मक है, जो उनकी अधूरी इच्छाओं और भीतर की निराशा को दर्शाता है। कहानी और बेहतर हो सकती थी अगर मोहन बाबू की भीतरी दुनिया के मनोविज्ञान को थोड़ा और उभारा जाता। तब भी यह कहानी भावनात्मक रूप से समृद्ध और यथार्थवादी रचना है जो पारिवारिक संबंधों, सामाजिक बदलाव और बुज़ुर्गों की उपेक्षा जैसे गंभीर मुद्दों पर सोचने को मजबूर करती है।

संग्रह की एक अन्य कहानी 'मनीराम की किस्सागोई' संवेदना से संपृक्त कहानी है जो वर्तमान संदर्भों में राजनीतिक, सामाजिक एवं मनुष्य जीवन की भीतरी तहों में जाकर हस्तक्षेप करती हुई नज़र आती है। कहानी की डिटेलिंग इन संदर्भों को एक रोचक अंदाज़ में व्यक्त करती हुई आगे बढ़ती है। पठनीयता के लिहाज से भी यह कहानी पाठकों को अपने साथ बनाये रखने में कामयाब नज़र आती है।

परिधि की कहानी 'तोहफा' छत्तीसगढ़ में औद्योगिकरण से उपजी भीषण समस्याओं की ओर इशारा करती है। उद्योगों से निकले गर्म राख के निदान की ओर उद्योगों के मालिकों का कोई ध्यान नहीं रहता क्योंकि इसके समुचित निदान में बहुत अधिक ख़र्च होने की संभावना बनी रहती है। उद्योगों के मालिक गर्म राख को जहाँ जगह मिलती है वहीं डंफ कर देते हैं।

छत्तीसगढ़ में खेल के मैदान और किसानों की जमीनें भी इससे बर्बाद हो रही हैं क्योंकि वहाँ भी ज़ोर ज़बरदस्ती यह गर्म राख आए दिन डंफ कर दिया जाता है।

तोहफा कहानी में जन्म से अंधी एक लड़की बबली भी इसी गर्म राख से जलने का शिकार होती है। बच्चे मैदान में खेल रहे होते हैं। उनकी आवाज़ सुनकर जन्म से अंधी लड़की बबली भी एक लाठी के सहारे मैदान की तरफ बढ़ती है और गर्म राख से झुलस कर उसकी मृत्यु हो जाती है। इस मृत्यु पर नोटिस लेने वाला गाँव में कोई नहीं मिलता। उद्योग मालिकों के विरुद्ध कोई आवाज़ नहीं उठती। यहाँ तक कि लड़की के पिता की ओर से भी चुप्पी साध ली जाती है क्योंकि फेक्ट्री का मैनेजर लड़की के पिता के घर आकर अपने विरूद्ध बन रही सारी परिस्थितियों को पैसे के बल पर मैनेज कर लेता है। बाकी लोग सिर्फ खुसुर फुसुर करते हुए देखते रह जाते हैं।

यह कहानी उद्योगों से उपजी भीषण समस्या की ओर तो इशारा करती ही है साथ ही साथ जन्म से अंधी एक विकलांग लड़की के अस्तित्व की समाज द्वारा की गई उपेक्षा को भी सामने लाती है। उद्योगों द्वारा अवैध तरीक़े से खेल मैदान में डंफ किये गए गर्म राख में जलकर आठ साल की किसी अंधी लड़की के अस्वाभाविक मौत का जब समाज विरोध नहीं करता तब उसे संवेदनहीन समाज ही कहा जा सकता है। यह कहानी समाज की इस संवेदनहीनता को भी सामने लाकर एक प्रश्न खड़ा करती है।

संग्रह की एक बहुत अच्छी कहानी है उम्मीद। उम्मीद एक ऐसा शब्द है जो हमेशा जीवित रहता है। बच्चों के साथ रहते हुए माता पिता का समय बहुत अच्छी तरह से गुज़र जाता है, किंतु कालांतर में जब वे शादी ब्याह, नौकरी या अन्य वजहों से उनसे दूर चले जाते हैं तो उनका अकेलापन उन्हें उनकी स्मृति में बार बार ले जाता है। ज़मींदार और ज़मींदारनी भी ऐसे ही वृद्ध दंपत्ति हैं। उनकी तीन संतानों में लड़की की शादी हो जाती है और वह दूर चली जाती है। एक लड़के की मृत्यु हो जाती है और दूसरा लड़का सेना की नौकरी में चला जाता है। बच्चों की स्मृतियों में जीवन गुज़ारते हुए उनके दिन गुज़रते हैं। उन्हें न जाने क्यों लगता है कि उनके बच्चे एक दिन उनके पास लौट आएँगे। यह लौटना कितना सम्भव है यह कहा नहीं जा सकता पर उनके भीतर की उम्मीद उन्हें उनके बच्चों से जोड़े रखती है। यह एक मनोवैज्ञानिक कहानी है जो वृद्ध होते, अकेलापन झेलते दंपत्तियों की मन: स्थितियों को बयाँ करती है। कहानी भाषा शिल्प के ज़रिये भी बाँधे रखती है।

वजूद भी एक आकर्षक भाषा शिल्प की कहानी है। एक युवा होती किशोर लड़की जिसे एक माँ ने जन्म दिया पर पालन पोषण किया एक अन्य औरत ने, इस लड़की के भीतर माँ को लेकर और अपने वजूद को लेकर उठ रहे विभिन्न विचारों को कहानी में पढ़ते हुए हम एक ऐसी दुनिया के भीतर प्रवेश करते हैं जहाँ कई घटनाएँ एवं संवेदना की कई परतें हैं। किसी के भीतर उठ रहे विचारों को बहुत कलात्मक रूप में पढ़ना समझना हो तो इस कहानी को पढ़ा जाना ज़रूरी हो जाता है। यह एक बहुत सुंदर कहानी है।

'एक छुटती मेट्रो एक तस्वीर एक लड़की' भी संग्रह की एक ऐसी कहानी है जो युवक युवती के बीच अव्यक्त रूप में जन्म ले रहे प्रेम की सुनहरी परतों को खोलती है। यह प्रेम, संवादों और घटनाओं के जरिये मूर्त मान होता हुआ नज़र तो आता है पर मुकाम तक नहीं पहुँचता। प्रेम मुकाम तक न पहुँचे फिर भी लगे कि उसने पूर्णता को प्राप्त किया है तो यह बड़ी बात होती है। इसमें लेखक का सामर्थ्य होता है। यह भी बहुत सुंदर कहानी है जो अलग-अलग कौमों को प्रेम के ज़रिये जुड़े रहने का संदेश देती है।

संग्रह की शीर्षक कहानी 'प्रेम के देश में' एक ऐसी कहानी है जिसमें प्रेम एक तरफ है तो दूसरी तरफ जीवन की सुख सुविधाओं की साधन संपन्नता है। एक लड़की जिसने किसी से प्रेम किया हो तो वह निरा प्रेम को चुने या जीवन की भौतिक सुख सुविधाओं के लिए उस प्रेम का त्याग कर दे। कहानी में एक जबरदस्त अंतरद्वंद्व है जहाँ अंतत: प्रेम को चुने जाने का संदेश मिलता है।

संग्रह की अन्य कहानियाँ डर के पुतले, खोटे सिक्के, ख़त, स्वप्न टूटने की पूर्व सूचनाएँ इत्यादि भी पठनीय कहानियाँ हैं। ख़ास बात यह है कि परिधि की कहानियों के कथ्य कहीं से प्रायोजित नहीं लगते बल्कि उनमें आम जन जीवन की वास्तविक घटनाएँ बहुत स्वाभाविक रूप में विस्तार पाती हैं।

लेखिका का यह पहला संग्रह है इसलिए इसे ज़रूर पढ़ा जाना चाहिए और आशा की जानी चाहिए कि वे आगे और भी अच्छी कहानियाँ लिखेंगी।

000

पुस्तक समीक्षा

(कविता संग्रह)

बाकी बचे कुछ लोग

समीक्षक : राजेश सक्सेना

लेखक : अनिल करमेले

प्रकाशक : सेतु प्रकाशन

अनिल करमेले के कविता संग्रह "बाकी बचे कुछ लोग" की कविताएँ निरंतर अपने समय के सच पर जमे कपट के कवच को हस्तक्षेप की खरोंच से हटा कर साफ-साफ दिखाने की कोशिश करती हुई हैं, जहाँ वे अपनी भाषा को बचाते बेहद सावधानी भी बरतते हैं फलत: "भाषा की तमीज़" जैसी कविता पाठक के सामने आती है जिसमें वे भाषा के ज़रिये समाज में होने वाली घटनाओं के छुपे हुए सच पर शब्दों की मोहक व्याख्या करने वालों की नीयत पर प्रहार कर उनके प्रति सचेत करते हैं, जो आक्रोश को व्याख्या के माध्यम से कमज़ोर करते हैं, देखें - वे एक ऐसी भाषा का प्रयोग करते हैं / कि हम असमर्थ हो जाते हैं / उनकी नीयत का पता लगाने में / हम में से कुछ लोग डालते हैं / ख़ौफ़नाक तस्वीरों पर पर्दा और / करते हैं शब्दों की मोहक व्याख्याएँ / इस तरह वे हमारे ग़ुस्से में / लगा देते हैं सेंध।

जब धूमिल ने कहा था "कविता भाषा में आदमी होने की तमीज़ है" तो सम्भवत: वे यही कहना चाह रहे थे जिसे अनिल ने अपनी कविता में इंगित किया है !

समय को लेकर कवि ने अपनी चिंता ज़ाहिर करते हुए रोज़मर्रा में होने वाले हादसों और घटनाओं को लेकर "यह ऐसा समय नहीं " शीर्षक से एक कविता लिखी है जहाँ घरों में अकेली स्त्री की सुरक्षा को लेकर आशंका यह बताने की कोशिश की है कि "यह अंदेशों पर निश्चिंत होने का समय नहीं है"!

"सुखी आदमी" के बारे में लिखते हुए कवि ने सुखी आदमी की चालाकियों भरे तौर तरीक़ों और भाषा के बारे में लिखते हुए उधार शब्दों के आवरण को हटाने की कोशिश की है- उसके पास एक संभ्रांत नैतिकता थी / वह पाठ्य पुस्तकों और / जानकारियों से भरा हुआ था, / वहीं से उधार लिये शब्दों का / कवच पहनकर निकलता था / वह शहर में ! / जीवन में समेटी हुई चालाकियों से / वह बन गया था एक सुखी इंसान!

यहाँ कवि तंज़ के साथ सुखी आदमी के क्रिया कलाप और व्यवहार के बारे में जो व्यंग्य या तंज़ कस रहा है वह मारक है तीखा भी कि चालाकी से अपने को बचाकर रखना चुप्पी में अपना घर बना लेना सुखी आदमी के लक्षण है!

अख़बार के चौथे पेज पर कई तरह विज्ञापनों, निविदाओं के साथ गुमशुदा लोगों की तस्वीर को लेकर भी एक कविता इस संग्रह में है जिसमें कवि ने गुमशुदा तस्वीर को लेकर चिंता व्यक्त की है, मुझे लगता है यह कवि ने इस गुमशुदा व्यक्ति के बहाने उस आम व्यक्ति की बात की है जो पता नहीं कहाँ गुमशुदा है उसके ग़ायब हो जाने का मतलब पूरे समाज का ग़ायब होने जैसा है।

गाँव के लोहार भीमा के पसीने, मेहनत, ताक़त और साँसों की हँफनी के बहाने कवि ने अपने भीतर के लोहे की धमक सुनने की कोशिश "लोहे की धमक" नामक कविता में की है! इस कविता में जन संघर्ष, सरोकार और ग्राम्य सौंदर्य के सुंदर बिंब दिखाई देते हैं जिसमें आषाढ़, जेठ ॠतु है, प्रात: काल है, बीज हैं, धरती हैं, भट्टी में दहकते लाल अंगारे हैं जो जन चेतना और संघर्ष की बात करते हुए प्रेरित करते हैं! एक अन्य सुन्दर रूपक कवि ने इसमें पिरोया है जहाँ कवि मांसल सौंदर्य को एक व्यापक जन सरोकार की तरह रूपांकित करता है- भीमा घन चलाता / उसकी पत्नी पकड़ती / संडासी से लोहे का फाल / घन गिरता और पत्नी के स्तन / धरती की तरह काँप जाते / जैसे बीजों के लिये / उनमें भी उतर आता हो दूध।

इस संग्रह की शीर्षक कविता "बाकी बचे कुछ लोग" में कवि ने उन लोगों की आवाज़ उठाई है जो अभी तक अविजित हैं, अपराजित हैं और सत्ताओं के सामने तनकर खड़े होने का हौसला रखे हुए हैं, सत्ताएँ उनके हौसले को कुचलकर उन पर भी विजय पाने के जतन करती हैं, सत्ताएँ बैचैन हैं उनकी प्रश्नावलियों से, उनकी आँखों से, उनके प्रतिरोध से! सत्ताओं की तानाशाह वृत्ति ख़ुद की स्वीकार्यता के लिये संस्कृति के कुतर्क देती हैं लेकिन कवि यहाँ यह चिंता भी व्यक्त करता है कि इस सब को जानने वाले बाकि बचे लोग ही समय की उम्मीद के प्रहरी हैं, कवि की यह बात महत्त्वपूर्ण है और उन बचे लोगों का संबल भी है और एक मिसाल

राजेश सक्सेना
48- हरिओम विहार
उज्जैन मप्र 456010
मोबाइल- 7869408734
ईमेल- rajeshsaxena151062@gmail.com

भी है!

एक छोटी सी कविता "दु:ख" में कवि ने दु:ख की मात्रा से कविताओं की मात्रा कम होने की बात कही, फिर काफ़ी ग़ुस्से के बावजूद कविताओं की ज़्यादा रूमानियत की चिंता जाहिर की है, साथ ही हमारी बैचैनी की अपेक्षा कविताओं में कम दिखने की बात की है, यह कवि की चिंता और बैचेनी से उपजे अंतर्द्वंद्व की कविता है जिसमें एक तरह की खीझ भी है और कवि समाज के लिये उलाहना भी है जिसमें वह समाज में इतने दु:ख, बैचैनी और आक्रोश दिखने के बावजूद भी कविताओं में प्रकट न होने को लेकर स्वयं से भी और कवि जगत् से भी व्यक्त कर रहा है कि कविगण इन पर लिख नहीं रहे हैं- कितने दु:ख हैं जीवन में / और कितनी कम कविताएँ / कितना ग़ुस्सा है आसपास / और कितनी रुमानी है कविता / कितनी बैचेनी है / लगातार तुम्हें चबाती / लेकिन कविता में कितनी कम !

यह छोटी सी कविता बड़े सवालों को हमारे समक्ष विचार के लिये छोड़ती है कवि की खीझ और उलाहना ठीक भी है कि तमाम विदरूपताएँ हमें रोज़ चिढ़ाती हैं और हम मौन!

उपस्थित एक भावुक, संवेदनापरक और दार्शनिक कविता है जिसमें किसी प्रिय जन के न रहने पर उसकी उपस्थिति को लगातार महसूस किए जाने की अनेक उपमाएँ, बिम्ब हैं और दार्शनिक अंदाज़ के शिल्प की गठन है "किसी के जाने से / वह चला नहीं जाता / वह तुम्हारे साथ ही रहता है /वह तुम्हारी इन्द्रियों में है / वह रग-रग में बहता है /वह धीरज बँधाता हुआ /तुम्हारे भीतर पर्याप्त कैल्शियम की तरह मौजूद है।

मुझे लगता है यह कविता पिता को लेकर लिखी गईं है काफ़ी संवेदनशील कविता है और अपने अर्थ को ठीक तरह से पाती हुई पाठक के पास पहुँच बनाती है।

इस तरह जीवन शीर्षक कविता में कवि अपने पुराने समय की परेशान ज़िंदगी की तरफ नज़र डालता है जहाँ बोरा औढ़कर बरसात में चलना है तो, कहीं गोरसी की तपन है, कहीं गन्ने और खीरे का स्वाद कवि को एक रसमय जीवन की याद आती है और फिर एक रोमांटिक मोड़ पर जहाँ लाल स्वेटर पहने खिड़की पर साइकिल की घंटी का इंतज़ार करती एक लड़की याद आती है, और फिर कवि अपने वर्तमान में लौटकर अपने इस जीवन की यात्रा में आगे की योजना बनाता है, दरअसल यह कविता अतीत की अपनी स्थिति को दृष्टि में रखते हुए आगे बढ़ने का संदेश देती है जिसमें कवि भावुक यादें हैं यह वर्तमान से अतीत के बीच संतुलन बिंदु ढूँढ़ती हुई कविता भी है।

अपने प्रेम को सगर्व प्रस्तुत करती एक उदात्त और रस भीगी सार्थक कविता भी इस संग्रह में है जहाँ कवि ने प्रेम की अनेक ऊँचाईयों को पार करते दसों दिशाओं, सूरज, चाँद, धरती, आकाश, की यात्रा करते हुए अपने प्रेम को प्रकट करने का प्रयास किया है, लेकिन यह मुझे थोड़ी अतिश्योक्ति पूर्ण कविता लगी!

सपनों की लड़कियाँ, यह एक कविता है जो इस संग्रह में है इस कविता में उन लड़कियों के प्रति चिंता प्रकट की गई है जहाँ बर्तन माँजती हुई, वर की आकांक्षा में प्रार्थनारत, फ़िल्मी पत्रिकाएँ पढ़ती, या क़रीबी शहरों से नौकरी के लिए इंटरव्यू देकर लोकल ट्रेनों से वापिस घर लौटती लड़कियाँ हैं, कवि ने इन लड़कियों के बहाने समय के सामजिक सच को रखा है।

एक नई राह इस लम्बी कविता में कवि अपनी जीवन यात्रा के प्रस्थान बिंदु से चलते हुए जिन पड़ावों को पार करते आगे बढ़ा है, वे लगभग सबकी ज़िंदगी में कुछ भिन्न रूप में ही सही पर घटती हैं। लिहाजा यह हम सबकी कविता भी है इसके बिम्ब और पड़ावो में कुछ शिल्प कलात्मक और सुंदर हैं- हम उस जगह पैदा हुए / जहाँ पड़ोस से अंगार लेकर / चूल्हे जलाए जाते थे / जहाँ पर सूरज / औजार की नोक पर फूटता था / और धरती हरी हो जाती थी।

कुछ ऐसे यथार्थ भी इस कविता हैं जो सबने देखें या भोगे हैं जहाँ शहरों में रहने वाले रिश्तेदारों से कई बार निराशा या अपमानित महसूस किया गया।

"देवताओं को सोने दो" जैसी एक कविता इस संग्रह में संग्रहित है जिसमें प्रतिरोध और कटाक्ष न केवल धार्मिक मान्यताओं पर है बल्कि समकालीन सत्ता पर भी प्रत्यक्ष रूप से शक्ति के साथ किया गया है।

"सपनों के लिए" कविता में कवि ने प्रेम करने वालों को दुनिया से लड़कर नए रास्ते तलाशने का शगल करने और एक सम्मोहित कविता की तरह निरूपित किया है।

एक और कविता जिसका शीर्षक पाठक को लुभाता है वह है "ये धरती के आराम करने का समय है" यह कविता एक सुन्दर फेंटेसी रचते हुए त्रासदी के यथार्थ की तरफ ले जाती है जिसमें कवि धरती के आराम करने के समय को देख रहा है, इस भयंकर समय में जब धरती को हर तरफ से रोंदा जा रहा है, बुलडोज़रों से लेकर बमों, मिसाइलों तक, तब ऐसे में कवि अगर घबराई हुई धरती के आराम करने के समय की सोच रहा है तो यह बड़ी बात है एक कवि ही यह बात सोच सकता है। ऐसे में यह बात अंकित करना ज़रूरी है कि यही बाकी बचे लोग दुनिया की बेहतरी की सच्ची कामना करते हैं। इस तरह यह शीर्षक को भी सार्थकता प्रदान करती हुई कविता है, इस कविता की परिकल्पना जब यथार्थ के कठोर धरातल पर आती है जहाँ कवि एक स्त्री के प्रेम पत्र को पढ़ने से उसे मार देने वाले तत्वों की तरफ इशारा कर रहा है। यानी यह वक़्त प्रेम करने वालों के विरुद्ध एक त्रासद सच की तरह सामने लाता है और कवि इससे चिंतित है- मैं चाहता हूँ इस समय दुनिया के सारे काम रोक दिए जाएँ / यह धरती के आराम करने का समय है / जाने कितने जन्मों की प्रतीक्षा के बाद / अनंत काल को को लाँघता हुआ, मुझ तक पहुँचा है यह प्रेम पत्र।

पहले संग्रह के पर्याप्त अंतराल लम्बी प्रतीक्षा के बाद जिस परिपक्व प्रतिरोध और प्रतिबद्ध जनपक्षधरता के साथ इस संग्रह ने आमद की है, निश्चित ही वह इन कविताओं की सार्थक परिणिति को पाठकों तक फलिभूत होंगी इसके लिये कवि व सेतु प्रकाशन को बधाइयाँ!

000

पुस्तक समीक्षा

(कहानी संग्रह)

हाजरा का बुर्क़ा ढीला है

समीक्षक : दीपक गिरकर

लेखक : डॉ. तबस्सुम जहां

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545
मोबाइल- +91-9806162184
ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

"हाजरा का बुर्क़ा ढीला है" सुपरिचित कथाकार डॉ. तबस्सुम जहाँ का पहला कहानी संग्रह है। इस कहानी संग्रह में छोटी-बड़ी 12 कहानियाँ हैं। "अपने-अपने दायरे" कहानी में कथाकार ने मिसेज़ गिल के भीतर चल रही उथल-पुथल को बेहद संवेदनशीलता के साथ चित्रित किया है, जो उनके जटिल मानसिक और भावनात्मक संघर्षों को स्पष्ट रूप से उजागर करता है। मिसेज गिल का चरित्र विशेष रूप से दिल छूने वाला है। वह एक आदर्श अध्यापिका के रूप में प्रस्तुत की गई हैं, जो न केवल पुस्तक ज्ञान देने में दक्ष हैं, बल्कि जीवन के कठिन समय में भी अपने छात्रों के लिए मददगार साबित होती हैं। मिसेज गिल का सेवानिवृत्ति के बाद भी छात्रों के प्रति लगाव और उनकी आर्थिक सहायता करने की तत्परता यह दिखाती है कि एक सच्चे गुरु का कर्त्तव्य केवल पाठ्यक्रम तक सीमित नहीं होता, बल्कि वह जीवन के विभिन्न पहलुओं में भी अपने शिष्य का मार्गदर्शन करता है। उनका यह दृष्टिकोण इस बात को पुष्ट करता है कि गुरु का अर्थ केवल शैक्षिक ज्ञान देना नहीं होता, बल्कि कठिन समय में व्यक्तिगत रूप से मदद करना और शिष्य के जीवन को सँवारने में भूमिका निभाना भी उतना ही महत्त्वपूर्ण होता है। "मौत बेआवाज़ आती है" कहानी वास्तव में एक बहुत ही दुखद और महत्त्वपूर्ण घटना से प्रेरित है, जो कोरोना महामारी के दौरान मज़दूरों के पलायन की त्रासदी को उजागर करती है। यह घटना औरंगाबाद में घटी थी, जब मज़दूर थक-हार कर ट्रेन की पटरी पर सो गए थे और एक मालगाड़ी उन्हें रौंदते हुए चली गई थी। कहानी में यह घटनाएँ न केवल शारीरिक थकावट का प्रतीक हैं, बल्कि मानसिक और आर्थिक हताशा, घर लौटने की चाहत, और समाज द्वारा उपेक्षित और त्रासदी में पड़े मज़दूरों के संघर्षों का भी प्रतीक हैं। कथाकार ने मज़दूरों के हर पहलू को ध्यान से चित्रित किया है- उनकी मानसिक स्थिति, शारीरिक थकान, पारिवारिक ज़िम्मेदारियाँ और आर्थिक तंगी, जो उन्हें इस हद तक निराश और थका देती है कि वे अपनी जान तक जोखिम में डालने को तैयार हो जाते हैं। महामारी के दौरान ये मज़दूर बिना किसी व्यवस्था या मदद के अपने घर वापस लौटने की कोशिश कर रहे थे, लेकिन उनकी दर्दनाक स्थिति को किसी ने गंभीरता से नहीं लिया।

"गुरु दक्षिणा" नमिता की मानसिक और शारीरिक संघर्ष की कहानी है। यह न केवल व्यक्तिगत समस्याओं से जूझने की कहानी है, बल्कि पेशेवर दायित्वों, सामाजिक दबावों और मानसिक तनाव के बीच संतुलन बनाने की भी एक कड़ी चुनौती है। शादी के आठ साल बाद गर्भवती होने की पीड़ा, बढ़ती उम्र में संतान की इच्छा और उसकी मुश्किलें, शोध कार्य की चुनौतीपूर्ण ज़िम्मेदारियाँ, और विभागीय अपेक्षाएँ-ये सभी समस्याएँ नमिता की ताक़त और सहनशक्ति को परखती हैं। शोध समन्वयक और विभागाध्यक्ष लता ज्ञानेश्वरी का दो टूक जवाब, "अपनी व्यक्तिगत समस्याओं को अपने तक रखना" यह भी एक तरह से यह समझाता है कि समाज और पेशेवर माहौल में अक्सर व्यक्तिगत संघर्षों की कोई जगह नहीं होती। इसके बावजूद, नमिता अपने कर्त्तव्यों और ज़िम्मेदारियों को निभाने में जुटी रहती है। कई घंटों तक खड़े रहने से गर्भपात जैसी स्थिति उत्पन्न होना, मानसिक तनाव और उसके बाद अगले दिन रिपोर्ट जमा करने के दबाव में ख़ुद को ढूँढ़ने की कोशिश, यह सब नमिता के साहस और दृढ़ता का प्रतीक है। इसके बावजूद, वह अपने हृदय का विस्तार कर, लता ज्ञानेश्वरी को हार्ट अटेक आने पर उनकी सहायता करती है। यह दर्शाता है कि लता ज्ञानेश्वरी ने नमिता को इतनी अधिक तकलीफ़ देने के बावजूद नमिता को मानवता का गहरा अहसास है। इंसानियत के रूप में नमिता ने अपनी गुरु लता ज्ञानेश्वरी की समय पर सहायता कर सच्ची गुरु दक्षिणा दी। इस कहानी में नमिता का जीवन संघर्ष, उसकी ताक़त और उसके संवेदनशील व्यक्तित्व का एक अद्भुत चित्रण किया गया है। "सच्चा भक्त" कहानी न केवल धर्मनिरपेक्षता और भाईचारे की मिसाल पेश करती है, बल्कि यह भी बताती है कि सच्चे भक्त अपने कर्मों और आस्थाओं से समाज में एकता और प्रेम की भावना फैलाते हैं। पंडित जी और जुम्मन मियाँ की परस्पर समझ और रिश्ते का गहरा संदेश है कि धर्म और आस्था से परे इंसानियत और एक दूसरे के प्रति सच्चे भावनाओं

दीपक गिरकर
28-सी, वैभव नगर, कनाडिया रोड,
इंदौर- 452016 मप्र
मोबाइल- 9425067036
ईमेल- deepakgirkar2016@gmail.com

का आदान-प्रदान कितना अहम होता है। पंडित जी और जुम्मन मियाँ के बीच का प्यार और श्रद्धा, किसी धार्मिक या सांप्रदायिक सीमा से परे था। पंडित जी के परिवार के लोगों का जुम्मन मियाँ की बिटिया के गौने की ख़ुशी में शरीक होना और जुम्मन मियाँ के परिवार के लोगों का पंडित जी के शोक में शामिल होना यह सिद्ध करता है कि जब दिलों में सच्ची श्रद्धा और प्रेम होता है, तो संप्रदाय और धर्म की दीवारें धुँधली पड़ जाती हैं। यह कहानी न केवल धार्मिक एकता का प्रतीक है, बल्कि यह हमें यह भी सिखाती है कि सही आस्था, प्रेम और इंसानियत से ही हम समाज में सामंजस्य और सद्भावना स्थापित कर सकते हैं।

"हाजरा का बुर्क़ा ढीला है" कहानी एक लड़की हाजरा के माध्यम से बुर्क़े, समाज, और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अंतर्द्वंद्व को दर्शाती है। हाजरा की कहानी पर विचार करते हुए यह पता चलता है कि किसी भी व्यक्ति का बाहरी रूप, चाहे वह बुर्क़े में हो या किसी अन्य परिधान में, उसकी असली ताक़त या कमजोरी का निर्धारण नहीं कर सकता। हाजरा का बुर्क़ा उसके आत्मविश्वास और उसकी पहचान का हिस्सा बन गया था और वह इसके भीतर सुरक्षित महसूस करती थी। यह कहानी उस सामाजिक सोच को चुनौती देती है, जो यह मानती है कि किसी लड़की के पहनावे के कारण उसके व्यक्तित्व, प्रेम या स्वतंत्रता पर कोई असर पड़ता है। यह कहानी हमें यह सोचने पर मजबूर कराती है कि समाज की धारणाओं और अपने व्यक्तिगत अनुभवों के बीच एक अंतर हो सकता है। हाजरा का जीवन इस विचार को साकार करता है कि हर व्यक्ति के पास अपनी पहचान बनाने और अपने जीवन के निर्णय ख़ुद लेने का अधिकार है, चाहे वह किसी भी परिधान में क्यों न हो। हाजरा का दुबली-पतली, मुस्लिम होते हुए एक हिंदू लड़के से शादी करना, वास्तव में कहानी का एक अहम मोड़ है। यह सिर्फ उसकी व्यक्तिगत स्वतंत्रता और साहस का प्रतीक नहीं है, बल्कि यह समाज की संकीर्ण धारणाओं और वर्जनाओं को भी चुनौती देता है। हाजरा ने अपने परिवार और समाज के बंधनों को तोड़ते हुए अपने दिल की सुनने का फ़ैसला किया। यह उसके लिए एक साहसिक क़दम था, क्योंकि वह न केवल अपने धर्म और समाज की परंपराओं से जूझ रही थी, बल्कि उन स्टीरियोटाइप्स और विरोधों को भी पार कर रही थी, जो उसे अपनी ज़िंदगी जीने से रोकते थे। हाजरा का एक हिन्दू लड़के से शादी करने वाला क़दम एक महत्त्वपूर्ण संदेश देता है- प्यार, स्वतंत्रता और पहचान किसी भी बाहरी बंधन से मुक्त हो सकती है, चाहे वह धर्म, परंपरा, या समाज की सोच हो। उसका यह साहस यह दर्शाता है कि इंसान को अपने जीवन के फैसले ख़ुद लेने का अधिकार होना चाहिए, और जब यह फैसले दिल से होते हैं, तो वे किसी भी सामाजिक मान्यता से बड़े होते हैं। इसके साथ ही, हाजरा ने यह साबित किया कि समाज की परंपराओं और मान्यताओं को चुनौती देना कोई आसान काम नहीं है, लेकिन यह ज़रूरी भी है यदि हम चाहते हैं कि हर व्यक्ति अपनी ज़िंदगी को बिना किसी डर और संकोच के जी सके। उसका हिंदू लड़के से शादी करना इस बात का प्रतीक है कि वह अब अपनी पहचान और अपने रिश्तों को अपनी शर्तों पर जी रही है, बिना किसी बाहरी दबाव के। लेखिका ने पात्रों की मनोस्थिति को अच्छे से उकेरा है, जिससे पाठक उनके साथ जुड़ाव महसूस करता है। कुल मिलाकर यह एक संवेदनशील और विचारोत्तेजक कहानी है। "झूठा ईश्वर" एक अलग कलेवर की सशक्त कहानी है। यह कहानी गुरु-शिष्य संबंध की एक अद्वितीय मिसाल प्रस्तुत करती है, जो न केवल अध्यात्मिक प्रेम और समर्पण की महिमा को उजागर करती है, बल्कि यह भी बताती है कि सच्चे प्रेम में आत्मीयता, निस्वार्थता और सम्मान की कोई सीमा नहीं होती। गुरु का अपने शिष्य के प्रति अगाध प्रेम इस बात को साबित करता है कि किसी भी रिश्ते में, चाहे वह गुरु-शिष्य का हो या किसी अन्य प्रकार का, सच्चा प्रेम कभी भी स्वार्थ या प्रतिष्ठा से परे होता है। गुरु ने अपने शिष्य सदानंद के प्रति इतना गहरा प्रेम दिखाया कि वे अपने सम्मान, अपनी प्रतिष्ठा, और सभी सांसारिक सीमाओं को भूलकर उसे केवल ईश्वर के रूप में देखने लगे। इस कहानी में गुरु का शिष्य के प्रति प्रेम शाश्वत और अलौकिक था। वह गुरु जो हमेशा शिष्य को शिक्षा देने के लिए उपस्थित रहते थे, अब शिष्य को एक पवित्र और दिव्य रूप में देखने लगे थे। गुरु के लिए उनका शिष्य अब एक साधारण इंसान नहीं, बल्कि ईश्वर की स्वीकृति और आशीर्वाद का रूप बन चुका था। यह कहानी न केवल गुरु-शिष्य प्रेम की महिमा को दर्शाती है, बल्कि यह भी सिखाती है कि सच्चा प्रेम और समर्पण किसी भी रिश्ते में अडिग होना चाहिए। गुरु द्वारा शिष्य को ईश्वर के रूप में देखना यह बताता है कि प्रेम में केवल विश्वास और सच्चाई होनी चाहिए, और यही वह दिव्यता है, जो गुरु और शिष्य के रिश्ते को सर्वोत्तम बनाती है।

"भूसे की सुई" कहानी में कथाकार ने शोभा की संवेदनाओं को स्वाभाविक रूप से निरूपित किया है। "भूख बनाम साहित्य" कोरोना काल पर एक व्यंग्य कथा है। "पानी और आसमान" एक प्रतीकात्मक कहानी है। "प्रेम और समर्पण" सोशल मीडिया पर हुए प्रेम की दास्ताँ है। "कला और भीख" कहानी संदेश देती है कि यदि हमारे पास किसी तरह की कला है तो हमें भीख नहीं माँगनी चाहिए। हमें अपनी कला को उपयोग में लाकर अपना गुज़र-बसर करना चाहिए। "शहर वापसी" कहानी में लॉकडाउन में मज़दूरों की त्रासदी का चित्रण है।

संग्रह की सभी कहानियाँ अत्यंत गहरी और विचारशील हैं जो संवेदनाओं से लबरेज़ हैं। डॉ. तबस्सुम जहाँ की कहानियाँ सौहार्द, प्रेम और मूल्यों का संदेश देती हैं, जो समाज में समरसता स्थापित करने में मदद करती हैं। ये कहानियाँ हमारे सामाजिक और सांस्कृतिक धारा को प्रभावित करती हैं। ये कहानियाँ समाज में सामंजस्य और सौहार्द को बढ़ावा देती हैं। आशा है कि डॉ. तबस्सुम जहाँ के इस कहानी संग्रह का हिन्दी साहित्य जगत् में भरपूर स्वागत होगा।

000

पुस्तक समीक्षा

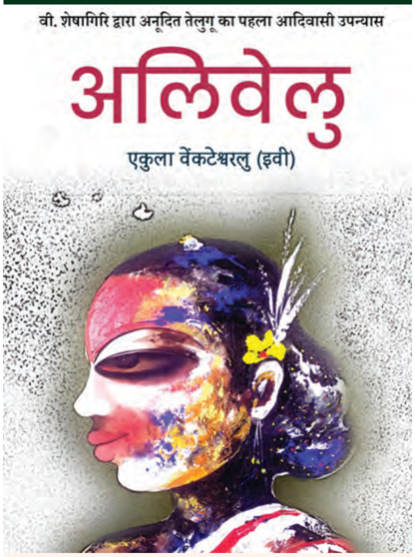

(उपन्यास)

अलिवेलु

समीक्षक : हरि राम मीणा
लेखक : एकुला वेंकटेश्वरलु
प्रकाशक : प्यारा केरकट्टा फाउण्डेशन, राँची

हरी राम मीणा
31, शिवशक्ति नगर, किंग्स रोड
अजमेर हाइवे
जयपुर 302019, राजस्थान
मोबाइल- 9414124101
ईमेल- hrmbms@yahoo.co.in

आदिवासी साहित्य को लेकर अश्विनी पंकज और वंदना टेटे महत्त्वपूर्ण काम कर रहे हैं। इनके प्रयासों से प्यारा केरकट्टा फाउण्डेशन प्रकाशन द्वारा अनेक विरली पुस्तकें हमें पढ़ने को मिली हैं। इन्हीं में से सन 2024 में तेलगू से हिन्दी में अनूदित 'अलिवेलु' उपन्यास है। यह तेलगू भाषा का पहला आदिवासी उपन्यास है जो सन 2011 में 'एन्नेल नव्वु' (चाँदनी हँसी) शीर्षक से प्रकाशित हुआ। इसे एकुला वेंकटेश्वरलु ने लिखा। इसी का हिन्दी अनुवाद 'अलिवेलु' नाम से हिन्दी इसका हिन्दी अनुवाद वी. शेषगिरी द्वारा किया गया है।

इस कृति में यानादि आदिम समुदाय के जीवन का चित्रण किया गया है। यानादि (येनाडी, यानाडी) भारत की अनुसूचित जनजातियों में से एक हैं। इस समुदाय का निवास आंध्रप्रदेश के नेल्लोर, चित्तूर और प्रकाशम ज़िलों में है। यह समुदाय तीन उपसमूहों में विभाजित है- मांची यानादि, अदावी यानादि और चल्ला यानादि। यानादि आंध्रप्रदेश का सबसे बड़ा जनजातीय समूह है। एडगर थर्स्टन जैसे नृवैज्ञानिकों ने यानादि को संस्कृत के अनादि शब्द से जोड़कर देखा है, जिसका अर्थ है अनादि काल जिस मानव समुदाय का अस्तित्व रहता आया हो।

वेंकटेश्वरलु ने अपने यानादी समुदाय की तकलीफ़ों, ख़ासकर वर्चस्ववादी वर्ग द्वारा उनके दमन, दलन, शोषण की वज़ह से उनकी अस्मिता के हरण के भोगे हुए सच को इस पुस्तक में उजागर किया है। वह ख़ुद इस समुदाय से हैं। हिन्दी संस्करण के लिए अपनी बात कहते हुए वे लिखते हैं- 'मुस्कानें बिखरती हैं हम आदिवासियों की अनादि काल के यानादियों की... दिन बदले, राजा बदले, शासन का तरीक़ा बदला पर जो नहीं बदला वह है भूख की ज्वाला...(यह) महज़ एक उपन्यास नहीं, मासूम भूख की ज्वाला और संघर्ष है।' (पृष्ठ-13) यानादि जैसा स्वाभिमानी, स्वायत्त एवं सहज समाज 'चाँदनी मुस्कानें' स्वरूप प्रकृति की भाव-भंगिमाओं के बीच जीवन को जीने का सौंदर्य बोध अपनाता रहा, उसकी दुर्दशा की एक मात्र वज़ह यह भेदभाव वाला समाज है। इससे जब तक मुक्ति नहीं मिलेगी तब तक ऐसे आदिम समुदायों के भविष्य का उजला पक्ष सामने नहीं आएगा और तब तक उनके सपने साकार नहीं हो सकेंगे जिनका वर्णन लेखक ने इस कृति के अंत में निम्न प्रकार से किया है-

'मुझे चाँद पसंद है, मुझे वह चाँदनी पसंद है
जो आकाश में फलती है
मुझे चाँदनी जैसी स्वच्छ मुस्कानें बहुत पसंद हैं
मुझे ठंडे और शीतल दिलों वाले लोग पसंद हैं
ऐसे दिलों से भरा हुआ एक अच्छा समाज
मुझे वह समाज बहुत पसंद है।' (कृति का अंतिम पृष्ठ)

सपने अपनी जगह होते हैं, ज़मीनी हक़ीकत अपने नाज़-नखरे दिखाती है। 'इतिहास इसी तरह चलता रहा है। एक का अभाव दूसरे के लिए लाभ होता है। एक की कमज़ोरी दूसरे को बलवान बनाती है। किसी की भूख दूसरे की समृद्धि।' (पृष्ठ-43) लेखक का यह पर्यवेक्षण कृति की एक प्रमुख पात्र मंगम्मा के मन का भाव बन जाता है।

उपन्यास की कथा मंगम्मा, उसके दूसरे पति पोलय्या, मंगम्मा की बेटी अलिवेलु और उसके पुत्र चेंचुलू के इर्द-गिर्द घूमती चलती है। अलिवेलु तम्बाकू के कारखाने में दिहाड़ी मज़दूरी करती है। वहाँ के सुपरवाइज़र कोटिरेड्डी की बुरी नज़र उसके ऊपर थी। उसने अलिवेलु का यौन शोषण करना आरंभ कर दिया। अलिवेलु उसे अपना पति मानने का सपना देखती थी। उसे यह पता नहीं था कि उसकी माँ मंगम्मा को भी इसी तरह एक उच्चकुलीन व्यक्ति भावनारायण ने छला था जिसके साथ संबंध से अलिवेलु का जन्म हुआ। जस तस अलिवेलु का विवाह मुनय्या नामक युवक के साथ कर दिया गया लेकिन अलिवेलु अभी भी कोटि रेड्डी के जाल में फँसी ही थी। इस संदर्भ में लेखक का मत है कि 'चाहे झोंपड़ी में रहने वाली औरत हो या महलों में, उसका शोषण करने वाला हमेशा पुरुष ही होता है।' (पृष्ठ-20-21) पुस्तक में सवर्णवाद के साथ पुरुष वर्चस्व को भी निशाने पर लिया गया है। दलित वर्ग के साथ किये जाते

रहे छुआछूत के मुद्दा को भी यहाँ उजागर किया गया है। गाँव का कुआँ सार्वजनिक है 'लेकिन माला तथा मादिगा (दलितों की दो जातियाँ) को उस कुएँ से पानी निकालने का अधिकार नहीं है। क्योंकि माला तथा मादिगा जाति के लोग अछूत हैं।' (पृष्ठ-50-51) हर किस्म के भेदभाव को धर्म और भगवान् के नाम पर न्यायसम्मत बनाने का प्रेस किया जाता रहा है। इसके पीछे ब्राह्मणवाद है।

'सारा विश्व दैवाधीन
देवता मंत्राधीन,
मंत्र ब्राह्मणाधीन,
इसलिए ब्राह्मण देवता है।' (पृष्ठ-64)

दलित-दमित-शोषित-वंचित मानवता के मौलिक अधिकारों का हनन समाज का प्रभु वर्ग ही नहीं, बल्कि सत्ता भी करती आई है। भारतीय हिंदू मिथकों में आदिम समुदाय के लोगों को दैत्य, दानव, असुर, राक्षस जैसे नाम दिए जाकर उनका 'वध' करने का 'दिव्य' कार्य अवतारों से करवाया जाता रहा। ब्रितानी हुकूमत के दौरान बाक़ायदा इन समुदायों को 'आपराधिक जनजातियाँ' की संज्ञा दी गई। बस्ती पर रौब ज़माते रहने वाले चौधरी का जुआबाज़ बेटा घर के हार को कहीं बेच आता है, लेकिन इसकी चोरी का इल्ज़ाम अलिवेलु के पति मुनय्या जैसे आदिवासी पर थोप कर उसके साथ भयंकर मारपीट की गई। 'जन्म से ही चोर जाति के नाम से जाने जाते इन लोगों में इस भयावह हिंसा को झेलने वाले लोगों में से मुनय्या और पोलय्या पहले व्यक्ति नहीं थे, न अंतिम। क्रिमिनल ट्राईब एक्ट जैसा दानवी कानून के न जाने कितने यानादि ग्रास बने होंगे, कितने परिवार बिखर गए होंगे।' (पृष्ठ-86) डर के मारे मुनय्या घर से कहीं दूर चला गया जिसका अंत तक कोई पता नहीं चला।

आज़ाद हिंदुस्तान में इन आदिवासियों की हालात पहले से भी बदतर होती जा रही है। आधुनिक विकास इनके लिए विनाश का कारण बनता जा रहा है। विकास के नाम पर सर्वाधिक विस्थापन इन्हीं लोगों का हो रहा है। अलिवेलु कोटिरेड्डी के चक्कर में घर से निकली हुई है। उसके बेटा चेंचुल को उसके नाना-नानी पाल-पोस रहे हैं। उन्हें उसके भविष्य की चिंता है, इसलिए किसी तरह स्कूल में पढ़ने भेज दिया है। घर को अभावों ने घेर रखा है। दशा असहनीय है। वार्तालाप के दौरान मंगम्मा को सांत्वना देती हुई रत्तम्मा कह उठती है-'आज की अपेक्षा वे ही दिन अच्छे थे जब सीटा (क्रिमिनल ट्राईब एक्ट) के दिन थे...' मंगम्मा सहमत होती है-'ठीक बोल रही हो, जानवरों की तरह बाड़े में क़ैद रखने पर भी ज़िन्दा रखने के लिए खाना दिया जाता था। आजकल तो बहुत अन्याय है।' (पृष्ठ-143)

चेंचुल जैसे स्कूली छात्र मानव द्वारा थोपी हुई वंचना-वर्जनाओं के अनुभव को महसूस करने लगा है। उसके मन में क्रिमिनल ट्राईब एक्ट, व्यक्ति गरिमा, जातिगत ऊँच-नीच को लेकर सवाल पर सवाल उठते हैं। इसी दौर में स्कूल में उसकी दोस्ती उच्चकुलीन किशोरी अनसूया से होती है लेकिन जातिवाद यहाँ भी आड़े आ जाता है। दोनों को अलग होना पड़ता है। उसके भीतर की मानवीय गरिमा उद्घोष कर बिताती है-'मैं यानादी हूँ तो क्या आदमी नहीं हूँ क्या?' (पृष्ठ-174) जोग-संजोग से वह केशवराव जैसे उग्र वामपंथी के संपर्क में आता है। 'हाँ, चेंचुल यानादि है...वह स्कूल में केवल अक्षर ही नहीं सीख रहा है बल्कि चारों तरफ के समाज को, समाज में रहने वाले लोगों को देख रहा था।' (पृष्ठ-187)

इस कृति का रचनाकार एकुला वेंकटेश्वरलु स्वयं यानादि समुदाय से है। चेंचुल की तरह उसने भी आभाव और अत्याचार भोगे हैं। वह ख़ुद कम्युनिस्ट पार्टी का एक्टिव सदस्य रहा है। उसने अपने प्रिय पात्र चेंचुल के मन में भी वामपंथी उग्रवाद में सामजिक परिवर्तन के विकल्प का विचार उत्पन्न करने का प्रयास किया है।

'देश हमारा है / मोहल्ला हमारा है / गाँव हमारा है / हर काम के लिए हम हैं / हथौड़ा हमारा / कटार हमारा / कुदाल हमारा है / फावड़ा हमारा है / गाड़ी भी हमारी है / गाड़ी के बैल हमारे हैं / ये मालिक कौन है? / मालिक की यह लूट क्या है?' (पृष्ठ-208)

चेंचुल की माँ अलिवेलु हर तरह से लुटी-पिटी और असाध्य रोगी बनकर घर लौटती है। वह अपने पुत्र को अंतिम बार निहार लेना चाहती है। चेंचुल लौटता है, लेकिन तब तक अलिवेलु के प्राण-पखेरू उड़ जाते हैं। चेंचुल अपने सामाज की ही नहीं बल्कि समाज के सभी शोषित तबकों की चिंता करता है। जब वह कॉमरेडों के केम्प में था तब क्रांतिकारी राजन्ना द्वारा उससे कही बातों को याद करता है-'देखो भाई, यदि कहा जाता है कि हमारे जैसे ग़रीब केवल ऊँची जाति के लोगों की सेवा करने, उनके लिए खटने और उनको शारीरिक सुख पहुँचाने के लिए ही पैदा हुए हैं तो यह ग़लत है। इस ग़लत धारणा को दूर करना है। श्रम करने वाला, शोषण का शिकार होने वाला और नीचा जाति का कहकर धुत्कारा जाने वाला सभी एक ही जाति के हैं। इस बात का प्रचार कर सबको एक करना है। इस समाज को बदलना है। सभी लोग हँसते गाते आनंद से रहे, ऐसा समाज बनाना है।' (पृष्ठ-217) गंभीरता के साथ चेंचुल सोचने लगा-'यानादियों की झोंपड़ियों पर भरपूर चाँदनी को फैलाना है...ऐसे दिन अपने आप नहीं आएँगे। उन्हें लाना होगा। लड़कर उन्हें लाना होगा।' (पृष्ठ-217)

दूर कहीं जन गायक के गाने की आवाज़ आ रही थी- 'हे माला अद्द्न्ना / मादिगा मुत्तन्ना / यादव यल्लन्ना / धोबी चलमन्ना / साइबु पीरन्ना / मुसहर ईरन्ना / हाथ मिलाना है / एक लड़ाई लड़नी है...

गीत में आगे मनुवाद की भर्त्सना करते हुए आंबेडकर के मार्ग को अपनाने की बात कही जाती है। यानादि आदिवासियों के कल के सुनहरे भविष्य के बारे में सोचते हुए (कथा का नायक) चेंचुल प्रजा कलाकार के गाने में डूब गया। आकाश में नीला रंगछा गया। उल्लेखनीय है कि इस उपन्यास का लेखक कम्युनिस्ट विचारधारा के साथ आंबेडकरवादी भी रहा है। इसलिए इस कथा के अंत में ऐसा संकेत मिलता है जैसे इस कृति में मार्क्स और आंबेडकर के प्रगतिवादी और परिवर्तनकामी विचारों को संयुक्त रूप से सामाजिक परिवर्तन का विकल्प दिया गया हो।

000

पुस्तक समीक्षा

(संस्मरण)

कही-अनकही

समीक्षक : दीपक गिरकर

लेखक : अनन्या मिश्र

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545

मोबाइल- +91-9806162184

ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

दीपक गिरकर
28-सी, वैभव नगर, कनाडिया रोड,
इंदौर- 452016 मप्र
मोबाइल- 9425067036
ईमेल- deepakgirkar2016@gmail.com

महिला सशक्तिकरण की प्रबल पक्षधर, सामाजिक कार्यों तथा पशु कल्याण में सक्रिय भागीदार, समाज में सकारात्मक बदलाव में व्यस्त डॉ. अनन्या मिश्र की संस्मरण की पुस्तक "कही अनकही" इन दिनों चर्चा में है। इस पुस्तक में कुल 45 अध्याय हैं। प्रत्येक अध्याय में लेखिका ने अपने संस्मरणों को बड़ी ही सहजता से इस पुस्तक के माध्यम से पाठकों से साझा किया है।

पासवर्ड- यह संवाद पति पत्नी रिश्ते में विश्वास और गोपनीयता की समस्याओं को दर्शाता है। आदि हमेशा एना के फ़ोन को चेक करता है। वह एना के व्यक्तिगत स्पेस का उल्लंघन करता है। आदि एना को अपने फ़ोन को हाथ नहीं लगाने देता है लेकिन एना के फ़ोन को चेक करना अपना अधिकार समझता है। आदि एना के व्यक्तिगत सीमाओं का सम्मान नहीं करता है। एना ने अपने फ़ोन का पासवर्ड बदल लिया है। आदि एना के फ़ोन का नया पासवर्ड मालूम करना चाहता है।

मेरा घर- यह संवाद एक रिश्ते में आदर्शों, व्यक्तिगत स्पेस और परंपराओं के बीच संघर्ष को उजागर करता है। एना और आदि के बीच यह वार्ता उनके घर के माहौल और परिवार की अपेक्षाओं को लेकर हो रही है। आदि के विचार में परिवार के अन्य सदस्य, जैसे कि माता-पिता को प्राथमिकता दी जाती है, जबकि एना यह महसूस करती है कि उसे अपनी स्वतंत्रता और निजी जगह का अधिकार होना चाहिए। आदि की आदतें और मान्यताएँ स्पष्ट रूप से परंपराओं और नियमों पर आधारित हैं, जैसे कि कपड़े सुखाना, शेल्फ पर चीज़ें रखना आदि। वहीं एना के लिए ये बातें असहज हैं, क्योंकि वह सोचती है कि घर में जो दो लोग रहते हैं, उनका अधिकार है कि वे अपनी इच्छानुसार चीज़ें रखें और घर का माहौल सहज और आरामदायक बनाएँ। एना की असहमति तब और बढ़ जाती है जब आदि ने कुछ टॉयलेटरी आइटम्स और सेनेटरी पैड को बाहर की अलमारी में रखा। एना का मानना है कि यह उसकी व्यक्तिगत और सहज आवश्यकता है और उसे छुपाने की ज़रूरत नहीं होनी चाहिए। वह यह भी महसूस करती है कि अपनी पत्नी के व्यक्तिगत मामलों को लेकर एक सीमा का उल्लंघन हो रहा है, जब आदि अपने घर के नियमों को एना पर थोप रहे हैं। एना के विचारों में यह भी झलकता है कि ससुराल में एक बहू को प्रशिक्षित किया जाता है, लेकिन उसे अपनाने के बजाय उसे सिर्फ घर के कामों में फिट होने की उम्मीद की जाती है। वह महसूस करती है कि उसे अपनी जगह, अपनी पहचान और अपने अधिकारों के लिए लड़ना चाहिए। एना यह चाहती है कि वह अपने घर में अपनी इच्छाओं और ज़रूरतों के अनुसार सहज महसूस करे, जबकि आदि के लिए परंपराएँ और घरवालों की सुविधाएँ पहले आती हैं।

रिपोर्टिंग- यह संवाद एक रिश्ते में संचार, विश्वास, और व्यक्तिगत स्पेस की समस्याओं को उजागर करता है। एना और आदि के बीच कई मुद्दे हैं जो उनके बीच की दूरी और अविश्वास को बढ़ा रहे हैं। आदि के द्वारा लगातार फ़ोन कॉल्स का न उठाना और एना के फ़ोन करने पर जवाब न देना, यह संकेत करता है कि आदि अपनी व्यस्तता का बहाना कर रहे हैं, जबकि एना को यह लगता है कि उसे अनदेखा किया जा रहा है। एना का यह महसूस करना कि आदि के टूर के दौरान उसके पास कोई ख़बर नहीं होती, उसे चिंतित करता है। वह चाहती है कि उसे कम से कम एक बार अपडेट दिया जाए, ताकि वह सुरक्षित महसूस करे, लेकिन आदि इसे एक तरह की अनावश्यक निगरानी समझते हैं। आदि की आदत है कि वह अपने टूर और कार्यों के बारे में पूरी जानकारी ख़ुद ही रखते हैं और वह एना से कोई विवरण साझा नहीं करते। उनका यह रुख यह दिखाता है कि वे अपने व्यक्तिगत स्पेस को लेकर अत्यधिक सतर्क हैं। इसके विपरीत, एना को यह लगता है कि वह अपनी सुरक्षा और रिश्ते में विश्वास की कमी से जूझ रही है। आदि का एना से कहना कि वह हर पल का हिसाब न रखे, यह भी एक संकेत है पितृसत्ता का। इसके विपरीत, एना का यह मानना है कि रिश्ते में जब एक पार्टनर दूर हो, तो दूसरे को चिंता होना स्वाभाविक है और एक ज़िम्मेदार व्यक्ति के रूप में वह चाहती है कि उसे नियमित अपडेट

मिले। यह संवाद दर्शाता है कि आदि एना को दबाकर रखना चाहते हैं।

कच्चे आलू- इस संस्मरण ने एक जटिल और संवेदनशील विषय को छूआ है, जिसमें रिश्तों की गहराई, विश्वास, और घरेलू जीवन की छोटी-छोटी बातें शामिल हैं। एना और आदि के बीच एक सामान्य घरेलू मुद्दे से शुरू होने वाली यह कहानी धीरे-धीरे रिश्तों की जटिलता और उनके बीच की ग़लतफ़हमियों को उजागर करती है। आलू की सब्ज़ी कच्ची रह जाने की घटना से पेट दर्द का कारण। इसके बाद का मोमेंट, जब आदि का फ़ोन एना के हाथ में आता है और वह दीया के मैसेज पढ़ लेती है, यह भी एक तरह से विश्वास की परीक्षा है। इस स्थिति में, एना और दीया के रिश्ते और आदि की दोस्ती को लेकर संदेह और असहमति की भावनाएँ सामने आती हैं। आख़िर में, जब आदि एना से कहता है कि उसने उसके सारे मैसेज क्यों पढ़े, तो यह एक और महत्त्वपूर्ण सवाल खड़ा होता है- क्या शादीशुदा जीवन में किसी अन्य महिला मित्र के साथ इतने अंतरंग संबंध बनाना सही है? क्या पति-पत्नी के रिश्ते में ग़लतियों का ख़ामियाज़ा दोनों को एक-दूसरे से साझा करना चाहिए, या फिर किसी तीसरे पक्ष से सहानुभूति पाने का यह तरीक़ा सही है? यह संस्मरण यह सवाल उठाता है कि रिश्तों में विश्वास और पारदर्शिता कितनी महत्त्वपूर्ण है और कैसे छोटी-छोटी बातें बड़ी समस्याओं का रूप ले सकती हैं, ख़ासकर तब जब संवाद और समझ की कमी होती है। रिश्तों में स्पष्टता और ईमानदारी बहुत महत्त्वपूर्ण है।

कंपनी संस्मरण में एना आदि का रवैया देखती है। हर शनिवार आदि एना को डिनर पर बाहर ले जाता है, लेकिन कभी भाई के यहाँ, कभी कज़िन के साथ, कभी बहन के साथ, कभी रिश्तेदारों के साथ, कभी मामा के यहाँ। एना को आदि से शिकायत है कि किसी एक शनिवार को हम दोनों चले कहीं। एक दिन की छोटी ट्रिप पर चले या पार्क में चलें। आदि एना की इस बात से चिढ़ जाता है और वह कहता है कि मुझे शान्ति भरा शनिवार चाहिए। तुम्हारे साथ हर घंटे बस बहस ही होती है, इसलिए मुझे बेहतर लगता है कि कोई और हमारे साथ हो। मुझे भी अच्छी कंपनी चाहिए पूरे शनिवार की थकान के बाद। प्रेम विवाह के बाद भी पति कुछ पल अपनी पत्नी के साथ न बिताना चाहे तो वहाँ प्रेम कैसा।

अबोला- आदि के व्यवहार और एना की भावनाओं में गहरा अंतर है। आदि का जानबूझकर एना को चोट पहुँचाना और फिर उसे "मज़ाक" कहकर उसे ख़ामोश कर देना, यह उसकी अव्यक्त नफ़रत और असंवेदनशीलता को दर्शाता है। एना की स्थिति यह है कि वह लगातार उस सन्नाटे और नकारात्मकता से घिरी हुई है, जिसे वह घर में महसूस करती है। उसके लिए यह सब बहुत ही मानसिक रूप से थकाने वाला और आहत करने वाला हो सकता है। जब कोई रिश्ते में लगातार नकारात्मकता महसूस करता है, तो उसके आत्म-सम्मान और आत्मविश्वास पर गहरा असर पड़ता है। एना का डर और चुप्पी यह दिखाती है कि वह ख़ुद को असुरक्षित और अनसुना महसूस करती है। जो एक साथी के लिए सबसे ख़तरनाक स्थिति हो सकती है, वह है जब संवाद बंद हो जाता है और प्यार की जगह नफ़रत और असहमति का भावनात्मक बोझ बढ़ने लगता है। आदि का एना के साथ अबोला भी पितृसत्ता का एक रूप है। जब किसी रिश्ते में एक पक्ष हमेशा अपनी ग़लती न होने पर भी दूसरे से माफ़ी माँगता है, तो यह उस रिश्ते में एकतरफ़ा ज़िम्मेदारी का एहसास कराता है। यदि एना को हमेशा अपने व्यवहार को सही साबित करने और आदि के सामने माफ़ी माँगने की ज़रूरत महसूस होती है, तो यह रिश्ते में असमानता की ओर इशारा करता है। दाम्पत्य जीवन में दोनों पक्षों की ज़िम्मेदारी होती है, और यह न केवल एक व्यक्ति की, बल्कि दोनों की साझा ज़िम्मेदारी है कि वे रिश्ते को ठीक से निभाएँ और उसे बचाएँ। यह बहुत महत्त्वपूर्ण है कि दोनों ही पार्टनर एक-दूसरे की भावनाओं का सम्मान करें और एक-दूसरे के साथ संवाद में ईमानदारी रखें। यदि एना को हमेशा माफ़ी माँगने की ज़िम्मेदारी दी जाती है, तो यह उसकी भावनाओं और उसकी व्यक्तिगत स्थिति पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकता है। एना का मानवीय और भावनात्मक रूप से थक जाना स्वाभाविक है, क्योंकि जब कोई लगातार अपनी ग़लती न होने के बावजूद अपने साथी के लिए ज़िम्मेदारी महसूस करता है, तो यह एकतरफा बोझ बन सकता है।

बेटी जैसी- शादी के दौरान किए गए आश्वासन और वादे अक्सर रिश्ते की शुरुआत में बहुत अहम होते हैं, क्योंकि वे विश्वास और सुरक्षा की भावना प्रदान करते हैं। जब आदि के माता-पिता ने एना के माता-पिता को यह आश्वासन दिया था कि एना उनके घर में बेटी की तरह रहेगी, तो यह एक वादा था जो परिवारों के बीच विश्वास और संबंधों का आधार बनना चाहिए था। लेकिन शादी के बाद जब ऐसा नहीं होता, तो यह एना के लिए भावनात्मक रूप से बहुत कठिन है। यह स्थिति उसके लिए असुरक्षा और अकेलेपन का कारण बनती है, क्योंकि वह अपने नए घर में वह सुरक्षा और प्यार नहीं महसूस करती, जिसकी उसे उम्मीद थी।

लेखिका के अनुसार आज भी समाज में महिलाओं की आवाज़ को अनसुना किया जाता है। समाज की धारा और परंपराएँ बहुत गहरी होती हैं, और कभी-कभी महिलाएँ अपनी बात रखने या अपने अधिकारों के लिए खड़ी होने में हिचकिचाती हैं। महिलाएँ अक्सर पुरुषों के मुकाबले कम प्रगति, सम्मान, और अवसर पाती हैं, जो कि उनके आत्मसम्मान और आत्मविश्वास को प्रभावित करता है।

डॉ. अनन्या मिश्र महिलाओं के संवेदनात्मक पहलुओं को सामने लाकर महिलाओं के साथ अपने पति के व्यवहार की सच्ची तस्वीर दिखाती हैं। यह एक पठनीय संस्मरण है। "कही अनकही" पुस्तक स्त्री सशक्तिकरण की दिशा में एक मील का पत्थर है। डॉ. अनन्या मिश्र की यह किताब अपने पति द्वारा पत्नी को दी जाने वाली यातना की एक सार्थक कृति है। डॉ. अनन्या मिश्र की भाषा-शैली रोचक और प्रवाहपूर्ण है। लेखिका की किस्सागोई हमें आद्यंत बंधे रखने में कामयाब रहती है।

000

पुस्तक समीक्षा

(कविता डायरी)

यादें बसंत की ख़ुशबुएँ हैं

समीक्षक : विजय कुमार तिवारी

लेखक : लीलाधर मंडलोई

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545

मोबाइल- +91-9806162184

ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

लीलाधर मंडलोई जी की यह कविता डायरी "यादें बसंत की ख़ुशबुएँ हैं" मेरे सामने है। कविता डायरी के रूप में यह साहित्य का कोई अभिनव प्रयोग है, जिसे पाठक पढ़ने-समझने वाले और अपने तरीक़े से प्रभावित होने वाले हैं। उन्होंने यथार्थतः स्वयं ही लिखा है-"यह डायरी के शिल्प में काव्यात्मक सामग्री है।" मुझे कविता डायरी के रूप में लिखी इन पंक्तियों ने अपने तरीके से आकर्षित किया है और इनके पीछे की काव्यात्मक भावनाएँ कोई आलोक फैलाती दिखाई दे रही हैं। इन्हें पढ़ते हुए, इनका आनन्द लेते हुए और काव्यात्मकता भावनाओं को समझते हुए अनुभूत भाव-संवेदनाओं को व्यक्त करने से स्वयं को रोक नहीं पा रहा हूँ। आलोचना, समीक्षा या विवेचनात्मक चिंतन आदि का इससे कोई लेना-देना नहीं है। यह एक तरह का आनन्दातिरेक है और उनके प्रति हार्दिक आभार भी।

अपनी कविता डायरी "यादें बसंत की ख़ुशबुएँ हैं" संग्रह को उन्होंने तीन महत्त्वपूर्ण हिस्सों में विस्तार दिया है-1-पंक्ति-पंक्ति प्यार, 2-गुज़रते साल की चंद पंक्तियाँ और 3-भूलना। इतना तो साधिकार कह सकता हूँ कि उनकी ये अनुभूतियाँ पाठकों को सराबोर करने वाली हैं, साहित्यिक रुचि जगाने वाली, परिष्कृत करने वाली और सबके मनों में गहनतम सुखद भाव भरने वाली हैं। काव्य वैसे ही सभी के लिए, सम्पूर्ण मानव-जाति के लिए सुखद विधा है और आदिम काल से व्यक्ति, समाज इसके आनन्द में डूबा रहता है। शायद यही कारण है, साहित्य में काव्य सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है और हमारे विकास क्रम के साथ-साथ काव्य की अनेक धाराएँ, उप-विधाएँ विकसित हुई हैं। कमोबेश यह स्थिति पूरी दुनिया में है, हर देश में, हर समाज में, हर भाषा और बोली में है, क्योंकि इसके पीछे मनुष्य है।

कवि के पास गहरी भाव-संवेदनाएँ हैं और काव्यात्मकता को पहचानती हुई दृष्टि भी, तभी तो वह आँखों की नमी को याद करने की सलाह देते हैं, माँ होना चाहते हैं, बुरे अनुभवों से मधुर सच ग्रहण करते हैं, बाँझ होते मन में चन्द्रमा की किलकारी सुनते हैं, उनकी कमाल की नज़र है अदृश्य देख लेते हैं और नाना दृश्य-अदृश्य बिंबों के सहारे भीतरी अनुभूतियों को प्रकट कर देते हैं। उनकी दृष्टि में विरोध-अन्तर्विरोध उजागर होते हैं-मुझे छोड़कर तुम्हें चाहिए/दुनिया का हर सुख, हर ख़ुशी या एक होने का यही एक पल है/बाद में सिर्फ अंधकार है। उनके चिंतन में नाना प्रश्न उभरते हैं- न ये मुर्दाघर है, न कब्रिस्तान, इस सन्नाटे का फिर सबब क्या है?

उनके पास वैज्ञानिक शब्दावली से जुड़े भाव हैं-तुम्हारे कहे में सिर्फ और सिर्फ/कार्बन डाई आक्साइड है या कोई ज़बरदस्त मनोवैज्ञानिक अनुभूति भी- हर चीज़ से परे होना एक ख़याल है, गतिशील मन स्थिर नहीं रहता।

उनके पास चट्टान में पौधा उगाने की संभावना दिखाई देती है और प्रेम का सच भी-जो कुछ आकस्मिक है/वह प्रेम की तरह सच है। उनकी उम्मीद समझने लायक है-एक है तो दूसरा होगा अकेले रहने का कौल एक भ्रम है।

उन्हें रिश्तों और पुरुषार्थ की ख़ूब पहचान है-जो सिर्फ तारीफ़ करता हो/ उससे बड़ा दुश्मन कोई और नहीं या जो पसीने में नहाता है/वह हर बाधा को पार करने का इल्म जानता है। उनके चिंतन में व्यावहारिकता है, संदेश है और चुनौती भी- ईश्वर का जीवन भी आदर्श नहीं, फिर आपने पा लिया यह कहना निरी मूर्खता है।

उनके विचार जीवन की परिभाषाएँ गढ़ते हैं-जीने की आदत को जीना/जीवन नहीं है। उनके चिंतन का दायरा सम्पूर्ण प्रकृति से जुड़ता है और बिंबों, प्रतीकों में संवेदना की सच्चाई उभरती है- जब-जब गिरता है किसी आँख से आँसू, आसमान में एक तारा कम हो जाता है।

वह रचनाकारों को समेटते हुए स्वयं पर व्यंग्य करने से नहीं चूकते-एक सरल सच्चा वाक्य न लिख पाने के बावजूद/मैं लेखक हूँ। उन्हें जीवन में संभावनाएँ दिखाई देती हैं-जो दूर है उसके पास पहुँचो/वो आएगा लिखे में और कमाल होगा। संदेह करने वालों के लिए सीख देखिए-संदेह में डूबता है प्रेम/कालांतर में जिसे ढूँढ़ता रह जाता है वर्तमान। संवेदना की पराकाष्ठा देखिए-बिछौने में तुम्हारी एक सिसकी ने/मुझे कभी जीने न दिया। उनके लिए सब कुछ सुलभ

विजय कुमार तिवारी
टाटा अरियाना हाऊसिंग,टावर-2, फ्लैट-201, पोस्ट-घटकिया, भुवनेश्वर-751029 ऑडिशा
मोबाइल- 9102939190
ईमेल- vijsun.tiwari@gmail.com

है, असंभव कुछ भी नहीं-ठिठको न रखो पहला पाँव/अब अंतरिक्ष भी दूर कहाँ दूर कितना पास है अब। उनकी शिकायतों में भी सच्चाई है-'कुछ भी नहीं किया मेरे लिए'/यह वाक्य प्रेम का तो नहीं लगता। उन्हें प्रकृति और मौसम में सौन्दर्य दिखाई देता है, जीवन का सुख और आनन्द भी, अनेक पंक्तियाँ इसका आभास देती हैं और चमत्कृत करती हैं- हर जीवित इकाई साँस लेती है कि जीवन बना रहे।

उन्हें मनुष्य की भावनाओं की गहरी समझ है, उसका उपदेश-संदेश चारों ओर पसरा हुआ है इन पंक्तियों में और वे वाद्य यंत्रों, नृत्य-संगीत का आश्रय लेते हैं अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए। प्रेम और प्रेमिका के लिए वह सारे बिंब प्रकृति से चुनते हैं, अपनी काव्यात्मकता निरुपित करते हैं और दोनों की उपस्थिति स्वीकारते हैं।

इस तरह लीलाधर मंडलोई ने अपनी कविता डायरी की इन पंक्तियों में जीवन के नाना अनुभवों को, नाना भाव-संवेदनाओं के साथ परोस दिया है और प्रेम की गहराई को समझाया है। उनकी भाषा, भाव, शैली प्रभावशाली है, उनके शब्द मिश्रित हैं, उनमें विशेष तरह का प्रवाह है और उन्हें जो कहना है, कह ही देते हैं-

पानीदार हूँ, ऐसा पानी नहीं कि हर रंग में बस जाऊँ, लेकिन पानी मानकर जो सज़ा सुनाई गई, वह मैं न था।

उन्हें अपनी उपलब्धियों के साथ-साथ नाकामियों की भी समझ है, सबकी पीड़ा और दुख समझते हैं और यह भी कि आज आदमी जुगाड़ में लगा है। मोहब्बत को वह साँप-सीढ़ी का खेल समझते हैं, उन्हें ईश्वरीय व्यवस्था पर विश्वास है और स्वयं को सही इंसान मानते हैं, चाहे जो भी हो- अदबनवाज़ हूँ बेहूदगी कर नहीं सकता, पीठ पर तेरा ख़ंजर है फिर भी चुप हूँ मैं।

लीलाधर मंडलोई ने दूसरे खण्ड का शीर्षक दिया है-"गुज़रते साल की चंद पंक्तियाँ" और इसके अन्तर्गत कुल 131 भाव-कथन हैं। वैसे ही पहले खण्ड में 134 और अंतिम खण्ड में 121 वैचारिक कथन हैं। ये सभी कथन जीवन के नाना पक्षों को उजागर करते हैं, परिभाषित और मनुष्य को सावधान करते हैं। ज़िंदगी, अँधेरा, बदलाव, इंतज़ार, चीखना, कहानी जैसे शब्द जीवन्त होते हैं और कोई भयानक सच उभरता है। अब व्यक्ति और समाज की सच्चाई छिपती नहीं है, बल्कि उसका यथार्थ डराता है। कवि अपनी सोच में स्पष्ट है-कामयाबी की कोई सूरत नहीं है, मैं लड़ता हूँ, लड़ने से कभी डरता नहीं। वह मन की गहराई लिखते हैं और कहते हैं-कुछ बोलचाल भी रख, दुश्मन नहीं है यार और निराश होने, अपूर्ण होने, अपने-पराये को समझने, दोस्तों की पहचान करने, उम्मीद रखने, परिस्थितियों को समझने तथा धैर्य रखने की सलाह देते हैं। देश की आज़ादी को लेकर उनकी पंक्ति देखिए-कहने को यह आज़ादी है, ग़ुलामी इसकी ग़ुलाम से पूछ। पाबंदियाँ इस क़दर हैं, मैं इसको आज़ादी कैसे कहूँ। उनके कुछ महत्त्वपूर्ण विचार देखिए-लोग दूसरों की कमियाँ देखते हैं, अपनी कमी कोई नहीं देखता, ज़िद और क्रोध प्रेम के लाजवाब दुश्मन हैं, ज़िंदगी को ख़ूब जीना चाहिए, दौर बुरा है, इसे बदलने के लिए बुरे लोग भी खड़े होते हैं, रोमांस को पकड़े रहो, रोमांस में ही ज़िंदगी के पते, ठिकाने होते हैं। उनका कहना है-भय, चुप्पी और हताश होने से अच्छा है मर जाना, बूढ़ा होने से पहले बच्चों के साथ रहना शुरू कर देना चाहिए और वह इंकलाब की बात करते हैं-कितने-कितने विलाप हैं चौतरफ़, कितनों-कितनों का साथ छूट गया, न जुटा पाये तब ऑक्सीजन, अब तो भर लो फेफड़ों में इतनी उसे कि जब इंकलाब बोलो तो डोल उठे सिंहासन।

जीवन में सब कुछ याद रखना महत्त्वपूर्ण है परन्तु भूलना अवश्यंभावी है। हम अक्सर भूल जाते हैं, हँसी का पात्र बनते हैं, हानि उठाते हैं और समस्याओं से घिर जाते हैं। मोबाइल, चश्मा, बटुआ भूल जाते हैं और पत्नी को भी। यहाँ इस खण्ड में मंडलोई जी ने भूलने को लेकर व्यापक तौर पर वस्तुपरक परिस्थितियों को विस्तार से लिखा है और जीवन्त बना दिया है। भूलने के ये सारे उदाहरण उम्र के पड़ाव पर अक्सर घटित होते हैं और परिस्थितियाँ जटिल हो जाती हैं। एक दु:सह परिस्थिति यह भी होती है, जिसे भूल जाना चाहिए वह याद रहता है और जिसे याद रखना है, वही भूल जाते हैं। उन्होंने गहरी बात लिखी है-मेरे या कहें हमारे पास एक भाषा थी और मौलिक भाषिक मुहावरा-प्यार का। उस मुहावरे को भूल गए हम, क्या हुआ कि वो भाषा भी आते-आते कहीं बिलम गई। उन्होंने आगे लिखा है-चुटकुला, हँसना, उजाला, अंधकार आदि सब भूल गया। उनकी पीड़ा देखिए-देह कामना को भूल जाने के बाद प्रेम में बने रहने का सख़्ती से निर्वाह किया। कामना बनी रही, देह भूलकर अदेह होने की स्मृतियाँ भूलता नहीं। इस तरह उन्होंने जीवन के अनेक मार्मिक प्रसंगों को चित्रित किया है जिसका सीधा संबंध भूलने या याद रखने से है। उनका कथन देखिए-'जिस सौन्दर्य को हम चेतना में बसा लेते हैं, वह भीतर से रहस्यमय होता है और दहशत पैदा करता है। एक स्त्री मेरी आँखों के पानियों में अस्थिर है।' एक उदाहरण और-"देहराग जो नृत्य में था याद रहा, नर्तकी का नाम याद नहीं।" उनकी विवशता देखिए-

'याददाश्त का मारा हूँ, तुझे चेहरे से याद करता हूँ, तेरा नाम भूल जाता हूँ।'

एक और प्रसंग देखिए-'धूप की इस चुहलभरी इश्कमिज़ाजी में, मैं तुम्हारे शबाब को याद करता, सूरज के हुस्न को भूल जाता हूँ।'

इस तरह देखा जाए तो लीलाधर मंडलोई जी ने एक अनूठा साहित्यिक प्रयोग किया है और हिन्दी-उर्दू की शब्दावली से सुसज्जित अपने वैचारिक भाव-कथनों को सम्पूर्ण काव्यात्मकता के साथ प्रस्तुत किया है। लोग सहमत-असहमत हो सकते हैं परन्तु इन कथनों का अपना महत्त्व है। ये व्यक्तिगत अनुभूतियाँ विस्तार पाते हुए सम्पूर्ण मानव-जाति को जोड़ने वाली हैं और इनका संदेश सबको प्रभावित करने वाला है। ये उनके व्यक्तिगत जीवन के सार्थक निष्कर्ष हैं और अपने तरीके से हिन्दी साहित्य को समृद्ध करने वाले हैं।

000

पुस्तक समीक्षा

(ग़ज़ल संग्रह)

रंग बारिश

समीक्षक : कुसुमलता सिंह

लेखक : विनय मिश्र

प्रकाशक : लिटिल बर्ड पब्लिकेशंस

कुसुमलता सिंह
प्रबंध संपादक एवं प्रकाशक ककसाड़
सी-54, रिट्रीट एपार्टमेंट्स, 20- आई. पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज, नई दिल्ली 110092
मोबाइल- 9968288050
ईमेल- kaksaadpatrika@gmail.com

'उमीदों की किसी पागल हवा में
नदी के जल- सा बहना याद है क्या'

ऐसे शेर जहाँ रचना अपने संभावित सत्य को ख़ुद तलाशती हो, किसी कवि के भीतर लगातार चलने वाले एक जिरह का नतीजा होते हैं और यही विनय मिश्र की विशेषता है। काव्य की अनेक विधाओं के रचनाकार विनय मिश्र ऐसे समकालीन कवि हैं जो हिन्दी ग़ज़ल के महत्त्वपूर्ण रचनाकारों में परिगणित किए जाते हैं। जो अपने शिल्प और सलीक़े में नवाचार के विश्वासी हैं। जिनका नाम हिन्दी ग़ज़ल के उन बड़े नामों में लिया जाता है जिनकी ग़ज़लों ने लोगों के दिलो-दिमाग़ में अपनी जगह बनाई है और अनवरत सृजन से समकालीन हिन्दी कविता को समृद्ध किया है। अगर हिन्दी ग़ज़ल पर बात करें तो समकालीन हिन्दी कविता में ग़ज़ल ऐसे स्थापित हो गई है कि अब यह बताने की आवश्यकता नहीं पड़ती की ग़ज़ल किसे कहते हैं। हिन्दी ग़ज़ल का आख़िरी पड़ाव दुष्यंत कुमार की ग़ज़लों को नहीं माना जा सकता वह एक प्रस्थान बिंदु था जहाँ से हिन्दी गजल अपने तमाम भटकाव से मुक्त होकर समूची हिन्दी कविता में एक ऐतिहासिक हस्तक्षेप कर रही है। अब वक़्त के हाथ इसे छू नहीं सकते और इतिहास की धूल इसे धुँधला नहीं सकती क्योंकि यह अपने पीछे बहुत से हीरे-जवाहरात छोड़ रही है जिनमें विनय मिश्र का नाम आता है। फ़ैज़ अहमद फ़ैज़ ने कभी हिन्दी ग़ज़ल के बारे में कहा था- 'अब ग़ज़ल को हिन्दी वाले ही बचा कर ले जाएँगे।' बस जो होना चाहिए और जो उल्लेखनीय तरीक़े से नहीं हो रहा है वह है इसके मूल्यांकन के लिए समीक्षा या आलोचना की महती आवश्यकता, जिसकी कमी दिखाई दे रही है।

हिन्दी ग़ज़ल अब सौंदर्य के, यथार्थ के नए बिंब रच रही है और विनय मिश्र अपनी बेचैनी, सक्रियता, अनुभवजन्य, अनुभव सुलभता से अपनी ग़ज़ल में इन चुनौतियों को बहुत सहजता के साथ हमारे सामने रखते हैं। हिन्दी ग़ज़ल में इन प्रयोगों की अपनी महत्ता है।

इनका यह पाँचवाँ ग़ज़ल संग्रह 'रंग बारिश' इसी काव्य परिदृश्य पर अपनी विशिष्ट छाप लिए आया है जिसकी ग़ज़लें आज के दौर की ऐसी कलात्मक छवियाँ हैं जो हमारे मन-मस्तिष्क को गहराई तक उद्वेलित करती हैं। विनय मिश्र अपनी अभिव्यक्ति का उपकरण भी यथार्थ से लेते है और जीवन के समय का भाष्य भी उस गहन शब्द संवेदनों से करते हैं जो सार्वकालिक, सार्वभौमिक और वैश्विक होती है। वरिष्ठ गीतकार और समीक्षक नचिकेता ने एक बार लिखा - 'विनय मिश्र की ग़ज़लें मितभाषी हैं और आज के सामाजिक यथार्थ की गिरह और गाँठों को खोलने में अधिक कारगर हैं।' सच है कि यथार्थ का प्रतीकात्मक रूप विनय मिश्र की आँखों से कभी ओझल नहीं होता। इनका चिंतन बहुआयामी है पर उस चिंतन में भारतीयता की सुवास है। एक ऐसी भारतीयता जिसके आलोक से दिगंत आलोकित हुआ है। इसीलिए इनकी ग़ज़लों में पानी बोलता है, हवा गुनगुनाती है और धरती भी हँसती-मुस्कुराती है। ग़ज़ल ऐसी कविता है जिसमें आंतरिकता की अभिव्यक्ति होती है। रूसी चिंतक मिखाइल बख्तिन कहते हैं -' किसी भी रचना में रचनाकार की जनतांत्रिक दृष्टि और स्वर साफ होना चाहिए। चिंतन की गहराई और विषय की व्यापक समझ ही उसे महत्त्वपूर्ण साथ ही वैश्विक रचनाकार में परिवर्तित करती है।' उसी आंतरिकता की अभिव्यक्ति के चलते ही विनय मिश्र की ग़ज़लों को हम केवल पढ़ते या सुनते हैं ऐसा नहीं। इनकी शायरी को हम देख सकते हैं। वह दिखाई देती है। क्योंकि वे जो कुछ कहना चाहते हैं उसे शब्दों से चित्रित करते हुए अपने भाषाई मुहावरे की काव्यगत परंपरा से आमजन को परिचित कराते चलते हैं। इसीलिए ये ग़ज़लें किसी भी वैश्विक परिदृश्य पर अपनी जगह बनाती हैं। इनकी गज़लों में स्मृतियाँ अनुसंधान करवाती हैं और एक नया मुहावरा या नई मौलिक अभिव्यक्ति गढ़ती हैं। इसलिए इन ग़ज़लों को ठहर-ठहरकर पढ़ना पड़ता है पर इन्हें समझने के लिए कोई मशक्कत नहीं करनी पड़ती। बस पढ़ते जाएँ और वे भौतिक रूप से और संवेदना के स्तर पर गहरे तक प्रभावित करती चली जाती हैं। इसी संदर्भ में 'रंग बारिश' ग़ज़ल का शीर्षक शेर देखें -

'हवा पानी परिंदे पेड़ मौसम
मेरे मन की यही है रंग बारिश'

यह शेर सकारात्मक सोच, ऐतिहासिक चेतना और आधुनिक बोध का परिचायक है। इसमें लोक-संस्कृति की धूप का तीखापन है। कवि जानता है कि हम बड़े शहरों के युग में जी रहे हैं। जो प्रकृति से बिल्कुल असंतृप्त हैं। मनुष्य को सड़कों पर भीड़ बनाकर बहने वाली इकाई के बीच ही आदमी का अपने होने का बोध हासिल करना पड़ता है। कवि आधुनिक समय के इसी दुराग्रह को देखकर कह उठता है की प्रकृति, हवा, पानी परिंदे ही मेरे मन के लिए ख़ुशनुमा बारिश के प्रतीक हैं। इसी अर्थवत्ता को रूस के कवि पुश्किन की कविता के एक अंश में देखें-"मैं सामंजस्य ढूँढ़ता हूँ। जादुई आवाज़ों, अनुभव और विचारों का।" साहित्य का आशय यानि देश-काल को दृष्टिगत रखते हुए जीवन के बुनियादी सवालों को उठाना भी है। कला की अपनी स्वयं-निर्णीत तर्क-पद्धति होती है। कोलरिज का एक बहुत अर्थपूर्ण कथन है कि "गहरी भावनाएँ गहरे विचार की कोख से जनमती हैं।' इसीलिए उपरोक्त शेर में कवि के प्रेम की स्मृति वाले मन की रंग बारिश की कल्पना हवा और पानी की सांगीतिक ताल के साथ श्यामल हरीतिमा, क़द्दावर पेड़ के बीच तरह-तरह के रंग-बिरंगे पतिंगे, जीव-जंतु और फूल का होना है। यह एक आत्मकथात्मक संवाद है। जहाँ नैसर्गिक परिवेश है, करुणा है, दर्शन है, जीवन है, प्रकृति है, वैचारिकता है, मानवीय संवेग है, मानवीय सरोकार है, मनुष्य की नियति है और काल्पनिक आभा है। जैसे पाब्लो नेरूदा प्रकृति का आलंबन लेकर नियति के रहस्य को बेधते हुए कहते हैं कि "ख़ामोश है ताक़त(मुझे बताते हैं पेड़)/ और गहराई(मुझे बताती हैं जड़ें)/किसी जड़ ने नहीं कहा मुझसे/ मैं ही आती हूँ सबसे गहराई से।"

'रंग बारिश' विनय मिश्र के काव्य-विकास में एक नए प्रस्थान का स्वर है। जहाँ उनकी ग़ज़लों की काव्य भाषा में 'संक्षिप्तता' के साथ-साथ अद्वितीय खुलापन है और इसीलिए उनका झुकाव (जैसा कि फिलिप व्हीलराइट ने 'मेटाफर एंड रियलिटी' नामक ग्रंथ में बताया है) अर्थ की 'संक्षिप्तता' से अधिक अर्थ की 'पूर्णता' की ओर होता है। इसी संदर्भ में यह शेर देखें-

' मिले फुर्सत तो ख़ुद के साथ बैठूँ
ज़रा- सा काम ये अटका हुआ है'

अब इसमें ख़ुद के साथ बैठने का जो 'ज़रा- सा' काम है वही मिश्र जी की भाषा की कारीगरी है। यहीं पर भाषा और अनुभव की विविधता, पारंपरिक मान्यता, अपनी तरह से जीवन जीने की चाहत जैसी केंद्रीय संवेदना को बाँधे रहने की अद्भुत क्षमता इस शेर मे 'ज़रा-सा' काम करने और कहने ने कर दी है। 'रंग बारिश' में संग्रहित ग़ज़लों में आज के समय संदर्भ की समग्रता में व्यंजना है। पूर्व और पश्चिमी काव्य-चिंतन का अनुशीलन करते हुए इन ग़ज़लों ने सौंदर्यबोध के नए मानक स्थापित किए हैं। टी.एस.इलियट कहते हैं कि "कविता का अस्तित्व मात्र वही नहीं है जो 'कवि' ने सोचा था अथवा जो पाठक सोचता है और न उसके 'प्रयोजन'की यही सीमा बाँधी जा सकती है। वस्तुत: कविता का हमसे भिन्न, अपना अस्तित्व हमसे पहले था और बाद में भी रहेगा।"

विनय मिश्र का यह ग़ज़ल संग्रह तब आया है जब इस वर्ष हिदी ग़ज़ल के प्रकाश स्तंभ दुष्यंत कुमार की 50वीं पुण्यतिथि है। अत: यह वर्ष हिन्दी ग़ज़लकारों के लिए महत्त्वपूर्ण वर्ष है। ऐसे समय पर इस संग्रह का आना दुष्यंत के प्रति शब्दांजलि भी है और हिन्दी ग़ज़ल को विकसित करने का एक अभिनव उद्यम भी। मुझे विश्वास है कि 'रंग बारिश' की ग़ज़लें हिन्दी समाज के पाठकों के बीच ही नहीं अपितु सभी ग़ज़ल प्रेमियों और कविता प्रेमियों के दिल में अपनी जगह बनाएँगी क्योंकि इस संग्रह में कवि की चिरंतन संवेदना और समकालीन जीवन बोध का मर्मस्पर्शी चित्रण यत्र तत्र सर्वत्र दिखाई पड़ता है। एक मानवीय विश्व दृष्टि का आविर्भाव इस संग्रह को तथ्य और सत्य से जोड़ता है और इसकी जनसंवादी भाषा कवि की काव्य सर्जना को एक नया आयाम देती है। इस ग़ज़ल संग्रह के लिए विनय मिश्र को बधाई।

000

फार्म IV

समाचार पत्रों के अधिनियम 1956 की धारा 19-डी के अंतर्गत स्वामित्व व अन्य विवरण (देखें नियम 8)।

पत्रिका का नाम : शिवना साहित्यिकी

1. प्रकाशन का स्थान : पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मप्र, 466001

2. प्रकाशन की अवधि : त्रैमासिक

3. मुद्रक का नाम : ज़ुबैर शेख़।

पता : शाइन प्रिंटर्स, प्लॉट नं. 7, बी-2, क्वालिटी परिक्रमा, इंदिरा प्रेस कॉम्प्लैक्स, ज़ोन 1, एमपी नगर, भोपाल, मप्र 462011

क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।

(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

4. प्रकाशक का नाम : पंकज कुमार पुरोहित।

पता : पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मप्र, 466001

क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।

(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

5. संपादक का नाम : पंकज सुबीर।

पता : रघुवर विला, सेंट एन्स स्कूल के सामने, चाणक्यपुरी, सीहोर, मप्र 466001

क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।

(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

4. उन व्यक्तियों के नाम / पते जो समाचार पत्र / पत्रिका के स्वामित्व में हैं। स्वामी का नाम : पंकज कुमार पुरोहित। पता : रघुवर विला, सेंट एन्स स्कूल के सामने, चाणक्यपुरी, सीहोर, मप्र 466001

क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।

(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

मैं, पंकज कुमार पुरोहित, घोषणा करता हूँ कि यहाँ दिए गए तथ्य मेरी संपूर्ण जानकारी और विश्वास के मुताबिक सत्य हैं।

दिनांक 20 मार्च 2025

हस्ताक्षर पंकज कुमार पुरोहित

(प्रकाशक के हस्ताक्षर)

पुस्तक समीक्षा

(कविता संग्रह)

ज़रूरी चिन्हों के बिना

समीक्षक : पूनम मनु
लेखक : प्रदीप सिंह
प्रकाशक : बोधि प्रकाशन

पूनम मनु
बी-285, श्रद्धा पुरी फेज़-2
सरधाना रोड, कांकेरखेड़ा
मेरठ कैंट 250001, उप्र
मोबाइल- 9012339148
ईमेल- poonam.rana308@gmail.com

बेचैनी की ज़मीन बहुत ही भुरभुरी और उर्वरक होती है। उस पर यदि संवेदनाएँ भावुकता की सभी सीमाएँ लाँघ जाएँ तो रचनाओं का जन्म होना निश्चित है। युवा प्रदीप सिंह के नए कविता संग्रह 'ज़रूरी चिन्हों के बिना' को पढ़ते समय यह मुझे महसूस हुआ। उनकी सभी कविताएँ उनके मन की व्यथा, दर्द और तड़प के साथ उनके हौसलों की उड़ान हैं। जो कभी-कभी निराशा जैसा कुछ अनुभूत तो अवश्य कराती हैं पर जीवन के प्रति उनकी जिजीविषा को खोने नहीं देतीं।

प्रदीप सिंह के हृदय में अकुलाहट भरी है। जो स्वयं के साथ-साथ समाज, देश, मनुष्य और प्रकृति के लिए बराबर है। संग्रह के आरंभ में 'बचाए रखना' नामक शीर्षक के अंतर्गत उनके द्वारा रचित ये शब्द उनके अत्यंत संवेदनशील होने का प्रमाण है – फिल्में देखने लगा तो/ दिन की तीन-तीन फिल्में देख डाली हैं/ दोस्तों में बैठकर कई /मौसम गुज़रे, बदलते रहे साथ/ लेकिन/ मैं रहा वहीं का वहीं/... / ख़ुद से ख़ुद की/ इस लड़ाई में /कितना मुश्किल है ख़ुद को बचाए रखना। कुछ है इस कविता में जो पाठक को रोककर सोचने पर विवश करता है। कविता ' बचाए रखना ' को पढ़ते हुए सीने पर एक चोट सी पड़ती है

दूसरी कविता 'दिव्यांग नहीं' एक बेहतरीन कविता है-

हमारी बैसाखियाँ /दौड़ीं और हाँफने लगा/ 'उसेन बोल्ट' /काले चश्में के/ पीछे से /फोड़ डाली हमने 'बुल्सआई'/ हमारे मुड़े-बेजान हाथ /पड़े तो /'टायसन' ने अपने ग्लव्स लटका/ दिए छोटी रह गई टाँगों से/ उछले जब/ टूट गया 'सोतोमयोर' का रिकॉर्ड/ ....हमारे अंग तो नहीं/ हाँ ख्वाब ज़रूर दिव्य हैं।

कमाल कविता ! जिजीविषा से भरी।

'इश्क़' कविता में 'व्हीलचेयर' यानी अपनी ज़रूरत, ज़रूरत से इश्क़ बुरा कब है। मगर पाठक के कलेजे में ये एक शब्द कहीं फाँस सा गड़ता है। इन कविताओं में प्रदीप सिंह का कवि मन कहीं समाज से उनके प्रति किए गए व्यवहार पर तिक्त भी है, और निराश भी, मगर अपना अकेलापन बाँटने के लिए ये उसके मोहताज नहीं।

'ज़रूरी चिन्हों के बिना' उनके काव्य संग्रह का शीर्षक उनकी पाँच भावुक कविताओं में से एक पर है, जो संबोधित तो 'पिता' को हैं पर जो माँ के बिना अधूरी हैं- 1 पिता के/ लगाए पौधों में से/ कोई एक कैक्टस हूँ मैं.... कंगूरे चमक सकें इमारत के/ इसलिए/ बुनियाद के पत्थर चुनते हैं अंधेरे.... माँ पर कविता लिखते हुए/ जाने कैसे/ छूट जाते हैं पिता/ जैसे पढ़ते हुए/ छूट जाते हैं विराम चिह्न।

कविता को पढ़ते हुए ऐसे लगता है जैसे उनको इसके बाद किसी और से जानने की आवश्यकता ही नहीं। प्रदीप सिंह अपनी कविताओं से पहचाने जाते हैं। इसके आगे की कुछ पंक्तियाँ देखिए– ... ध्यान ही नहीं जाता इन पर/ मुझ जैसे जल्दबाज़ पाठकों का... इन ज़रूरी चिह्नों के बिना/ अर्थ खो देते हैं वाक्य/ जैसे/ पिता के बिना/ अर्थहीन हो जाती है ज़िंदगी।

उनकी अगली कविता 'बंधन' में उनके मन की वह कचोट है जो वे किसी से कह नहीं पाते पर कविता में उँडेल देते हैं – मैं/ अपनों के पैरों का बंधन/ जिससे/ चाहकर भी/ वे मुक्त नहीं हो पाते .... अपनों के पैरों में बँधी/ कँटीली बेड़ी हूँ मैं। एक कसक जो मार्मिकता के चरम पर पाठक को ला पटकती है। किंतु सहानुभूति नहीं चाहती।

'भेड़चाल' कविता में – हाँकता है जिस ओर – /झुंड/ उसी तरफ/ मुड़ जाता है/ झुंड की भेड़चाल से/ ख़ूब वाक़िफ़ है चरवाहा। बहुत बढ़िया तंज़, यूँ लगता है, इससे आगे जो कुछ भी है, वह अतिरिक्त है। पूरी कविता यहीं पाठक को रोक लेती है। इन चार पंक्तियों में प्रदीप सिंह पूरी कविता कह देते हैं जो देश की वर्तमान स्थिति को खोलती है। कवि हृदय में भरी बेचैनी उन्हें हर स्तर, हर विषय पर चिंतन को मजबूर करती है। जिससे ये बोध होता है कि प्रकृति से वे कवि हैं।

'करते रहना चौकस' एक बढ़िया कविता है। जो रिश्तों के भीतर जमी बर्फ़ को पिघलाने की बात करती है, देखिए – सर्द रातों में/ सन्नाटा जो पसरा रहता है गलियों में/ देखना हमारे बीच ही

न/ आ पसरे/ करते रहना चौकस/ मुझे... हिमालय की/ बर्फ़ न जमने पाए/ बीच हमारे... डालते रहना/ नया जलावन/ बातों के अलाव में।

'स्माइली', 'मौसमी नदी' कविताओं में जब प्रदीप सिंह अन्तर्मन के भावों को व्यक्त करते हैं, ठीक उसी पल वह तानशाह को भी नहीं बख्शते। 'केवल कल्पना नहीं' में से चार पंक्तियाँ यहाँ प्रस्तुत हैं - तानशाह को चुनाव की/ चुनौती देकर/ आवाम के लिए/ इंकलाब लिखता .... अब कवि/ केवल कल्पना नहीं लिखता। जहाँ कवि होने के नाते कविता को एक नई दृष्टि प्रदान करते हैं।

इन कविताओं को देखिए – 'घर में' घर में/ मचा है कोहराम/ इतना शोर है/ कि अपनी आवाज़ सुनाई नहीं देती/ लेकिन/ हमें फिर भी सुन गई है /आवाज़/ पड़ोसी के बच्चे के रोने की/ सुना है बलूचिस्तान आज़ाद कराने की बात चली है। जहाँ वह राजनीतिक स्तर पर आम नागरिक की उदासीनता पर कटाक्ष करते हैं वहीं कहते हैं, वहीं राजनेताओं की नब्ज़ पर भी धीरे से उँगली रखते हैं।

'उम्रदराज पेड़' नामक कविता, शहरों में बस गए उन युवाओं के माता-पिता की मनोस्थिति को दर्शाती है जो चाहते हैं कि उनके माता-पिता अपनी जड़ों को छोड़कर शहर में उनके पास रहें। बानगी देखिए - ..../ उम्रदराज़ पेड़/ जड़ से कभी नहीं उखाड़े जा सकते/ कभी भी नहीं।

'हवाई अड्डे के स्वागत में' कविता में जहाँ पर्यावरण को लेकर चिंता है, वहीं बेघर हुई चिड़ियों के लिए दु:ख है।

'टनों बर्फ़ के नीचे', 'तरकीब नई', 'चिंता है', 'खिड़कियाँसी, 'मजबूर', 'जीवन पथ', 'क्या हुआ मेरा', 'मुबारक', 'बसंत', 'संकेत', 'वक़्त या मैं', 'एलर्जिक रंग', 'इस्त्री', 'मौत', 'इंस्परेशन', 'अकेलापन', 'उधार', 'पहचान', 'शह-मात', 'नहीं जँचती', 'कागज़ की नाव', 'नेति नेति' और 'विकलांग बेटा' जैसी अनेक कविताएँ हैं जो उदासी की चादर में लिपटी हैं। मन की व्यथाएँ ज्यों कविताओं का जामा पहनकर आ गई हों। पर ये कविताएँ निराशा से भरी नहीं अपितु प्रश्नों से भरी हैं, जिनके जवाब समाज के पास होने चाहिए। इन कविताओं को पढ़ने के बाद हर पाठक को ठहरकर सोचना चाहिए कि कोई भी व्यक्ति भरी दुनिया में क्यों कर अकेला महसूस करे, क्यों?

यूँ तो हर कविता प्रत्येक उस कवि के हृदय का दर्पण है जिसकी वह कविता है। परंतु ये सभी के लिए नहीं कहा जा सकता। जिस तरह का वातावरण है। कॉपी, कट, पेस्ट का ज़माना है। चोरी का माहौल है। ऐसे में ये कहना थोड़ा अनुचित भी जान पड़ता है। किन्तु प्रदीप सिंह की कविताओं में जो छटपटाहट है, उनकी अनुभूति से ये आभास होता है कि कुछ हैं जो अभी कविता की प्रकृति और उसकी आत्मा को बचाए हुए हैं।

कविताओं में उनकी छटपटाहट इस कविता 'आसमाँ' में महसूस की जा सकती है - बहुत पहले/ तुम अनंत थे/ फिर/ कुछ छोटे हुए मेरे/ मोहल्ले जितने/ फिर और छोटे/ कुछ और छोटे/ मेरे आँगन जितने/ और अब सिमट गए हो/ तुम/ मेरे कमरे की खिड़की में ही/ मेरा आसमाँ छोटा हो रहा है।

उनकी कविताओं को पढ़ते आप भी उस भावुक हृदय के साथ कहीं बहते चले जाते हैं। उनकी कविताएँ केवल उनकी नहीं हैं। सबकी हैं।

'आचार संहिता' शीर्षक की कविता के शब्दों चुनाव ग़ज़ब है– नशीले दाने/ फैला दिए हैं/ छतों पर/ बिछा दिए है ख़ूबसूरत जाल/ चिड़िया/ पकड़ने वालों ने/ ये आचार संहिता लागू होने वाले दिन हैं।

इस संग्रह की ये कविता विशेष रूप से अपनी ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट करेगी, आशा है – 'मनोज अंकल के लिए'– हाथ से डोर छूटने पर भी/ पतंग/ आसमान छू रही है/ डोर की चरखी थामे वो खड़ा है मज़बूती से/ ढील और कसाव का अनुपात/ वो ख़ूब जानता है।

अपने मेंटोर के लिए इतना विश्वास, इतना भरोसा, कमाल है। ये कविता नहीं, दर्शन है। जीवन दर्शन कि बिना भरोसे कुछ नहीं, तो भरोसा तो करना पड़ेगा। और करना ही चाहिए। भरोसा तोड़ने वाला तनिक सोचे कि नहीं तोड़ना है। जैसे कि विश्वास करता है किसान बीज पर। पर विश्वास को टूटने नहीं देती धरती। 'बीज' कविता में – विश्वास हो/ तो ऐसा हो/ जैसा होता है/ बीज पर/ कि/ बेतरतीब/ फेंककर भी/ यकीन/ रहता है/ कि/ इससे ही भरेंगे/ खाली पेट/ व मुस्कराएँगे बच्चे।

रचाव की ज़मीन में कुछ भी बोते जब भी हाथ कापेंगे। रचना कच्ची-कच्ची ही होगी। सभी की शुरुआत ऐसे ही होती है। सधते-सधते सधता है सब। धीरे-धीरे परिपक्व होते जाते हैं। ऐसा ही प्रदीप सिंह की इक्का-दुक्का कविताओं को पढ़ते लगता है। अवश्य ही वे आरंभ में रची गई होंगी। पर भाव तब भी वही था जैसे आज। कहीं कोई कमी नहीं। सादगी से भरी उनकी रचनाएँ कोई काल्पनिक बिम्ब तैयार नहीं करतीं। शिष्ट भाषा और सही प्रवाह इनकी कविताओं की विशेषता है। आत्ममंथन से जन्मी उनकी कविताएँ पाठक को ठहरकर सोचने पर मजबूर करती हैं।

जटिल शब्द और गूढ अर्थ मेरी दृष्टि में कविता को आम पाठक से दूर कर देते हैं। वह इस संग्रह की कविताओं में नहीं है। अपनी सभी भावनाओं को सहजता से कविता में पिरोने का उपक्रम किया है प्रदीप सिंह ने। उनके व्यथित मन की व्यग्रता हो या प्रकृति के निरंतर होते जाते क्षरण को लेकर आक्रोश। हर पाठक को अपना लगता है। यही तो हर कविता की सार्थकता है कि वह पाठक से सीधे संवाद करे।

उनकी हर कविता को लेकर ये कहा जा सकता। वे संवाद करती हैं। नि:संदेह कहीं-कहीं उनकी चिंता, उनका भय, उनकी छटपटाहट आवश्यकता से अधिक दिखलाई पड़ती है। फिर भी... फिर भी... कविताएँ अपने कहन में पाठकों को मायूस नहीं करतीं। बहुत सी कविताएँ पाठकों द्वारा सहेजी जा सकती हैं।

अंत में इस संग्रह के विषय में समग्र रूप से यदि एक पंक्ति में कहें तो संवेदनाओं के अथाह सागर से निकले सीपी और उनसे निकलते मोती हैं प्रदीप की कविताएँ।

000

पुस्तक समीक्षा

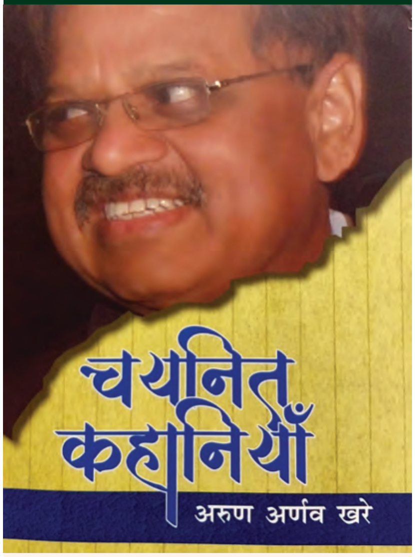

(कहानी संग्रह)

चयनित कहानियाँ

समीक्षक : लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

लेखक : अरुण अर्णव खरे

प्रकाशक : न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन, नई दिल्ली

लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
मोहल्ला- बरगदवा (नई बस्ती), निकट गीता पब्लिक स्कूल
पोस्ट- मड़वा नगर (पुरानी बस्ती)
जिला- बस्ती 272002 (उ. प्र.)
मोबाइल- 7355309428
ईमेल- laldevendra204@gmail.com

अरुण अर्णव खरे का नया कहानी संग्रह "चयनित कहानियाँ" के रूप में न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन, नई दिल्ली से वर्ष 2024 में प्रकाशित हुआ है। 128 पृष्ठ में कुल 12 कहानियाँ हैं। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है कि इस संग्रह में कथाकार की चयनित कहानियों का प्रकाशन हुआ है जिनमें से अधिकतर कहानियाँ प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं और वे सराही भी गई हैं। अब तक अरुण अर्णव खरे के तीन कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं, जिनमें समकालीन अच्छी कहानियाँ हैं और उनमें से श्रेष्ठ कहानियों का चयन बहुत मुश्किल रहा होगा। उन्हीं अच्छी कहानियों में से इन 12 कहानियों को लेखक ने इस संग्रह के लिए चुना है। कह सकते हैं कि यह अरुण जी की प्रतिनिधि कहानियाँ हैं।

कहानियाँ देश, समाज की वास्तविक दर्पण होती हैं जिसे कहानीकार संवेदना की ज़मीं पर उतरकर रचता है। अरुण अर्णव जी की कहानियाँ किसी विशिष्ट वर्ग पर केंद्रित न होकर आम जन की समस्यायों पर आधारित होती हैं और कहानियों के पात्र भी अधिकतर गाँव से जुड़े मध्यवर्गीय होते हैं जो हमें अपने जैसे लगते हैं। समाज में घटित हो रहे क्रियाकलापों और रोज़मर्रा की ज़िंदगी को अपने कथानक के केंद्र में रखकर अरुण जी कहानियाँ लिखते हैं और सहज-सरल तरीक़े से उसे आगे बढ़ाते हैं।

संग्रह की पहली कहानी 'दूसरा राज महर्षि' है। इस आधुनिकता और भौतिकता के दौर में माता-पिता अपने बच्चों के माध्यम से अपनी महत्त्वाकांक्षा को पूरा करना चाहते हैं। प्रत्येक माता-पिता या अभिभावक चाहते हैं कि उनकी संतान डॉक्टर, इंजीनियर या कोई बड़ा अधिकारी बने। अपने बच्चे की प्रतिभा, उसकी इच्छा को जाने-पहचाने बिना उसके ऊपर पढ़ाई का इतना दबाव डाल देते हैं कि बच्चे कभी अवसाद में चले जाते हैं और ग़लत कदम उठा लेते हैं। वही इस कहानी में भी घटित होता है। शहर के सभी मुख्य चौराहों पर आई. आई. टी, टॉपर राज महर्षि के लगे बड़े-बड़े होर्डिंग्स को जब अनुरीता ने देखा तो वह सपने देखनी लगी कि एक दिन मेरा बेटा शौर्य के भी इसी तरह फोटोज चौराहों पर लगे होंगे क्योंकि उनका बेटा शौर्य भी पढ़ने में अच्छा था। शौर्य अभी नौवीं में पढ़ रहा था। राज महर्षि की सफलता देखकर अनुरीता की महत्त्वाकांक्षा को पर लगा दिए थे।

अपनी सहेलियों और परिचितों से भी वह कहने लगी कि मेरा बेटा शौर्य भी आई. आई. टी. टॉप कर इस शहर का दूसरा 'राज महर्षि' बनेगा। शौर्य के जन्मदिन पर उसके दोस्तों से भी अनुरीता ने बता दिया कि शौर्य इस शहर का दूसरा राज महर्षि होगा। शौर्य के दोस्त उसे 'राज' कहकर चिढ़ाने भी लगे थे। उसकी मम्मी भी शौर्य को अक्सर दूसरा राज महर्षि कह देती थी तो उसे बहुत बुरा लगता था और कहता था कि "मम्मी मैं शौर्य हूँ।" बेटे के ऊपर माँ की महत्त्वाकांक्षा भारी पड़ने लगी और दूसरा राज महर्षि बनने के दबाव के कारण शौर्य मानसिक रूप से बिखर गया और उसका आत्मविश्वास डगमगा गया। इंटर का पहला पेपर देकर आ रहा था कि रास्ते में साइकिल से गिरकर बेसुध हो गया। एक सप्ताह तक अस्पताल में रहा उसका वजन घट गया, नींद न पूरी होने के कारण उसे 'सायकियाट्रिक एंड न्यूरोलॉजिकल डिसऑर्डर' हो गया। शौर्य को देखकर तो उसकी मम्मी के जैसे होश ही उड़ गए और उन्हें लगा कि किसी उपग्रह ने अंतरिक्ष में ले जाकर उसे छोड़ दिया है और राज महर्षि के होर्डिंग्स के टुकड़े भी उसके साथ शून्य में घूम रहे थे। यह कहानी वर्तमान में प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी कर रहे लगभग सभी बच्चों की है। माता-पिता और कोचिंग द्वारा बच्चों को परीक्षा क्रैक करने के लिए इतना दबाव दे दिया है कि असफलता की स्थिति में तो वे कभी-कभी आत्महत्या जैसे कदम उठा लेते हैं। माता-पिता और कोचिंग संस्थानों को चिंतन-मनन को प्रेरित करती शानदार कहानी अरुण अर्णव जी ने रची है।

इस संग्रह की दूसरी कहानी 'चार्ली चैप्लिन ने कहा था' कोरोना काल की है। मानवीय संबंधों का यथार्थ चित्रण और विषम परिस्थितियों में भी किस तरह निडर रहकर जीवन जीना चाहिए, यह कहानी हमें बताती है।

पलक, कुमुद और पराग तीनों दोस्त घर से दूर हॉस्टल रहकर आई. आई टी. की तैयारी करते हैं और कोरोना महामारी की सुगबुगाहट होते ही घर आने के लिए ट्रेन का रिज़र्वेशन करा लेते हैं, लेकिन लॉकडाउन लग जाता है और वापस घर नहीं आ पाते। इस मुश्किल घड़ी में मशहूर हास्य अभिनेता चार्ली चैप्लिन की कही बात- "हँसना ज़रूरी है और हँसने से जीवन में मुश्किलें आसान हो जाती हैं" और साथ ही यह भी कहा था- "आप जिस दिन हँसते नहीं, वह दिन बेकार हो जाता है" से पलक को प्रेरणा मिलती थी। इसी तरह इस कहानी का एक महत्त्वपूर्ण पात्र केतन कहते हैं मुझे अपने पसंदीदा हीरो देवानंद का यह गीत याद आता है- "मैं ज़िंदगी का साथ निभाता चला गया, हर फ़िक्र को धुएँ में उड़ाता चला गया" को आधार बना कर ये तीनों ने लॉकडाउन में समय बिताए।

संग्रह की तीसरी कहानी 'पीले हाफ पैंट वाली लड़की' संवेदना से पूर्ण एक ख़ूबसूरत कहानी है। इस कहानी के नाम से अर्णव जी का कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुका है। अरुण अर्णव जी कहानियों को पढ़कर लगता ही नहीं कि कहानी है बल्कि लगता है घटना आँखों के सम्मुख घटित हो रही है। फिल्म के रील की तरह इनकी कहानियाँ जीवंत लगती हैं। ज़िंदादिली क्या होती है इस कहानी को पढ़कर महसूस किया जा सकता है। नीला नाम की एक अनाथ लड़की जो पीले रंग की हाफ पैंट और सात दिन अलग-अलग रंग की टी-शर्ट इंद्रधनुष के रंगों के अनुसार पहनती थी और बोल्ड होकर रहती जबकि उसे 'नान-होजकिन लिम्फोमा' नामक बीमारी थी और डॉक्टर ने उसे बता दिया था कि उसके पास सिर्फ तीन माह का जीवन शेष है। लेकिन वह अपनी ज़िंदादिली से उसने डॉक्टर को झूठा साबित कर दिया और पाँच माह जीवित रही। संबंधों का भावनात्मक सजीव चित्रण इस कहानी में बहुत ही ख़ूबसूरती से हुआ है। यदि आपने इस कहानी पढ़नी शुरू की तो बिना ख़त्म हुए रह नहीं सकते और अंत में आप इस कहानी से इतने जुड़ जाएँगे कि आँख भर आएगी। बहुत ही बेहतरीन कहानी है। जिजीविषा की प्रेरणा इस कहानी से हमें मिलती है।

'यात्रा' कहानी कोरोना काल की त्रासदी और भयावहता की है। बाहर सुदूर कमाने गए लोग किस तरह महामारी के डर दिल्ली, मुंबई, कलकत्ता जैसे महानगरों से कई सौ किलोमीटर दूर अपने घरों की ओर पैदल चल पड़े थे। बेरोज़गारी, भुखमरी, यात्रा की मुश्किलें का सजीव चित्रण अरुण जी ने इस कहानी में वर्णन किया है। सुदामा एक झुग्गी में रहता है और अपनी बेटी को लेकर अपने गाँव चल पड़ता है। कितनी कठिनाइयों से वह अपने घर पहुँचता है। सच में वह कोरोना काल कितना मुश्किलों का था। कितने लोगों ने अपने परिवार जनों को खो दिया। किसी महामारी या आपदा का मनुष्य के जीवन पर क्या असर होता है, जीवन किस तरह बिखर जाता है कि आँसू भी आँखों से नहीं बहते, कितने मार्मिक ढंग से जीवंत वर्णन इस कहानी में है।

इस संग्रह की 'जॉटर रिफिल पेन' नैंसी सहगल और दिलीप भाटिया के साथ पढ़ने की एक कहानी है। नैंसी अमीर बाप की बेटी थी और दिलीप भाटिया साधारण घर का। किस तरह नैंसी ने दिलीप का अपमान किया था। दिलीप ने बदला लेने का भी विचार बनाया था लेकिन नहीं लिया। बहुत दिनों बाद दिलीप भाटिया को के मेल में नैंसी ने उसके पति को इंसाफ दिलाने के लिए मदद माँगी थी। पहले तो दिलीप ने सोचा कि यही मौका है बदला लेने का लेकिन फिर विचार बदल दिया और मदद के लिए पिटीशन पर हस्ताक्षर कर दिए। बदला लेना ही हल नहीं हो सकता, इस कहानी से हमें मालूम पड़ता है।

आजकल जाति-धर्म की दुहाई देकर हम आपस में लड़ने लगते हैं और एक दूसरे के दुश्मन बन जाते हैं। जबकि सदियों से हमारे देश में हिंदू-मुस्लिम-सिख-ईसाई, आपस में सब भाई-भाई की बात चरितार्थ होती रही है। एक-दूजे के साथ मिल-जुलकर सदैव ही दीवाली-ईद-होली हम मनाते आए हैं। एक-दूजे के सुख-दु:ख में हम साथ दिए हैं। इंसानियत ही सबसे बड़ा धर्म है, यह कहानी हमें बताती है। इस संग्रह की अंतिम कहानी 'साझा संस्कार' धार्मिक वैमनस्यता को ख़त्म करके एक-दूजे के साथ अपने संस्कार को साझा करने की सीख देती है। जिस प्रकार पंच परमेश्वर के अलगू चौधरी और जुम्मन शेख की मित्रता रही उसी प्रकार इस कहानी के मुकुटधर और फतह मोहम्मद की दोस्ती थी। बल्कि कुछ मायने में तो उनसे भी बढ़कर और गहरी। इनके लड़कों में भी वही अपने पिता की तरह दोस्ती थी। लेकिन किस तरह आगे चलकर ये दोनों शहर में साथ जाते हैं और उनकी दोस्ती में तीसरा व्यक्ति धर्म के नाम पर किस तरह दोनों के बीच दरार डालकर दोस्ती ख़त्म करने की कोशिश करता है। बहुत ही ख़ूबसूरत तरीक़े से इस कहानी का ताना-बाना अरुण अर्णव खरे जी ने बुना है। एक साँस में कहानी पढ़ सकते हैं। सद्भाव और संस्कार को जीती एक श्रेष्ठ कहानी।

इस संग्रह की अन्य कहानियाँ 'कौए', 'कोचिंग', 'वजूद', 'स्टेंट', 'चरखारी वाली लड़की', 'बादशाह सलामत की मोहब्बत झूठी है' भी विविध विषय पर रची गई विचारपरक आम जन की कहानियाँ है।

इस संग्रह की कहानियाँ चूँकि चयनित कहानियाँ हैं इसीलिए विषयों में विभिन्नता है। दो कहानियों की पृष्ठभूमि एक है पर विषयों का चयन और उसकी प्रस्तुतिकरण भिन्न है इसीलिए एक-दूसरे से कहीं भी सम्बंधित प्रतीत नहीं होती हैं। सभी कहानियों में सधी हुई संप्रेषणीय भाषा और कसे हुए शिल्प के सहारे कहानी आगे बढ़ती है और पाठक को बाँधे रखती है। इस संग्रह की कहानियों में समय और समाज को रू-ब-रू कराते हुए आम जन की समस्याओं को उठाया गया है। समकालीन समस्याओं को ताना-बाना अपने कहानियों में अरुण जी इस ख़ूबसूरती से रचते हैं कि कहीं भी बोझिल या उबाऊ नहीं लगती। इस संग्रह की कहानियों में संवेदना और मानवीयता प्रमुख पक्ष रहे हैं। शिल्पगत दृष्टि से इस संग्रह के कहानियों की भाषा सरल, सहज, प्रवहमान और जीवंत है। कहानी संग्रह के लिए अरुण अर्णव खरे को बधाई।

000

पुस्तक समीक्षा

(कविता संग्रह)

तुम्हारी आवाज़

समीक्षक : विजय कुमार तिवारी

लेखक : रामस्वरूप दीक्षित

प्रकाशक : भावना प्रकाशन, दिल्ली

प्रेम के बिना कुछ भी नहीं है। प्रेम है, तभी सृष्टि है, जीवन है, दुनिया में गति है, प्रगति है, हम हैं, आप हैं और तभी हमारा ईश्वर भी है। संसार के सारे कार्य-व्यवहारों के पीछे प्रेम-जनित भावनाएँ हैं और सबका आधार प्रेम ही है। संसार के सभी रचनाकार, लेखक, साहित्यकार प्रेम को समझना-समझाना चाहते हैं और अपनी अनुभूतियों को उड़ेलकर रख देना चाहते हैं। प्रेम कविताओं का ऐसा ही ताजा संग्रह "तुम्हारी आवाज़" भावना प्रकाशन से छपकर मुझ तक पहुँचा है।

कवि रामस्वरूप दीक्षित के कविता संग्रह "कोरोनाकाल में अचार डालता कवि" को मैंने पूर्व में पढ़ा और उस पर समीक्षात्मक चिन्तन किया है। तब मैंने लिखा था-"कविता की समीक्षा सहज भी है और जटिल भी। जटिल इसलिए कि कवि का चिन्तन बहुत सारे बिम्बों में उलझा होता है। वह बिम्बों का सहारा लेकर कविता में भाव-चिन्तन, संवेदनाएँ और अर्थ भरता है। संघर्ष तभी दिखाई देता है जब जीवन में पूर्णतया या आंशिक तौर पर जीवन्त या चेतन तत्वों का अभाव होता है। अभाव, गतिशील करने के पीछे का बहुत बड़ा कारक तत्व है। अभाव कई तरह के होते हैं। पूर्ण अभाव सर्वाधिक प्रभावकारी होता है। जीवन-तत्वों का पूर्ण अभाव मृत्यु की ओर खींच ले जाता है और यह हर तरह से विनाशकारी होता है। कविता जीवन की ओर खींचती है और जीने की उम्मीद बँधाती है। कविता अभाव की चुनौती को स्वीकार करती है और कोई न कोई खिड़की खुलती ही है। जीवन में संवेदनाओं और संघर्षों को मिलाने से ही काव्य साहित्य पूर्ण हो सकता है।"

इस नवीन संग्रह "तुम्हारी आवाज़" में प्रेम को लेकर उनका अनुभव प्रकट हुआ है और ये कविताएँ अपनी तरह से हिन्दी साहित्य को समृद्ध करने वाली हैं। उन्होंने व्यंग्य विधा में सृजन-लेखन किया है और आज एक वरिष्ठ रचनाकार के रुप में जाने-पहचाने जाते हैं। उनसे मेरी अनेक बार लम्बी-लम्बी फ़ोन-वार्ताएँ हुई हैं और मुझे उनकी जीवन्तता का प्रमाण मिलता रहा है। उपर जिस अभाव को मैंने सृजन का कारक तत्व माना है, वही रचनाकार में असंतुष्टि के रुप में उभर कर सतत सृजन के लिए प्रेरित करता रहता है। उनको लेकर ये मेरी निजी भावनाएँ हैं, संघर्ष, पीड़ा, असंतोष या विद्रोह कुछ भी कहा-समझा जा सकता है। इससे इतर इन कविताओं में उनका प्रेमी-स्वरुप उभरा है और इसी आधार पर हमें इन कविताओं में डूबना व इनका आनन्द लेना चाहिए। वैसे भी मैं सदैव रचना आधारित चिन्तन में विश्वास करता हूँ और इसे ही महत्त्वपूर्ण मानता हूँ।

"अपनी बात" के अन्तर्गत उन्होंने प्रेम को लेकर गम्भीर चिन्तन किया है, उनके भावों को देखिए-प्रेम वो तत्व है जो मनुष्य के भीतर देवत्व की स्थापना करता है, प्रेम उदार बनाता है, प्रेम हमें सच्चे अर्थों में मनुष्य बनाता है, प्रेम हमारी आंतरिक चेतना का विस्तार करता है, सारी सृजनात्मक कलाओं के मूल में प्रेम होता है, प्रेम में ध्वंस के लिए जगह नहीं, प्रेम को ज्यों-ज्यों व्यक्त करने की कोशिश की जाती है, वह अव्यक्त होता जाता है, प्रेम को महसूसना और उसे व्यक्त करना दो अलग-अलग चीजें हैं और प्रेम कविता लिखना सबसे कठिन काम है। इस संग्रह की कविताओं को लेकर उन्होंने स्वयं स्वीकार किया है-"वस्तुत: ये कविताएँ नहीं, बल्कि जो व्यक्तित्व प्रेम की अनुभूति, प्रेम की प्रेरणा व जिज्ञासा के स्रोत रहे हैं उनके प्रति आभार व्यक्त करने का किंचित प्रयास है।"

नितान्त वैयक्तिक भावनाओं को साहस पूर्वक उन्होंने रचा और हमारे सामने परोस दिया है। छोटी-बड़ी लगभग 47 कविताओं का यह संग्रह पाठकों को प्रेम की गहन अनुभूति देने में समर्थ है और प्रेम को नए तरीके से परिभाषित करने वाला है।

संग्रह का शीर्षक "तुम्हारी आवाज़" कविता पर लिया गया है जिसमें भावनाओं के मानवीकरण का जीवन्त स्वरूप उभरा है। आवाज़ को देखना, छूना, सहलाना, पहचानना, साथ यात्राएँ करना, पास बैठना, चूमना और सतत साथ होने की अनुभूतियों से भरा होना प्रेम ही तो है। 'तुमसे था' कविता संकेत करती है कि प्रकृति का हर उल्लास व विकास तुम्हारे होने से है।

विजय कुमार तिवारी
टाटा अरियाना हाऊसिंग,टावर-2, फ्लैट-201, पोस्ट-घटकिया, भुवनेश्वर-751029
ऑडिशा
मोबाइल- 9102939190
ईमेल- vijsun.tiwari@gmail.com

"चाहती तो होगी तुम भी" कवि के भीतर की गहन अनुभूतियों के प्रति समर्थन चाहती कविता है। नाना बिंबों में फैली भावनाओं के प्रति नायिका भी वैसा ही चाहती है, कवि जानना चाहता है और नाना रूपों में प्रेम के क्षणों की कल्पना करता है। उनकी पंक्तियाँ देखिए-कोई बनाकर/दो देहों को अदेह/तैर जाए/सजल बादलों के बीच/या सो जाए/आकाश की गहरी नीली/चादर को ओढ़/गहरी नींद/चाहती तो होगी तुम भी। 'पहली बार", "अहसास", "नींद", "जब तुम बोलती हो" जैसी कविताओं में कवि प्रेम के प्रस्थान बिन्दु के साथ-साथ नाना अनुभवों को समझना चाहता है-पहली बार/कैसे किया होगा/किसी ने किसी से प्यार/कैसे क्या किया होगा/कि जिसे समझा गया होगा प्यार करना। इन कविताओं में प्रकृति के बिंबों व प्रतीकों को आधार बनाकर प्रेम की मूल भावनाओं, स्थितियों व परिणामों को समझने की कोशिश चमत्कृत करने वाली है।

"मैं बनाता हूँ तुम्हारा चित्र", "चाह", "प्रेम का गणित", "तुम्हारा लौटना" और "पास न होकर भी हो" जैसी प्रेम में रसी-पगी कविताएँ संकेत देती हैं, उनके जीवन में नायिका के अलावा कुछ भी नहीं है। वह उसका चित्र बनाता है, उसे चाहता है, प्रेम का गणित उसके साथ होने से ही हल होता है, उसके लौटने की प्रतीक्षा करता है और सबसे बड़ी बात कि वह आसपास न होते हुए भी होती है। ये चरम अनुभूतियाँ प्रेम होने का प्रमाण हैं और कवि अपनी भावनाओं को खुलकर चित्रित करता है। यहाँ उनकी शालीन भाषा व शैली को देखना चाहिए और उनके मनोभावों को भी। ये कविताएँ सहज हैं, सहज भाव से लिखी गई हैं और अपना मारक प्रभाव छोड़ती हैं। प्रेमियों के सामने प्रेमिका के न होने की कल्पना सर्वाधिक पीड़ा देने वाली होती है, यहाँ उन्होंने प्रकृति के प्रतीकों द्वारा नाना उदास, जटिल दृश्यों को रचा है। "तुम्हारी महक", "नहीं दे पाऊँगा", "तुम्हारा जाना", और "प्रभाव" जैसी कविताएँ प्रेमिका को लेकर बहुत कुछ बताती हैं। यह चरम भाव देखिए, कवि तलाश में डूबा हुआ है--न पा सका कहीं/फिर एक दिन आई/तुम्हारी महक/ख़ुद के ही भीतर से। वह सब कुछ करने के लिए तैयार है-बस तुम थाम भर लो/मेरे हाथ का गुलाब/अपने गुलाबी हाथ में। ऐसे दृश्यों के सारे भाव प्रेम के नाना स्वरुपों को जीवन्त करते हैं और उनके चिन्तन व चरित्र को भी।

उन्होंने प्रेम करने के तरीक़ों को अपनी कविता "प्रेम ऐसे भी" में लिखा है और यह सहज प्रेमी जीवन की सच्चाई है। "गुज़ारिश" और "प्रेमपत्र" कविताओं के भाव जीवन के अधूरेपन को दर्शाते हैं और कोई कसक रह जाती है। 'हवा ओ हवा", "वादा", "नज़र" के भाव बेचैन करने वाले हैं। कवि की पंक्ति देखिए-कैसा था/उन आँखों का देखना/कि भीतर तक/ उतर गई तुम/बिना कुछ बोले। प्रेम हो या कोई दूसरा रस मन की बड़ी महत्ता होती है। "मन" कविता में उन्होंने मन को लेकर बहुत सुन्दर-सुन्दर भाव-दृश्यों को लिखा है-याद में उनकी/खोया हुआ-सा मन/किसी के मन में/रम गया है मन। "दोस्ती", "हम-तुम", और "विरह" जैसी कविताएँ उनके भीतर के सहज भावों को प्रस्तुत करती हैं। वह प्रकृति का हर रहस्य समझना चाहता है-ये किस तरह से देखा/किसी ने नदी को किनारे बैठकर/कि चूमने लगी धार उसके पैर। दोस्ती को परिभाषित करती यह कविता कवि मन की उड़ान दिखाती है। वैसे ही हम-तुम कविता में उन्होंने नाना बिंबों में एक-दूसरे के साथ होने और एक-दूसरे के अस्तित्व के लिए आवश्यक माना है।

'विरह' प्रतीक्षारत नायिका की गहन अनुभूतियों को व्यक्त करती मधुर भावों से भरी कविता है।

साहित्य में जनपक्षीय दृष्टि की चर्चा होती है जबकि प्रेम अधिकांशत: एकान्तिक भाव से जुड़ा होता है और एकल से समष्टि की ओर यात्रा करता है। यहाँ सहमति-असहमति जैसे विमर्श नहीं हैं बल्कि प्रेम को गहरे भाव से समझने की कोशिश है। यह जन्म-जन्म की यात्रा है। रामस्वरूप दीक्षित की कविता 'अगले जन्म' का भाव यही है-तुम आना/ज़रूर आना/अगले जन्म में/अपने इसी रुप/इसी रंग/और इसी भंगिमा के साथ। यहाँ उन्होंने फिर से प्रकृति का सहारा लिया है-जैसे आता है बसंत, जैसे आती है बारिश, परन्तु उनका भाव देखिए-तुम आना वैसे ही/अपने भीतर लिए/स्नेह और प्रेम की गंध/जिसके सहारे/मैं ढूँढ़ लूँगा तुम्हें/धरती के किसी भी छोर पर। वह साथ लेकर लौटना चाहता है अपने भीतर की आग के साथ। "प्रेम की ताक़त" कविता बहुत कुछ संदेश देती है और नाना संदर्भों में प्रेम की ताक़त समझा देती है। कवि अपनी नायिका से सहमति चाहता है जो भी उसे दिया गया है-लहराते बाल की नागिन से तुलना, चेहरा चाँद जैसा, नखशिख वर्णन की भाषा, शरीर के सौन्दर्य के लिए प्रयुक्त शब्द या प्रेम के तौर-तरीके। 'पूछा जाना चाहिए था' कविता में वह जानना चाहता है-उसे पाने की कोशिश में बिछाया गया शब्दजाल छल तो नहीं लग रहा, वासना के प्रयास उसके भीतर घृणा तो नहीं भर रहे, वह लहूलुहान तो नहीं हो रही और मादा समझी जाने पर टूट तो नहीं रही। कवि सहजता से चाहता है-एकाध बार तो/पूछा ही जाना चाहिए था उससे/कि कहीं/उसे पसंद तो नहीं/ख़ुद को/मनुष्य की तरह देखा जाना।

रामस्वरूप दीक्षित जी के इस संग्रह को पढ़ते हुए समझा जा सकता है कि प्रेम के भाव भीतर हों तो जीवन के हर काल-खण्ड में मधुर दृश्य उभरते हैं। उनकी कविताओं में पसरा हुआ प्रेम दूर-दूर तक अपनी आभा व अलौकिकता फैला रहा है। साहित्य के मर्मज्ञ पुरोधा जो भी कहें, आरोप-प्रत्यारोप करें, उनकी भाषा-शैली की बोधगम्यता देखें, उनकी उम्र और भावनाओं को लेकर चिन्तन करें, उन्हें मान-सम्मान दें या न दें, उनके वैचारिक अन्तर्विरोधों की चर्चा करें, मुझे कहने में कोई संकोच नहीं है कि उन्होंने बहुत ज़रूरी और बड़ा काम किया है। ये कविताएँ ख़ूब पढ़ी व सराही जाएँगी और इनसे हिन्दी साहित्य अपने तरीक़े से समृद्ध हो रहा है। मैं उन्हें हृदय से बधाई देता हूँ और सतत सृजन के लिए शुभकामनाएँ भी।

000

पुस्तक समीक्षा

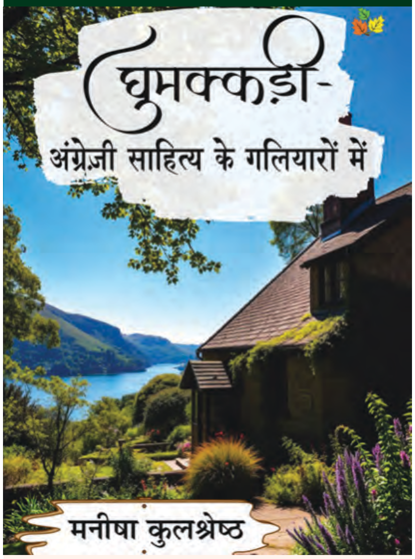

(यात्रा संस्मरण)

घुमक्कड़ी- अंग्रेज़ी साहित्य के गलियारों में

समीक्षक : स्मृति आदित्य
लेखक : मनीषा कुलश्रेष्ठ

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545
मोबाइल- +91-9806162184
ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

स्मृति आदित्य पांडे
35 बी, स्कीम नम्बर 103,
गार्डन के सामने, केशरबाग कॉलोनी,
(मनीष शर्मा का मकान),
चमेली देवी पब्लिक स्कूल के समीप,
इंदौर 452009, मप्र
मोबाइल- 6263358116, 9424849649
ईमेल- smritiadityaa@gmail.com

'घुमक्कड़ी' एक किताब नहीं नशा है और नशा भी ठीक वैसा ही जैसा घुमक्कड़ी में होता है। मेरी प्रिय साहित्यकार मनीषा कुलश्रेष्ठ का यात्रा संस्मरण 'घुमक्कड़ी-अंग्रेजी साहित्य के गलियारों में' जब उठाया तो पिछले पाठकीय अनुभवों के आधार पर मानस को तैयार कर ही लिया था कि इसमें है कुछ ख़ास और यक़ीनन मनीषा जी की लेखनी ने मानस को वही असीम तृप्ति दी जिसकी आशा बँधी थी। यह किताब सिर्फ यात्रा संस्मरण नहीं है यह एक संवेदनशील मन के साथ शेक्सपियर, वड्र्सवर्थ, कीट्स, कॉलरिज, जेन आस्टेन जैसे कई क़लमकारों को मन की गहराइयों से अभिस्पर्श करने का सुअवसर और सौभाग्य देती है।

जिस तन्मयता से इस किताब को लिखा गया है मेरे पाठक-मन ने उसी तल्लीनता से उसे पढ़ा और कहने से बच नहीं सकूँगी कि नशा अब भी तारी है। और मैं उसे दुबारा पढ़ रही हूँ उसी मनोयोग के साथ।

किताब की सबसे आकर्षक बात है मनीषा जी के कहन की सम्मोहित कर देने वाली जीवंत शैली। यूँ लगता है जैसे जो वे अनुभूत कर रही हैं वह सब हमारे भीतर पर्त दर पर्त उतर रहा है। और हर वो मशहूर किरदार आपको उसी तरह रोमांचित करता है जैसे रचनाकार ने महसूस करते हुए और फिर शब्दों में बाँधकर हम तक पहुँचाते हुए किया होगा। अगर आपने अंग्रेज़ी साहित्य को पढ़ा है तो निश्चित रूप से कल्पना में आपने उन रचनाकारों की जीवनशैली को उकेरा होगा यह किताब उसी कल्पना को सुंदरता और सहजता से साकार करती है और सार्थक रंग भी देती है। सुध-बुध खोकर आप लेखिका के साथ-साथ चलते हैं, थकते हैं, रुकते हैं, दौड़ते हैं, मुस्कुराते हैं, भीगते हैं। यही तो यात्रा संस्मरण की सफलता है कि आप आप नहीं रहते हैं आप जादू भरी अनोखी दुनिया में किताब के माध्यम से प्रवेश कर जाते हैं। मनीषा सिर्फ उन विशिष्ट जगहों पर जाकर हमें वहाँ की ख़ुशबू से सराबोर ही नहीं करती बल्कि वे संबंधित सवाल भी उठाती हैं और जवाब भी खोजती हैं। वे कोरी भावुकता से बचकर अपने स्तर पर विमर्श भी करती हैं। सोच को उद्वेलित करती हैं तो कभी अपनी पलकों की कोर से छलकी बूँद से हमारी मन धरा को सींच जाती है।

डिकेंस और कैथरीन के रिश्तों का गणित उन्हें बेचैन कर देता है- "डिकेंस ने दावा किया कि कैथरीन बाद में एक अक्षम माँ और गृहणी बन गई थी और 10 बच्चे भी उनकी ज़िद का नतीजा थे।

इस किताब की महीन कारीगरी आपको उलझाती नहीं बल्कि रेशों-रेशों की कोमलता से अवगत कराती है। चाहे आर्थर कौनन डायल के गढ़े किरदार शरलॉक होम्स हो या टाइटैनिक का मार्मिक यथार्थ.. मनीषा की क़लम उन्हें इस ख़ूबी से पाठक के सामने लाती है कि उनके अपने विचारों के नन्हे अंकुरण भी लहलहाते रहें और आँखों देखे जो स्निध फूल उन्होंने सँजोये हैं उनकी दृश्यावली भी घूमती रहे।

इस किताब के माध्यम से लेखिका ने यात्राओं के जरिए अपने प्रिय विदेशी लेखकों-शख़्सियतों को क़रीब से देखने-जानने और महसूस करने का जो अनुभव सहेजा है उसे कई गुना ख़ूबसूरती से अभिव्यक्त भी किया है। अनुभूतियाँ अक्सर अभिव्यक्ति की पगडंडियों में अर्थ बदल देती हैं लेकिन यह किताब इस मायने में श्रेष्ठ कही जाएगी कि यहाँ अभिव्यक्ति ने व्यक्ति, विचार और वस्तुओं के अर्थों को पूरी प्रामाणिकता, भावप्रवणता और प्रभावोत्पादकता से प्रस्तुत किया है। किताब की कई अच्छी बातों में एक यह भी कि चित्रों को अंतिम पृष्ठों पर स्थान दिया है ताकि पढ़ने की तंद्रा न टूटे और कल्पना के शिखर अंतिम पायदान पर दमकते हुए साकार हो। चाहे फिर वह फ्रायड का म्यूज़ियम हो, बैठे हुए ऑस्कर वाइल्ड हो, शेक्सपियर का स्मारक हो या फिर स्टोन हैंज में खोया जामुनी मफ़लर ही क्यों न हो। शिवना प्रकाशन से आई इस कृति को प्यार, पैसा, पुरस्कार और प्रतिष्ठा सब ख़ूब मिले, भरपूर मिले। हर पुस्तकालय में यह सजी मिले।

000

पुस्तक समीक्षा

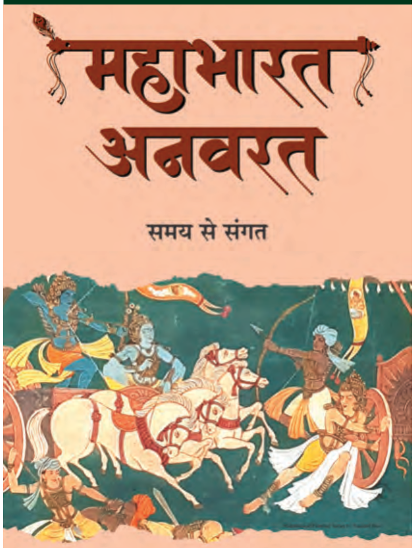

(कविता संग्रह)

महाभारत अनवरत

समीक्षक : गोपाल माथुर

लेखक : रासबिहारी गौड़

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545

मोबाइल- +91-9806162184

ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

रासबिहारी गौड़ कृत कविताएँ "महाभारत अनवरत" समय से संगत अतीत के कमरे से वर्तमान की ओर खुलती खिड़की अनेक रचनाकार अपने कालखण्ड के अनुभवों, आग्रहों, दुराग्रहों, सपनों और आकांक्षाओं को शब्द देने का प्रयास करते आए हैं। प्रत्येक कालखण्ड के अपने सच होते हैं। रचनाकार जानता है कि शाश्वत जैसा कुछ नहीं होता। महाभारत एकमात्र ऐसा ग्रंथ है, जिस पर अनेक दृष्टियों के साथ सर्वाधिक लिखा गया है। इस महाकाव्य का शायद ही कोई पात्र या घटना शेष रही हो, जिस पर हमारे क़लमकारों ने लिखा नहीं हो, परखा नहीं हो या रीक्रिएट नहीं किया गया हो। इस ग्रंथ को समकालीन दृष्टि से परखने का अद्भुत प्रयास लगातार किए जाते रहे हैं। रचनाएँ कभी भी आउटडेटेड नहीं होतीं, बल्कि वे इतनी बहुअर्थी होती हैं, जिनके नए नए अर्थ सदियों बाद तक खुलते रहते हैं। आज भी महाकाव्यों की पुनर्व्याख्या और पुनर्दृष्टि डालने का क्रम जारी है। प्रतिभावान कवि रासबिहारी गौड़ भी एक ऐसे ही कवि हैं, जिन्होंने ऐसा ही एक प्रयास "महाभारत अनवरत" में किया है। उन्होंने इस काव्य संग्रह में महाभारत को पुनर्विष्कृत करने का महती कार्य कर दिखाया है। वे हमें इस महाकाव्य की बहुस्तरीय कथा में प्रवेश किए बिना उनके केन्द्रीय भावतत्वों में ले जाते हैं, जहाँ पार्श्व में छिपा दर्शन, दृष्टि और कालबोध अपने आधुनिक परिपेक्ष के साथ प्रकट होता है। और यही तथ्य इस काव्य को लिखने और पढ़ने की सार्थकता सिद्ध भी करता है। आधुनिक होने का अर्थ है, एक ऐसी समसामयिक दृष्टि रखना, जो चली आ रही रूढ़ परम्पराओं और अंधी मान्यताओं को ठुकराने का साहस कर एक ऐसा भावबोध प्रस्तुत कर सके, जो हमसे पूर्ववर्ती रचनाकारों के पास नहीं था। रासबिहारी जी ने यह अद्भुत कार्य कर दिखाया है। यह कारण इस संग्रह को पढ़ने के लिए पर्याप्त ज़मीन उपलब्ध कराता है। संग्रह को पढ़ा जाना इसलिए भी आवश्यक हो जाता है, क्योंकि यह संग्रह महाभारत के बहाने हमें अपने वर्तमान से साक्षात्कार कराता है और आज के विचित्र समय को समझने का सलीका प्रस्तुत करता है। यूँ तो प्रत्येक पाठक के पास अपनी निज मर्मज्ञता होती है और वह स्वयं भी प्राचीन ग्रंथों को अपनी तरह से पुनर्व्याख्यातित भी कर सकता है, लेकिन एक कवि की दृष्टि विशेष महत्त्व रखती है। एक कवि के पास ही वह सब देखने, समझने और विश्लेषित करने का काव्यानुभव होता है, जो उसके लेखन को विशेष बनाता है। रास बिहारी जी इस महाकाव्य को चाक्षुस दृष्टि से परख कर वह सब कहते प्रतीत होते हैं, जो सादृश्य नहीं है, शब्दों के पीछे छिपा हुआ है, मूल कथा के पार्श्व में निहित हैं। अपनी इस कोशिश में वे आज के अंगारों पर चलकर उन अर्थों तक पहुँचने में सफल रहे हैं, जहाँ एक कवि ही पहुँच सकता है। उनके खोजे नए अर्थ अस्तित्व में आ जाने के बाद एक नई महाभारतीय यात्रा को जन्म देते हैं, जहाँ पीछे छूटा हुआ एक भी पगचिह्न दिखाई नहीं देता। ये कविताएँ पाठक को इस भ्रम से मुक्त कराती हैं कि उन्होंने इस महाकाव्य को जितना जाना है, वह पर्याप्त है। इसलिए भी 'महाभारत अनवरत' को कवि रासबिहारी जी की दृष्टि से देखना, पढ़ना और गुनना एक दिलचस्प अनुभव बन जाता है। अब प्रश्न यह शेष रह जाता है कि इसे किस तरह पढ़ा जाए! इस काव्यात्मक अनुभूति को पढ़ने से पहले यदि आप प्राचीन ग्रंथों के प्रति अपने पूर्वाग्रहों से मुक्त हो सकें, तो इसे बेहतर तरीक़े से समझ सकेंगे। आपको इन कल्पनाओं से ऊपर उठना होगा, जिसमें एक स्त्री के सौ पुत्र सम्भव हो सकते हैं या किसी स्त्री के पाँच पुत्र उसके पति के नहीं होकर भी पति के ही माने जाते हैं। यह भी कि स्त्री कोई वस्तु नहीं है, जिसे मछली की आँख बींध कर जीता जा सके। पाठकों को मिथकों के मायावीय छलावों से बचना होगा। कहना न होगा कि इन कविताओं को तार्किक ही नहीं, निश्छल, निर्विकार होकर पढ़ना होगा। जिस प्रकार कोरे केनवास पर कुछ भी मनचाहा उकेरा जा सकता है, उसी प्रकार यदि पाठक इन कविताओं को कोरा होकर पढ़ने का प्रयास करेंगे, तो वे अपना मनचाहा अवश्य खोज लेंगे। पढ़ना अपने मनचाहे की शाब्दिक खोज करना ही तो होता है। एक पाठक का सुख उसके अपने निज अनुभवों को किताबों में पा जाने में छिपा रहता है।

000

गोपाल माथुर
जी-111, जी ब्लॉक
वैशाली नगर, अजमेर
राजस्थान 305001
मोबाइल- 9829182320

पुस्तक समीक्षा

(उपन्यास)

आधी दुनिया पूरा आसमान

समीक्षक : अशोक श्रीवास्तव "कुमुद"
लेखक : ब्रह्म दत्त शर्मा

प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, सीहोर, मप्र 466001, फ़ोन-07562405545
मोबाइल- +91-9806162184
ईमेल- shivna.prakashan@gmail.com

"आधी दुनिया पूरा आसमान" ब्रह्म दत्त शर्मा द्वारा हरियाणा की पृष्ठभूमि पर रचित एक ऐसा सामाजिक उपन्यास है जिसे कन्या भ्रूणहत्या जैसे गंभीर और सामयिक विषय से जुड़े होने तथा क्रमागत विभिन्न घटनाओं के जीवंत और यथावत चित्रण के कारण, पाठक स्वयं को इससे बंधा हुआ महसूस कर, इस को बार बार पढ़ने की तीव्र इच्छा महसूस करता है। दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती, काली माँ की प्रतिदिन पूजा तथा घर की महिलाओं को देवी का दर्जा देने वाले भारतीय समाज विशेषकर हरियाणा के ग्रामों और कस्बों में रह रही पारिवारिक ईकाईयों में, कन्या को पत्थर के समान और बोझ समझ कर, कन्या जन्म से छुटकारा पाने हेतु आधुनिक तकनीकों के उपयोग द्वारा, कन्या भ्रूण को गर्भ में ही नष्ट करने, के दुष्कर्म को झेलती हुई स्त्रियों के मानसिक द्वंद्वों-प्रतिद्वंद्वों तथा प्रतिकार स्वरूप उनके उठाये क़दमों की जीवंत मार्मिक दास्तान है उपन्यास "आधी दुनिया पूरा आसमान"।

विकास के क्षेत्र में नित नए आयाम पेश करने वाले हमारे देश में, स्त्रियों के प्रति, हमारी पुरातनपंथी सोच में आज भी कोई बदलाव नहीं आया है और इसका समाज के विकसित या अविकसित होने अथवा आर्थिक रूप से संपन्नता या विपन्नता से कोई मतलब नहीं है बल्कि पढ़े-लिखे एवं संपन्न समाज में यह सामाजिक कुरीति ज़्यादा भयावह रूप से अपने पाँव पसार चुकी है। लेखक ने उपन्यास के माध्यम से यह भी दर्शाने का सुंदर प्रयास किया है कि सामाजिक कुरीतियों को ख़त्म करने के लिए, केवल क़ानून बना देना, ऐसी समस्याओं का समाधान नहीं है, बल्कि स्त्रियों के प्रति लोगों की सामाजिक सोच को बदलने के लिए स्त्रियों को मज़बूत आत्मबल के साथ-साथ, आर्थिक स्वावलंबन हेतु पढ़-लिखकर अपने पैरों पर खड़े होने की सबसे ज़्यादा ज़रूरत है। जिससे वह विपरीत परिस्थियों में भी अपने ऊपर होने वाले अन्याय और शोषण का दृढ़तापूर्वक मुकाबला कर सकें।

मुख्य पात्र किरण के साथ-साथ मनीषा, डिंपल, ममता, सुधा आदि विभिन्न स्त्री पात्रों तथा सुखबीर, राजकिशन, डॉ. धर्मवीर आदि पुरुष पात्रों के माध्यम से, परिवारों में पुत्र जन्म की अनिवार्यता को विभिन्न मान्यताओं जैसे मोक्ष, वंश को आगे बढ़ाने, प्रतिष्ठा आदि की वजह से मिल रही सामाजिक मंजूरी के कारण, देश में बढ़ रही भ्रूण हत्या की इस रूग्ण रूढ़िवादी मानसिकता का, विभिन्न घटनाओं के माध्यम से, लाजवाब एवं प्रभावशाली, मनोवैज्ञानिक, यथावत चित्रण करने के साथ-साथ, पाठकों को इस सामाजिक कुरीति के मूल में ले जाकर, जागरूक करने का, लेखक द्वारा उल्लेखनीय एवं साहसिक प्रयास किया गया है।

पुत्रजन्म की निरंतर लालसा रखने वाले परिवार तथा समाज के बीच में, वैचारिक रूप से दृढ़संकल्प स्त्री भी विभिन्न प्रतिकूल परिस्थितियों में किस प्रकार धीरे धीरे टूटकर बिखरने के पश्चात पुन: इस कुरीति के ख़िलाफ़ किस तरह से लड़ने का हौसला जुटाती है, तथा परिवार से विद्रोह कर प्रतियोगी परीक्षा की कठिन तैयारी करती है तथा आईएएस बनकर अपने गाँव-समाज में अपने-आपको पुन: प्रतिष्ठित करती है। गाँव में स्त्रियों के प्रति पुरुष मानसिकता, ससुराल में रहकर अपने दायित्वों का निर्वाह करती स्त्री, प्रसूति कक्ष या गर्भपात के दृश्यों में, एक माँ के मन में उठने वाले वैचारिक झंझावातों का सुंदर चित्रण, स्कूल में सहयोगी महिला-पुरुषों का परिस्थितिजन्य व्यवहार, सहेली मनीषा की मदद से प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी आदि घटनाओं को, क्रमानुसार स्वाभाविक रूप से बहुत ख़ूबसूरत ढंग से उपन्यास में पियोया गया है। उपन्यास के अंत में, ग्रामीण स्त्रियों का वार्तालाप, उपन्यास का सबसे शक्तिशाली पक्ष है जिसमें उपन्यासकार द्वारा शायद यह कहने की कोशिश की गई है कि किरण जैसी कुछ स्त्रियों के अथकनीय प्रयास भी इस दीर्घकालिक सामाजिक कुरीति को दूर करने हेतु पर्याप्त नहीं हैं बल्कि स्त्रियों को आर्थिक एवं मानसिक रूप से स्वावलंबी बनाने के व्यक्तिगत और सामूहिक सामाजिक प्रयासों की पुनरावृत्तियों की एक लम्बी श्रृंखला ही इस सामाजिक सोच को बदल सकती है।

000

अशोक श्रीवास्तव "कुमुद"
141 डी/एच, शिवाजी मार्ग,
राजरूपपुर, प्रयागराज- 211011
उत्तर प्रदेश
मोबाइल- 9452322287

शिवना नवलेखन पुरस्कार

शिवना नवलेखन पुरस्कार

शिवना प्रकाशन द्वारा नए लेखकों को प्रोत्साहन प्रदान करने के लिए 'शिवना नवलेखन पुरस्कार' की शुरुआत की गई है। यह पुरस्कार गद्य साहित्य की विभिन्न विधाओं- कहानी, उपन्यास तथा कथेतर विधा में प्रदान किया जाता है। हर वर्ष किसी एक पांडुलिपि को यह पुरस्कार प्रदान किया जाता है। पुरस्कृत पांडुलिपि का प्रकाशन शिवना प्रकाशन द्वारा किया जाता है। इस वर्ष 2025 हेतु कहानी, उपन्यास तथा कथेतर (डायरी, संस्मरण, रेखाचित्र, यात्रा-वृत्तांत, रिपोर्ताज) विधाओं में लेखकों से पांडुलिपियाँ आमंत्रित की जा रही हैं।

पुरस्कार के लिये नियम तथा शर्तें

1. पुरस्कार के लिए लेखक की आयु 40 वर्ष से अधिक नहीं होनी चाहिए। (जिस वर्ष हेतु पांडुलिपि आमंत्रित की गयी है, उस वर्ष की 31 दिसंबर तिथि तक।) पांडुलिपि के साथ आधार कार्ड की छायाप्रति संलग्न करना आवश्यक होगा।

2. लेखक की पहली किताब होनी चाहिए, इससे पूर्व उसकी किसी भी विधा की कोई किताब प्रकाशित नहीं होनी चाहिए। इस संबंध में एक स्व-हस्ताक्षरित घोषणा पत्र लेखक को पांडुलिपि के साथ भेजना होगा।

3. पांडुलिपि कम से कम चालीस हज़ार तथा अधिकतम अस्सी हज़ार शब्दों की होनी चाहिए। इससे कम या अधिक शब्द संख्या होने पर पांडुलिपि अमान्य कर दी जायेगी।

4. पांडुलिपि 15 अक्टूबर 2025 के पूर्व शिवना पुरस्कार के ईमेल shivna.awards@gmail.com पर प्राप्त हो जाना चाहिए। पांडुलिपि वर्ड डॉक में यूनीकोड फॉण्ट में टाइप होनी चाहिए। किसी अन्य फॉण्ट में होने पर स्वीकार नहीं की जायेगी।

5. पुरस्कृत लेखक को 11,000 रुपये (ग्यारह हज़ार रुपये) नगद राशि प्रदान की जाएगी।

7. लेखक को पांडुलिपि के साथ पुस्तक के मौलिक, स्वलिखित तथा अप्रकाशित होने का हस्ताक्षरित पत्र भेजना आवश्यक है।

8. पांडुलिपि के प्रथम पृष्ठ पर लिखा होना चाहिए- 'शिवना नवलेखन पुरस्कार के लिए'।

9. प्रकाशित पुस्तकों के कॉपीराइट (प्रिंट, डिजिटल तथा ऑडियो) पाँच वर्ष तक लेखक तथा शिवना प्रकाशन के पास संयुक्त रूप से रहेंगे, इस अवधि में लेखक उस पुस्तक को अन्यत्र कहीं से प्रकाशित नहीं करवा सकेगा।

10. पुरस्कार के लिए अंतिम निर्णय निर्णायकों का होगा जो प्रतिभागियों के लिए मान्य होगा।

11. पुस्तक का प्रकाशन शिवना प्रकाशन के निर्धारित मापदण्डों के अनुसार किया जायेगा, उसमें किसी भी प्रकार का कोई परिवर्तन लेखक के अनुरोध पर नहीं किया जायेगा।

12. पुरस्कार के लिए एक पाँच सदस्यों की समन्वय समिति बनायी गई है, लेखक पुरस्कार के बारे में और जानकारी प्राप्त करने के लिए उनसे संपर्क कर सकते हैं। समिति के सदस्य हैं- सुधा ओम ढींगरा (अमेरिका), ज्योति जैन (इन्दौर), शैलेन्द्र शरण (खण्डवा), पारुल सिंह (नई दिल्ली) तथा शहरयार (सीहोर)।

संपर्क- शिवना प्रकाशन, पी. सी. लैब, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मप्र, 466001
दूरभाष- 07562-405545, व्हाट्सएप- +91-8959446244, ईमेल- shivna.awards@gmail.com

(शोधपत्र)

सुधा ओम ढींगरा के साहित्य में आधुनिक विमर्श

शालिनी, शोधार्थी, भाषा विभाग, स्वामी विवेकानंद सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ
डॉ. सीमा शर्मा, सह आचार्य (हिन्दी) एवं अध्यक्ष भाषा विभाग, स्वामी विवेकानंद सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ

बेहतर जीवन और जीविकोपार्जन के लिए व्यक्ति एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रवास करता है, जहाँ उसे जीवनोपयोगी साधन प्राप्त होते हैं। वह उसी स्थान पर स्थाई रूप से बस जाता है। आज वैश्वीकरण और संचार प्रौद्योगिकी के विकास ने प्रत्येक व्यक्ति को विदेश जाने के अवसर प्रदान किए हैं। कुछ प्रवासी भारतीय विदेशों में हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं में साहित्य सृजन कर अपने मूल देश का नाम बढ़ा रहे हैं, तो कुछ लोग विज्ञान और तकनीकी क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। आज हिन्दी साहित्य भारत तक सीमित न रहकर प्रवासी साहित्यकारों के माध्यम से विश्व के कोने-कोने तक पहुँच गया है। हिन्दी को अंतरराष्ट्रीय पहचान दिलाने में प्रवासी साहित्य का महत्त्वपूर्ण योगदान है। व्यक्ति चाहे स्वदेश में रहे या विदेश में, वह अपनी मातृभाषा से जुड़ा रहता है और अपने परिवेश तथा जन्मस्थान को कभी नहीं भूलता। यही कारण है कि प्रवास में भी वह अपनी भाषा और समाज से जुड़ा रहता है।

लगभग तीस वर्षों के लंबे प्रवास काल के दौरान, डॉ. सुधा ओम ढींगरा ने विदेशों में रह रहे प्रवासी भारतीयों के जीवन को बड़ी निकटता से देखा और परखा है और उसे अपने विमर्श का विषय बनाया है। साथ ही, अपने मूल देश और विदेशी समाज का यथार्थ चित्रण भी अपने आधुनिक विमर्श में प्रस्तुत किया है। (1) डॉ. सुधा ओम ढींगरा ने अपने साहित्य में प्रवासी जीवन की जिन समस्याओं का चित्रण और विश्लेषण किया है, उनका अध्ययन करना मेरे इस शोधपत्र का लक्ष्य है। आधुनिक समाज में नए-नए विमर्शों ने अपनी जगह बनाई है, जिनके कारण आज समाज को प्रभावित करने वाले सभी मुद्दों को गंभीरता से उठाया जाता है। साहित्य में भी इन मुद्दों को इसी कारण स्थान मिलता है। समाज आज कई गंभीर मुद्दों से जूझ रहा है। भारत हो या विदेश, सभी जगह कुछ मुद्दों पर विचार-विमर्श किया जाता है, जिनमें प्रमुख रूप से स्त्री विमर्श, दलितों के शोषण और अधिकार के मुद्दे, नस्लवाद पर विदेशी सोच, पुरुष विमर्श, समलैंगिकता और कृषक विमर्श आदि आते हैं। (2) डॉ. ढींगरा ने अपने साहित्य में इन सभी मुद्दों को उठाया है, जिनका विश्लेषण यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

यह कहा जा सकता है कि स्त्री के साथ अन्याय, उत्पीड़न, शोषण, दमन, तिरस्कार और यंत्रणा का इतिहास उतना ही प्राचीन है जितना कि पारिवारिक जीवन का। स्त्री सामान्यत: प्रत्येक समाज का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। इनकी संख्या पुरुषों के लगभग समान है। जहाँ तक भारतीय समाज का प्रश्न है, स्त्रियों की स्थिति बहुत अच्छी नहीं कही जा सकती। न्यूनाधिक रूप से, विदेशों में भी स्त्री की स्थिति ऐसी ही है। वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति सुदृढ़ थी, किन्तु धीरे-धीरे स्मृतिकाल, धर्मशास्त्रकाल और मध्यकाल में उनके अधिकार छिनते गए और पुरुषों की तुलना में उनकी स्थिति गिरती गई। परिस्थितिवश वे परतंत्र, निराश्रित और निर्बल बनती चली गईं। अंग्रेज़ी शासनकाल में देश की राजनीति और सामाजिक क्षेत्र में जागरूकता आने लगी थी,

शालिनी
शोधार्थी, भाषा विभाग, स्वामी विवेकानंद सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ
ईमेल- shalinikumari643@gmail.com
मोबाइल- 7011196838
डॉ. सीमा शर्मा
सह आचार्य (हिन्दी) एवं अध्यक्ष भाषा विभाग, स्वामी विवेकानंद सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ
मोबाइल- 9457034271
ईमेल- sseema561@gmail.com

और समाज सुधारकों तथा चिंतकों ने स्त्रियों की स्थिति में सुधार के प्रयास किए।

स्त्रियों के प्रति भेदभाव, अन्याय, हिंसा और अपराध मात्र वर्तमान युग की घटना नहीं हैं, बल्कि प्राचीन काल से ही किसी न किसी रूप में देखने को मिलते रहे हैं, विशेष रूप से मुग़ल आक्रमण के पश्चात। स्त्रियों के प्रति भेदभाव एक गहरी सामाजिक समस्या है, जो हमारे समाज की पारंपरिक पितृसत्तात्मक व्यवस्थाओं में गहराई से समाहित है। इस भेदभाव के कई रूप हैं, जैसे- शिक्षा, स्वास्थ्य, आर्थिक अवसर, सामाजिक स्तर एवं निर्णायक भूमिकाओं में उनकी सीमित भागीदारी, जिससे उनके मुद्दों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं मिल पाता।

विश्व के सभी देशों में स्त्रियों की स्थिति वहाँ की परिस्थिति और आवश्यकताओं के अनुसार बदलती रहती है। इन बदलती परिस्थितियों में भी स्त्रियों का उत्पीड़न और शोषण लगातार जारी रहता है। डॉ. प्रज्ञा शुक्ल लिखती हैं, "जगत् का इतिहास इस बात का साक्षी है कि नारी के मूलभूत अधिकारों पर सामाजिक, आर्थिक, एवं वैधानिक प्रतिबंध विश्व की सभी सभ्यताओं में विद्यमान थे। स्त्री-हीनता की मान्यता केवल भारत में ही नहीं, बल्कि विकसित और अविकसित पूँजीवादी देशों में भी समाज जीवन की अतल गहराइयों तक फैली हुई है।"(3) स्त्री को वही मिला, जो पुरुष ने दिया। सदियों से सामाजिक व्यवस्था पितृसत्तात्मक रही है। यह ऐसी व्यवस्था है जिसमें पुरुषों का स्त्रियों पर वर्चस्व रहता है।

स्त्री के प्रति अन्याय का तात्पर्य है, उसके पति, माता-पिता, सास-ससुर, भाई-बहन, देवर-ननद, भाभी, या परिवार के अन्य सदस्यों अथवा अन्य व्यक्तियों द्वारा किए गए हिंसात्मक व्यवहार और उत्पीड़न से, जो स्त्री को शारीरिक और मानसिक पीड़ा पहुँचाता है।

स्त्री के प्रति अन्याय और उत्पीड़न के संदर्भ में निधिराज भड़ाना लिखती हैं, "नारी समाज की रीढ़ है, किन्तु नारी प्रत्येक जगह प्रताड़ित होती है—घर में, बाहर, समाज में, अपनों में, परायों में, हर जगह। वह यह प्रताड़ना कभी मर्यादा की खातिर, तो कभी संस्कारों की बेड़ियों में जकड़ी होने के कारण सहती है। हर रोज़ वह रोष का घूँट पीकर रह जाती है। पुरुष स्त्री की इसी कमज़ोरी और लाचारी का फायदा उठाता है। वह उसकी सहनशीलता, मर्यादा, और संस्कार रूपी आचरण को उसकी कमज़ोरी समझता है।

औरत हर पल पुरुष के शोषण को सहन करती रहती है। किन्तु ऐसे कौन से कारण हैं, जो स्त्री को यह सब सहने पर विवश कर देते हैं? शायद सामाजिक भय इसका सबसे बड़ा कारण है, क्योंकि समाज स्त्री को कभी भी स्वतंत्र नहीं होने देना चाहता। पुरुष सदैव नारी पर अपनी सत्ता स्थापित करना चाहता है।"(4)

इस संदर्भ में सुधा ओम ढींगरा की कहानी 'लड़की थी वह' को देखा जा सकता है, जिसमें दिसंबर की कड़ाके की सर्दी में कपड़े में लिपटी नवजात शिशु को कूड़े के ढेर पर फेंक दिया जाता है। यह शिशु एक बालिका है, जिसे किसी स्त्री ने ही फेंका था। कहानी में वर्णित है: "डॉक्टर साहब, इसे देखें, ठीक है ना यह?" उसकी मधुर परंतु उदास वाणी ने मेरी सोच के सागर की तरंगों को विराम दिया। अपने शाल में लपेटकर नवजात शिशु उसने पापा की ओर बढ़ाया। पापा ने गठरी की तरह लिपटा बच्चा खोला—लड़की थी वह।"(5)

स्त्री का जन्म होने से पहले ही भ्रूण हत्या द्वारा उत्पीड़न के षड्यंत्र किए जाते हैं, और यदि उसका जन्म हो भी जाए, तो उसके साथ अन्याय किया जाता है। यहाँ तक कि उसे फेंक भी दिया जाता है।(6)

'क्षितिज से परे' कहानी की नायिका सारंगी, जो मात्र सत्रह वर्ष की आयु में अपने पति सुलभ के साथ अमेरिका जाती है, पर वहाँ उसके साथ दुर्व्यवहार होता है। सारंगी का पति एयरपोर्ट पर उतरते ही पहली बार उसे 'बेवकूफ' कहता है। चार पढ़े-लिखे और सफल बच्चों की माँ होने के बावजूद, चालीस वर्षों तक उसका पति उसे 'बेवकूफ' कहकर पुकारता रहता है। सारंगी ने त्याग और सहिष्णुता की देवी बनकर पत्नी और माँ के सभी कर्त्तव्य निभाए।

कहानी में वर्णित है:

"एयरपोर्ट पर उतरकर मैंने धीरे से पूछा था, ये लोग कौन-सी भाषा बोल रहे हैं? वे ग़ुस्सा गए थे, 'बेवकूफ, अंग्रेज़ी बोल रहे हैं। इतना भी नहीं पता चलता तुम्हें? सारे रास्ते ऊटपटांग प्रश्न करके परेशान कर दिया।' मैं सन्न रह गई थी। सत्रह वर्ष की किशोरी, जो एक नए देश, नए परिवेश और नए लोगों के बीच अपने जीवन को समर्पित करने आई थी, उसका पति न उसे समझाने का प्रयास करता है, न उसकी उत्सुकता शांत करता है, बल्कि डाँट-फटकार कर चुप कर देता है।(7)

समाज में आज भी सत्ता और अधिकार पुरुषों के हाथों में ही केंद्रित हैं। स्त्री को यदि अधिकार दिए भी गए हैं, तो वे अमूर्त हैं। रूढ़ियों और पूर्वाग्रहों के कारण वे व्यवहारिक जगत् में लागू नहीं हो पाते। भले ही स्त्री को पुरुष के समान माना जाता हो, परंतु वास्तविकता में दोनों के बीच एक बड़ा भेद है।

आज भी प्रवासी भारतीय पत्नी को वह स्तर नहीं मिलता, जो विकसित समाज में स्त्री को मिलना चाहिए। उसे केवल बच्चे पैदा करने और पुरुष के कुंठित समय में मारपीट सहने की वस्तु समझा जाता है। सुधा ओम ढींगरा की कहानी 'क्षितिज से परे' में प्रवासी भारतीय पत्नी की दयनीय दशा का यथार्थ चित्रण मिलता है। उनकी कहानियों की स्त्रियाँ शिक्षित और विद्रोही हैं, लेकिन अपने पति के सामने असहाय हैं। कहानी में वर्णित है: "अंतिम मेहमान के जाते ही मेरे पति ने मुझे कसकर थप्पड़ मारते हुए कहा, 'मेहरा और तुम में क्या चल रहा है? हर पार्टी में तुम्हारी तारीफों के पुल बाँधता रहता है। मैंने तुम्हें कपड़े बदलने को कहा था। ऐसा न करके तुमने मुझे नीचा दिखाया है। नीचा दिखाकर ख़ुश रहो, लेकिन यह याद रखना—यह मेरा घर है।"(8)

पुरुष हर जगह, चाहे घर हो या बाहर, स्त्री पर अपना अधिकार जमाने का प्रयास करता है। वह स्त्री की भूमिका और स्थिति को दोयम दर्जे की मानता है। 'क्षितिज से परे' कहानी में सुलभ समाज में अपनी श्रेष्ठता दिखाने के

लिए सारंगी के साथ दुर्व्यवहार करता है और उसे नीचा दिखाने का हर संभव प्रयास करता है। वह कहता है- "मैं यह नहीं सुनना चाहता कि सुलभ का अपनी पत्नी पर कोई रोब नहीं है। वह असफल इंसान है, जो अपनी पत्नी को सँभाल नहीं सकता।"(9) अत: सुलभ सारंगी को अपने जीवन में कोई महत्त्व नहीं देता। वह उसे अपने साथ केवल स्वार्थवश ले जाता है। पश्चिमी परिवेश में स्त्रियाँ मानसिक और शारीरिक दोनों रूपों में शोषित हो रही हैं। (10)

विदेश में प्रवासी भारतीय स्त्री की स्थिति बहुत ही दयनीय हैं क्योंकि वह शारीरिक रूप से तो अन्याय सहती हैं। इसके साथ वह मानसिक रूप से भी अन्याय सहती हैं। परिवार की मत्वपूर्ण सदस्य होने के बाद भी उसे वह दर्जा नहीं मिल पाता जो मिलना चाहिए। पति द्वारा शारीरक व मानसिक रूप से अत्याचार किए जाने से वह निराशा, तनाव तथा अकेलेपन का शिकार रहती हैं।

'कौन सी ज़मीन अपनी' कहानी में मंजीत सिंह पराई धरती पर रहकर दिन-रात मेहनत करता है। वह एक-एक अमेरिकी डॉलर जोड़कर अपने भाइयों को भारत भेजता है ताकि वे इतनी ज़मीन खरीद सकें जिससे वे अपनी बाकी की ज़िंदगी आराम से जी सकें। जब मंजीत की पत्नी इस बात का विरोध करती है, तो मंजीत कहता है, "जाटों की पहचान तो ज़मीनों से होती है।" मंजीत के इस व्यवहार से मानविन्दर कहती है, "पर कितनी पहचान सरदार जी, कहीं तो अंत हो। वर्षों से आपके घर वाले ज़मीनें ही खरीद रहे हैं। पैसों का कोई हिसाब-किताब नहीं है, यहाँ ज़मीन बिकाऊ है, वहाँ ज़मीन बिकाऊ है, यह टुकड़ा खरीद लो, गाँव की सरहद से लगे खेत ले लो। किल्ले पर किल्ले इकट्ठे करते जा रहे हैं।"(11) मानविन्दर का पारा चढ़ते देख मंजीत घर से बाहर दौड़ लगाने चला जाता और अगले दिन ही एक चेक पंजाब नेशनल बैंक में दार जी के नाम भेज देता। मानविन्दर बस रोकर रह जाती है।

इस प्रकार, प्रवासी भारतीय समाज में पत्नी के तौर पर भारतीय स्त्री भी पति की उपेक्षा और मानसिक अन्याय का शिकार होती है। स्त्री विदेश में मानसिक रूप से अन्याय सहती है। वह अपने इस अन्याय को अपने माता-पिता से भी नहीं बताती और उन्हें यह एहसास दिलाती है कि वह विदेश में ख़ुशहाल जीवन व्यतीत कर रही है, जबकि असलियत कुछ और ही होती है।

'आग में गर्मी कम क्यों है' में साक्षी के पति शेखर का जेम्ज के साथ संबंध होता है। शेखर का जेम्ज के साथ संबंध टूटने के कारण शेखर आत्महत्या कर लेता है। साक्षी शेखर की मृत्यु के बारे में अपने माता-पिता को कुछ नहीं बताती।"शेखर की बेवफाई, धोखा उसे तार-तार कर रहा था। अगर उसने भारत फ़ोन किया, तो दोनों के माँ-बाप को इस उम्र में गहरी चोट लगेगी। उसके इर्द-गिर्द के लोग और रिश्तेदारों की सोच उदारवादी नहीं, बेहद संकीर्ण है। शादी से इतर किसी और स्त्री के साथ संबंधों को वे स्वीकार कर सकते हैं, पर पुरुष के साथ नहीं। इस बात को वे नज़रअंदाज़ नहीं कर सकेंगे। परिवारों का जीना वहाँ दूभर हो जाएगा। उसकी बहनों को शादी के लिए लड़के मिलने मुश्किल हो जाएँगे।" (12)

इस प्रकार पश्चिमी परिवेश में भी स्त्री अपनी परंपराओं और संस्कारों से जुड़ी रहती है और अपने प्रति हो रहे अन्याय को सहती रहती है। वह सब मुसीबतों और अन्यायों को अपनी किस्मत का दोष समझकर सहती है। कहीं बच्चों का मोह, कहीं पति का मोह तो कहीं परिवार के मोह में वह सब कुछ सहने के लिए तैयार रहती है।

दलित विमर्श- दलित शब्द भारतीय सामाजिक संरचना में एक महत्त्वपूर्ण और संवेदनशील अवधारणा है। ऐतिहासिक रूप से, निम्न जातियों को, जिन्हें अब दलित कहा जाता है, सामाजिक भेदभाव और अत्याचार का सामना करना पड़ा। भारतीय समाज में जाति आधारित भेदभाव और असमानता के कारण दलित समुदायों ने लंबे समय से उत्पीड़न का सामना किया है। दलित शब्द का अर्थ है दबा हुआ या रौंदा हुआ आदि। संकुचित अर्थ में देखा जाए तो वर्ण व्यवस्था में चतुर्थ वर्ण, जिसे शूद्र कहा गया है, में आने वाली जातियाँ, उप-जातियाँ हैं। दलित लेखक कंवल भारती के शब्दों में, "दलित वह हैं जिस पर अस्पृश्यता का नियम लागू किया गया है, जिसे कठोर और गंदे काम करने के लिए बाध्य किया गया है, जिसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतंत्र व्यवसाय करने से मना किया गया है, और जिस पर सछूतों ने सामाजिक नीयमों की कठोरता लागू की है, वही और वही दलित हैं, और इसमें वही जातियाँ आती हैं, जिन्हें अनुसूचित जातियाँ कहा जाता है।"(13)

दलित विमर्श के अंतर्गत वे सभी प्रश्न आते हैं, जिनका संबंध भेदभाव से है, चाहे वह जातिगत भेदभाव हो, रंग के आधार पर हो, नस्ल के आधार पर हो या लिंग और धर्म के आधार पर हो।

"साहित्य में दलित विमर्श की तीन धाराएँ दिखाई देती हैं। पहली धारा स्वयं दलित जातियों में जन्में लेखकों की है, जिनके पास स्वानुभूतियों का विशाल भंडार है और इसी आधार पर वे मानते हैं कि वास्तविक अर्थों में उनका सृजन ही दलित साहित्य है। दूसरी धारा हिंदू लेखकों की है, जिनके रचनात्मक संसार में दलितों का चित्रण सौंदर्य-सुख के विषय के रूप में होता है। तीसरी धारा प्रगतिशील लेखकों की है, जो दलितों को सर्वहारा की स्थिति में देखते हैं।"(14)

दलित विमर्श विचारधारा में चार्वाक लोकायत, बौद्ध धर्म और सिद्धों, नाथों, कबीर, रैदास जैसे भक्त कवियों के प्रवचनों से मजबूत आधार प्राप्त करता है। 20वीं शताब्दी के अंतिम दशकों में भारतीय साहित्य में दलित विमर्श ने अपनी विशिष्ट छाप छोड़ी। दलित लेखकों ने अपनी स्वानुभूतियों से अत्यधिक साहित्य रचा, जिनमें ज्योतिबा फुले, ओम प्रकाश वाल्मीकि, सूरजपाल चौहान, चंडिका प्रसाद जिज्ञासू, कंवल भारती, शरण कुमार लिम्बाले आदि लेखकों ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। वहीं, अन्य लेखक जिन्होंने सहानुभूति और संवेदनाओं को अपनाकर दलितों की कठिनाइयों को साहित्य में उजागर किया, उनमें प्रेमचंद, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, सोहनलाल द्विवेदी आदि शामिल हैं।

प्रवासी साहित्यकार सुधा ओम ढींगरा ने भी दलित समस्या को अपने साहित्य में स्थान दिया। उनकी कुछ प्रमुख कहानियाँ इस समस्या पर आधारित हैं, जिनमें दृश्य भ्रम, परिचय की खोज, और अँधेरा उजाला शामिल हैं।

कहानी दृश्य भ्रम में इरा कोडा, जो एक चर्मकार की बेटी है, का प्रेम संबंध उच्च जाति के लड़के जशन पंडित से हो जाता है। जशन के दादा-दादी की पुरानी सोच के कारण उन्हें अपने पोते का छोटी जाति के लोगों से मिलना पसंद नहीं है, लेकिन जशन की माँ उसे सभी से समान व्यवहार करने की शिक्षा देती है। जशन के परिवार के लोग मानते हैं, "छोटी जात वालों की क्या प्रशंसा करनी। ये लोग सिर्फ हमारा काम करने के लिए होते हैं, तारीफ के लिए नहीं।"(15) "कर्नल वेद पंडित का पोता किसी चर्मकार की बेटी से हाथ मिलाए, इसमें बड़ा अपमान और क्या हो सकता हैं।"(16) जशन की दादी के कथनानुसार, "इस लड़की इरा कोडा को देखो। हैं कोई शर्म हया। सारा दिन लड़कों के साथ खेलती हैं। बाप चमड़े का काम करता था, अमेरिका से आए किसी गोरे से पहचान हो गई और वह उसे अपनी दुकान पर काम करने के लिए वहाँ ले गया। अभी तक परिवार को इसके बाप ने अपने पास नहीं बुलाया, पैसे ख़ूब भेज देता हैं, इसलिए यहाँ घर लिया हुआ हैं, और सीना तानकर हमारी तरह जीते हैं। पेट भरे हुए हैं और कुछ ज़्यादा ही खा रहे हैं, तभी तो इतनी अकड़ हैं। घर में कोई रोकने टोकने वाला नहीं, और यह खुले पंछी – सी उड़ती फिरती हैं, पता नहीं किस-किस डाल पर बैठती हैं। इन सबके बदन से चमड़े की बू आती हैं। हैरान हूँ की जशन कैसे साथ खेलता हैं।" (17)

उच्च जाति के लोग पुरानी मान्यताओं के नीचे दबे रहते हैं, वे कभी भी किसी दलित जाति के व्यक्ति को ऊपर उठाता नहीं देख सकते। जशन की दादी ने जैसे ही यह समझा की जशन और इरा का प्रेम संबंध है, वह एक घिनौना प्लान बना लेती है, जिसकी आग में उनका अपना पोता बीस साल तक जलता रहता हैं। जाति बंधन के संस्कारों में बंधी नीच जात के प्रति उनकी घृणा क्या प्यार से अधिक शक्तिशाली हो गई जो अपने पोते को ही घायल कर गई। पढ़े-लिखे ही अपनी सोच रोशन नहीं कर पाए तो अनपढ़ों, अज्ञानियों का क्या होगा। (18) कभी कभी तथाकथित उच्च जाति के लोग अपनी पुरानी मान्यताओं में इतने बंधे होते हैं कि वे कभी किसी दलित जाति के व्यक्ति को ऊपर उठते हुए नहीं देख सकते।

कहानी परिचय की खोज में भानु जोशी, जो एक उच्चवर्गीय नायक है, निम्नवर्गीय युवती मंदा के साथ अपना अकेलापन बाँटता है, लेकिन उसे कभी सम्मान नहीं देता। भानु मंदा की असहाय स्थिति का फायदा उठाकर कुछ समय के लिए सुख प्राप्त करता है, लेकिन जब मंदा अपने बेटे के अधिकार की माँग करती है, तो उसे पागल कहकर निकाल दिया जाता है। मंदा अपने दुख को स्वीकार करती है, लेकिन बाद में यह महसूस करती है कि वह सिर्फ भानु के लिए अकेलापन दूर करने का साधन थी। (19) इन कहानियों के माध्यम से सुधा ओम ढींगरा ने दलित और महिलाओं की मानसिक और सामाजिक पीड़ाओं को उजागर किया, जो भारतीय और पश्चिमी समाज दोनों में समान रूप से मौजूद हैं।

'अँधेरा उजाला' कहानी भी पुरानी पीढ़ी की दलितों के प्रति सोच को दर्शाती है, जहाँ एक दादी थी, जिन्होंने कभी नीची जाति के लोगों को घर में घुसने नहीं दिया, और उनके व्यवहार के कारण परिवार के लोग चाहकर भी इस सामाजिक दूरी को भरने में असमर्थ थे। दादी जी घर में जिस तरह का हंगामा करती थीं, उससे सभी कतराते थे। वीरां और मनोज के जाने के बाद दादी जी पूरा आँगन धुलवातीं और साथ-साथ मम्मी और पापा की सोच को कोसती रहतीं, "भाड़ च भेजो ऐदादी दरियादिली नू, आग लग जाए एदादी सोच नू ऐह गंद ढोन वाले साढ़े साहमणे किंदा बैठ सकदे ने" (भाड़ में भेजूँ ऐसी दरियादली को, आग लगे ऐसी सोच को, ये गंद ढोने वाले हमारे सामने कैसे बैठ सकते हैं?) कई दिनों तक उन्हें बदबू आती रहती और आँगन घुलता रहता। पूरे परिवार को बहुत कोफ्त होती, पर दादी जी को कोई कुछ नहीं कहता था।"(20)

समय बीतते-बीतते लोगों की सोच बदली, लेकिन इतनी नहीं कि दलितों को अपने घर में आने की छूट मिल जाए, जिसका ज़िक्र इस कहानी में कई जगह किया गया है। मनोज पंजाबी, जिसका परिवार लोगों के घर शौचालय सफाई का काम करता था, वह समय के साथ बड़ा होकर बड़ा गायक बन जाता है, तो उसे घर में सम्मानपूर्वक बुलाया तो जाता है, लेकिन बाहर के आँगन में ही बिठाया जाता है। लोगों की मानसिकता समय के साथ पूरी नहीं बदल पाती। इला, जो मनोज पंजाबी की गायकी की दीवानी थी, वह उसके साथ हुए व्यवहार पर प्रतिरोध करती है। वह कहती है, "हाँ, नहीं आई थी बदबू... मुझे सिर्फ यही ख़ुशबू आई थी, जो उसने लगाया हुआ था... वह जागरण करता है, देवी माँ के चरण स्पर्श करता है, उसे छूता है, जब देवी माँ को उससे बदबू नहीं आती, तो मुझे कैसे आती? आप भी तो सब उसके साथ चिपट-चिपट कर तस्वीरें खिंचवा रहे थे, आई आपको बदबू?"(21)

इला उच्च शिक्षा प्राप्त कर इन जातिगत उच्च-नीच से दूर थी। वह चाहती थी कि उच्च-नीच की भावना समाप्त हो जाए। इला के माता-पिता भी इसी विचारधारा के थे, परंतु बड़े बुज़ुर्गों के दबाव में खुलकर इस भेदभाव का विरोध नहीं कर पाते थे, जिसका ग़ुस्सा इला में हमेशा रहा। अमेरिका जाने के बाद इला इस ऊँच-नीच की विचारधारा से पूरी तरह मुक्त हो गई थी, क्योंकि "अमेरिका खुले विचारों वाला, समृद्ध, प्रगतिशील देश है। जात-पात, ऊँच-नीच का कोई भेदभाव नहीं। किसी को भी दहलीज़ के बाहर नहीं बैठाया जाता, घर के भीतर एक ही सोफे पर सब बैठते हैं।"(22) धीरे-धीरे समाज में बदलाव आ रहा है, पर अभी और बदलाव की ज़रूरत है। जैसे प्रवास में ये सभी लोग भारतीय हैं, वहाँ जाति का बंधन नहीं है। बस वही स्थिति भारत में हो जाए तो भारत विकास के पथ पर और अधिक तेज़ी से अग्रसर हो जाएगा।

पुरुष विमर्श- साहित्य में निरंतर सभी वर्गों

पर स्त्री, दलित, वृद्ध, विकलांग या आदिवासी पर विमर्शों के रूप में चर्चा होती रही है, पर वहीं एक वर्ग है पुरुष, जिसे आज के समय में इन ही विमर्शों के अंतर्गत एक चर्चा का विषय बनाया जा रहा है। यह कहा जा सकता है कि पुरुष को विमर्श की ज़रूरत क्या है? परंतु आज के समय में पुरुष भी पीड़ित हैं और ज़्यादा सोचने का विषय यह है कि वह अपनी पीड़ा को किसी के सामने रख नहीं पाता, क्योंकि अपनी पुरानी सोच और मानसिकता के चलते हमारे मन में सर्वप्रथम यही बात आती है कि पुरुष का शोषण कैसे हो सकता है? पर यह सत्य है कि जब से पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति हुई, तभी से मनुष्यों का विभाजन दो समूहों में हो गया था - शक्तिशाली पुरुष और स्त्री, कमज़ोर पुरुष और स्त्री। कमज़ोर पुरुषों का शोषण शक्तिशाली पुरुषों और स्त्रियों ने किया, इन पुरुषों से गुलामी करवाई, मानसिक शोषण किया। मातृसत्तात्मक व्यवस्था में पुरुषों का यौन शोषण भी किया गया। आज के समय में भी पुरुषों का शोषण हो रहा है। बालकों का वरिष्ठजनों के द्वारा शोषण किया जाता है। कॉलेज और विश्वविद्यालयों में युवा छात्रों का तथाकथित प्रोफ़ेसरों द्वारा शारीरिक और मानसिक शोषण किया जाता है। युवा छात्रों की आवाजों को दबाया जाता है। आजकल दुनिया के महानगरों में पुरुष वेश्यावृत्ति का प्रचलन बढ़ रहा है। स्त्रियों की रक्षा के लिए बने कानूनों का दुरुपयोग करके पुरुषों का शोषण किया जाता है। इन्हीं परिस्थितियों के कारण अब साहित्य में पुरुष विमर्श पर चर्चा की जा रही है, जिसमें पुरुषों के सामाजिक और राजनीतिक शोषण से मुक्ति और सभी पुरुषों को हर क्षेत्र में समानता का अधिकार प्राप्त होना ही मुख्य ध्येय है।

पुरुष की चरित्रगत विशेषताओं एवं उनके सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के विश्लेषण को पुरुष विमर्श कह सकते हैं। पुरुष आरंभ से ही समाज का केंद्र बिंदु रहा है। समाज की सभी गतिविधियों में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से शामिल रहा है। परिवार, समाज व्यवस्था का मूल और प्राथमिक संस्था है, और पुरुष इस संस्था का केंद्र बिंदु रहा है। वह परिवार के सभी कार्यों में प्रमुख पात्र की भूमिका का निर्वाह करता है। वह परिवार के संरक्षक के रूप में उपस्थित होता है। परिवार की सभी जिम्मेदारी उसी की होती है। पुरुष अपने इस दायित्व निर्वाह के पथ में उठने वाले सभी सवालों, समस्याओं तथा जटिलताओं का सामना करते हुए किस तरह से अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर होता है, इसकी ओर प्रकाश डालने की प्रक्रिया पुरुष विमर्श कहलाती है।

सुधा ओम ढींगरा ने 'पासवर्ड' और 'वह कोई और थी' कहानी में अभिनंदन और सपना तथा साकेत और तन्वी के माध्यम से वैवाहिक रिश्तों के उस रूप को दिखाया है, जिसके द्वारा आर्थिक रूप से संपन्न लड़कियाँ किस तरह भोले-भाले लड़कों का शोषण करती हैं। विवाह संस्था को मज़ाक बना देती हैं, क्योंकि उनके पास पैसे की ताकत होती है। सपना अपने आर्थिक रूप से सुदृढ़ होने के कारण भारत के सीधे-साधे अभिनंदन को अपने जाल में फंसाकर शादी कर लेती है। उसका मानना है, "अपने पुरुष को पप्पी (छोटा कुत्ता) बनाकर रखो, तलवे चाटेगा।"(23) इसी कारण भारत में अभिनंदन को अपना सौम्य और शिष्ट रूप दिखाया, क्योंकि वह जानती थी कि आर्थिक रूप से कमज़ोर अभिनंदन को फँसाना आसान है। सपना कहती है, "डैड, हिंदुस्तान के लोग भावनात्मक बेवकूफ होते हैं। दिमाग़ से काम लेना जानते ही नहीं। दिल हथेली पर लिए घूमते रहते हैं। पाँव छूकर, मीठा बोलकर बड़ों को आदर देकर कुछ भी करवा लो इनसे, हर समय संस्कारों की दुहाई देते हैं... क्या हैं संस्कार?"(24)

आर्थिक रूप से संपन्न होने के कारण पिता के अत्यधिक लाड़-प्यार के कारण सपना बहुत ही बदमिजाज है। वह अभिनंदन को पति रूप में स्वीकार नहीं करती, बल्कि उसे घर के नौकर के रूप में रखती है। वह कहती है, "डैड, आप हमेशा से एक नौकर चाहते थे, जो आपके इशारों पर नाच सके। भारत के नौकर को मिस कर रहे थे। ले आई हूँ आपके लिए पढ़ा-लिखा, सीधा-साधा नौकर। मिलिए अभिनंदन वत्स उर्फ नंदू से।"(25)

विदेश में नौकरी करने और सम्मान से जीने का एक ही उपाय है कि वहाँ का ग्रीन कार्ड मिल जाए। भारत में हो रही नौकर की कमी ने भी भारतीयों को विदेश जाने के लिए बाध्य किया। पर ग्रीन कार्ड के नाम पर कई बार लड़के भी शोषण का शिकार होते हैं। अभिनंदन भी न चाहते हुए सपना के जाल में फंस गया और उसके शोषण का शिकार हुआ। "वह नया-नया इस देश में आया था। शादी के बाद वर्क परमिट के लिए हर तरह से सपना और उसके परिवार पर निर्भर था। बेकसूर होते हुए भी क्षमा उसे ही माँगनी पड़ती। सपना उसे हारा हुआ महसूस करवाती और उसकी इच्छा के विरुद्ध सहवास करती।"(26)

'पासवर्ड' कहानी में साकेत और तन्वी के माध्यम से पुरुष विमर्श को उजागर किया गया है। साकेत अमेरिका में रहने वाला आर्थिक रूप से संपन्न, सफल युवक है जिसे भारतीय संस्कारी युवती से विवाह करना है। (27) तन्वी सीधी और संस्कारी बनकर धोखे में रखती है। तन्वी अमेरिका की नागरिकता (ग्रीन कार्ड) के लिए साकेत से विवाह करती है और उसके साथ दोस्त बनकर रहती है। पत्नी होने का दायित्व वह नहीं निभाती, तभी वह साकेत से दूरी बनाकर रखती है। वह नहीं चाहती कि साकेत उसके करीब आए। (28) "तन्वी उसे अति उत्साही, महत्त्वाकांक्षी और ओवर स्मार्ट लड़की लगी, जिसकी तीखी पैनी नज़र और सोच सिर्फ अपना लक्ष्य देखती है। जिसके लिए शादी दूसरे नंबर पर है।"(29) जल्दी ही साकेत को तन्वी का असली रूप देखने को मिल जाता है जब वह तन्वी के वीजा के प्रार्थना पत्र पर हस्ताक्षर करना भूल जाता है। तन्वी उससे कहती है, "साकेत, मैंने तुम्हें समझने में भूल की। सोचती थी कि तुम विदेश में रहते हो, तुम्हारी सोच प्रगतिशील होगी। तुम जान-बूझकर साइन नहीं करके गए ताकि मैं तुम्हारी मिन्नतें करूँ और तुम्हारे सामने बिछ जाऊँ।"(30) मिस्टर साकेत पाठक, मैं आधुनिक लड़की हूँ, अपने अधिकार के प्रति सजग हूँ। तुम्हें वापिस आते ही साइन तो करने

पड़ेंगे, यह मेरा हक है। वीज़ा तो मैं लेकर रहूँगी।"(31)

नस्लवाद- नस्लवाद शब्द नस्ल से बना हुआ हैं। अंग्रेजी के 'रेसिज़्म' शब्द का हिन्दी अनुवाद नस्लवाद हैं। अंग्रेज़ी भाषा में इस शब्द का प्रथम प्रयोग 1508 में हुआ था। 18 वी सदी में पहली बार नस्ल शब्द के द्वारा मनुष्यों के शारीरिक गुणों की और इशारा किया गया था। इसी के द्वारा "एक सामाजिक प्रक्रिया का सूत्रपात हुआ, जिसको नस्लीकारण कहा जा सकता है और उसके वर्गीकरण की विधि विकसित हुई। यूरोप की ऐतिहासिक रचनाओं में और फिर भेद भरे ढंग से विश्व जनसंख्या के लिए प्रयोग हुई।"(32) ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी में नस्लवाद की परिभाषा इस प्रकार है, "यह विश्वास की हर नस्ल के लोगों में कुछ ख़ास खूबियाँ होती हैं तो उस दूसरी नस्ली से कमतर या बेहतर बनती हैं।"(33) नस्लवाद का मुख्य कारण किसी एक नस्ल की श्रेष्ठ होने ही भावना है, उस नस्ल में यह पूर्वाग्रह होना हैं की हमें ईश्वर ने श्रेष्ठ बनाया हैं। हमारा रंग रूप सामाजिक स्थिति अन्य लोगों से बेहतर है। ये लोग स्वयं को दूसरे से अलग मानकर अहंकार का भाव धारण कर लेते हैं। संयुक्त राष्ट्र के सगागम के मुताबिक "नस्लीय भेदभाव के आधार पर श्रेष्ठता, वैज्ञानिक दृष्टि से ग़लत, नैतिक रूप से निंदनीय, सामाजिक अन्याय और खतरनाक है और नस्लीय भेदभाव के लिए औचित्य नहीं है, सिद्धांत में या व्यवहार में, कही भी।"(34) नस्लवाद की शुरुआत पश्चिम में दास व्यवहार के द्वारा प्रारंभ हुई थी और आगे चलकर दक्षिण अफ्रीका में रंग भेद की नीति इसी नस्लवाद की पराकाष्ठा थी, जिसे समाप्त करने के लिए नेल्सन मण्डेला ने निरंतर संघर्ष किया। इसी का एक रूप यहूदी नरसंहार के रूप में भी देखा गया जो इस बुराई का क्रूरतम उदाहरण है। नस्लवाद आज भी पूरी तरह से समाप्त नहीं हुआ है, वह विदेशों आज भी देखने को मिल ही जाता है। 25 मई 2020 को अमेरिका में जार्ज फ्लायड नाम के व्यक्ति को पुलिस द्वारा मार दिये जाने पर नस्लीय आंदोलन तीव्र गति से चले थे, जिन्होंने फिर से नस्लवाद के घिनौने रूप को सामने ला दिया था। सुधा ओम ढींगरा ने भी अपने साहित्य में नस्लवाद को दर्शाया है। उनकी कहानी 'सूरज क्यों निकलता है', 'यह खत उस तक पहुँचा देना', 'खिड़कियों से झाँकती आँखे' में नस्लवाद की चर्चा हुई है।

दो संस्कृतियों का जब मिलन होता है तो वहाँ पर हमेशा कुछ तनाव पैदा होता ही है आपस में मिलने-जुलने में जहाँ नई पीढ़ी ख़ुद को बंधनों से मुक्त करना चाहती है, परंतु पुरानी रूढ़िवादी विचारों में जकड़ी पुरानी पीढ़ी इन संबंधों को समझना नहीं चाहती। उनके लिए उनकी सोच और विचार ही आगे रहते हैं। नस्ल भेद के मुद्दे पर तो वे और भी ज़्यादा गंभीर हो जाते हैं। 'यह खत उस तक पहुँचा देना' कहानी में विजय और जैनेट इसी नस्लभेद की नीति के शिकार होते हैं। अंतत: दोनों को अपनी जान गंवानी पड़ती है। जैनेट सेंट लुईस के मेयर की बेटी है जो की एक शैक्षिक भ्रमण के लिए मुंबई जाती है जहाँ विजय जैनेट के प्यार से बंध इण्डिया से अमेरिका शोध कार्य करने चला आता है। पर उसे पता नहीं होता की जैनेट के पिता नस्लवाद को बहुत अधिक मानते हैं। दीपाली के कथन से यह स्पष्ट है, इसे पता है मेयर नस्लवादी है। वह कभी बर्दाश्त नहीं करेगा की उसकी बेटी एक भारतीय से संबंध रखे.. "प्लीज विजय को समझाइए, मेयर कंजरवेटिव, सनकी और रूढ़िवादी पॉलिटिशियन हैं।"(35)

दिपाली बार-बार विजय को समझाने की कोशिश करती है, लेकिन कहीं न कहीं उसे लगता है कि शायद मेयर अपनी बेटी के लिए स्वयं को बदल ले, पर शंका का बीज हमेशा बना रहता है। हार्दिक उसे समझाते हुए कहते हैं, "अश्वेतों और दूसरे इमिग्रेंट्स के बारे में उनकी जो राय है, उसको देखकर नहीं लगता कि मेयर राजी हो जाएँगे। खैर, समय ही इसका उत्तर देगा।"(36) लेकिन समय ने भी उत्तर नकारात्मक ही दिया। मेयर ने राजनीति और षड्यंत्र के साथ विजय को दोषी साबित कर दिया। बहुत से ग़लत कामों में उसका नाम जोड़ा गया और छल से भारत वापस भेज दिया गया। दीपाली ने बताया, "वह सब इमिग्रेशन वाले बाँधकर लाए थे, तभी तो मुंबई एयरपोर्ट पर उतरते ही उसे ड्रग डीलर, ड्रग माफिया का सदस्य और गैंगस्टर पता नहीं क्या-क्या बना दिया गया। पॉलिटिशियन्स किसी भी देश के हों, सब एक जैसे होते हैं।"(37) "एक भोला, नादान और अच्छा इंसान घटिया राजनीति, नस्लवाद और रंगभेद की बलि चढ़ गया।"(38) नस्लवाद और रंगभेद ने दो लोगों की जान ले ली और सियासत को फर्क तक नहीं पड़ा। (39)

नस्लभेद के कारण प्रतिभाशाली लोग अपने कार्यस्थल पर सम्मान नहीं पाते। कई बार इसी कारण से उनकी अच्छी जगह पर नियुक्ति को प्राथमिकता नहीं दी जाती। पहले अपने लोगों को अच्छी जगहों या बड़े शहरों में नियुक्त किया जाता है, उसके बाद दूर-दराज़ के छोटे इलाकों में अन्य नस्ल और वर्ण के लोगों को भेजा जाता है। जैसा कि 'खिड़कियों से झाँकती आँखें' में सागर मालिक के साथ यही होता है। "तीन साल की रेजीडेंसी में यह ज़रूर समझ गया कि भारत या पाकिस्तान से पढ़कर आए डॉक्टरों को नौकरी ग्रामीण या दूर-दराज़ के छोटे-छोटे शहरों या कस्बों में मिलती हैं, जहाँ स्थानीय डॉक्टर जाना नहीं चाहते। हाँ, पैसा बहुत मिलता है।"(40)

समलैंगिक विमर्श- साहित्य समाज में घटने वाली सभी घटनाओं को अपने में समाहित करता है। वह हर वर्ग की आवाज़ को अपने में समेट लेता है। समाज में फैली बुराइयों को एक विमर्श का नाम देकर उसे लोगों तक पहुँचाने का काम साहित्य और साहित्यकार का है। समलैंगिकता भी एक ऐसा ही मुद्दा है जिस पर बहुत से लेखकों ने अपनी कलम चलाई है और उसे समाज में स्वीकृति दिलाने में भरसक प्रयत्न किया है। सबसे पहले यहाँ यह जानना आवश्यक है कि समलैंगिकता क्या है?

समलैंगिकता वह अवस्था है जिसमें एक व्यक्ति समान लिंग के अन्य व्यक्तियों के प्रति यौन और रोमांटिक आकर्षण महसूस करता है। इसे तीन प्रमुख श्रेणियों में बाँटा जा सकता है: पुरुष समलिंगी (Gay), महिला

समलिंगी (Lesbian), और उभयलिंगी (Bisexual), जो दोनों लिंगों के प्रति आकर्षित होते हैं। समलैंगिकता के लिए एक व्यापक शब्द LGBT (Lesbian, Gay, Bisexual, Transgender) का प्रयोग किया जाता है, जो इन विभिन्न पहचानों को समाहित करता है। यह एक स्वाभाविक और व्यक्तिगत पहचान है, जिसे न तो मानसिक बीमारी माना जा सकता है और न ही इसे ठीक करने की आवश्यकता होती है। आधुनिक समाज में कई देशों ने समलैंगिकता को कानूनी मान्यता दी है और समलैंगिक विवाह को स्वीकार किया है, जबकि कुछ देशों में इसे अभी भी अवैध और पाप माना जाता है। समलैंगिकता का अस्तित्व सभी संस्कृतियों और देशों में पाया गया है, पर राजनीतिक कारणों के कारण कई देश इसे नकारते हैं।

समलैंगिकता का अर्थ किसी व्यक्ति का समान लिंग के लोगों के प्रति यौन और रोमांटिक रूप से आकर्षित होना है। वे पुरुष जो अन्य पुरुषों की ओर आकर्षित होते हैं, उन्हें पुरुष समलिंगी या गे कहा जाता है, और जो महिलाएँ अन्य महिलाओं की ओर आकर्षित होती हैं, उन्हें महिला समलिंगी या लेस्बियन कहा जाता है। और जो लोग महिला और पुरुष दोनों की ओर आकर्षित होते हैं, उन्हें उभयलिंगी कहा जाता है। इनके लिए एक टर्म LGBT (Lesbian, Gay, Bisexual, Transgender) का प्रयोग किया जाता है। समलैंगिकता का अस्तित्व सभी संस्कृतियों और देशों में पाया गया है, पर राजनीतिक कारणों के कारण कई देश इसे नकारते हैं।

आधुनिक दौर में बहुत से देश समलैंगिकता को स्वीकार कर रहे हैं और इन लोगों को अपमान से बचाने और सम्मानपूर्वक जीवन जीने के लिए कानून बनाए जा रहे हैं। कई देशों में समलैंगिक विवाह भी मान्यता प्राप्त कर रहे हैं। भारत में भी धारा 377 को हटाकर एक आधुनिक समाज में इन्हें कुछ सम्मान दिलाने की कोशिश की जा रही है।

भारतीय साहित्य में समलैंगिकता पर चर्चा की शुरुआत कुछ प्रमुख लेखकों ने की। सूर्यकांत त्रिपाठी निराला ने अपने उपन्यास 'कुल्ली भाट' के माध्यम से इस विषय को साहित्य में स्थान दिया। इसके बाद राजकमल चौधरी ने अपनी रचनाओं 'मछली मरी' हुई और 'अग्निनान' में, और इस्मत चुगताई ने अपनी कहानी 'लिहाफ' और उपन्यास 'टेढ़ी लकीर' में समलैंगिकता को मुख्य मुद्दा बनाया। इन लेखकों ने समलैंगिकता की सामाजिक स्वीकृति, मानसिकता और संघर्ष को उजागर किया। इसके अतिरिक्त, सिनेमा के माध्यम से भी इस विषय पर जागरूकता फैलाने की कोशिश की जा रही है, ताकि समाज में समलैंगिकता के प्रति समझ और स्वीकृति बढ़े।

सुधा ओम ढींगरा ने अपनी कहानी 'आग में गर्मी काम क्यों है' में समलैंगिकता के मुद्दे को उठाया है। इस कहानी में एक भारतीय परिवार को विदेशी पृष्ठभूमि में दिखाया गया है, जिसमें शेखर शादी के कुछ सालों बाद यह महसूस करता है कि वह महिलाओं की बजाय पुरुषों को अधिक आकर्षित होता है। इस भ्रम और अपने आकर्षण की स्थिति को समझने के लिए वह एक मनोचिकित्सक से मिलकर इसके बारे में जानकारी प्राप्त करता है। मनोचिकित्सक उसे बताते हैं, "अभी नए शोध से पता चला है कि पुरुषों में भी मेनोपॉज होता है, जिसे एंड्रोपॉज कहते हैं और उनमें धीरे-धीरे शारीरिक परिवर्तन होते हैं, महिलाओ की तरह एकदम नहीं। बाई-सेक्सुअल इंसान उम्र के किसी भी हिस्से में, स्त्री-पुरुष, दोनों की तरफ आकर्षित हो सकता है और मेरी बदकिस्मती है कि मैं बाई-सेक्सुअल हूँ।"(41) इस संवाद के जरिए सुधा ओम ढींगरा ने समलैंगिकता और बाई-सेक्सुअलिटी के बारे में समाज में बढ़ती जागरूकता और स्वीकृति की आवश्यकता को दर्शाया है।

साक्षी शेखर के शरीर के इस गणित को समझ जाती हैं, लेकिन फिर भी वह द्वंद्व में हैं, क्योंकि जिस प्रकार से उसे इन बातों का पता चला, वह अधिक कष्टकारी थी। वह कहती हैं, "हरमोज के अनुसार की मात्रा के गणित को स्वीकार करती हूँ और आपकी इस शारीरिक संरचना को स्वीकार करती हूँ। बता देते तो शायद इतनी चोट नहीं पहुँचती। आपसे प्यार किया है, विश्वास किया होता मुझे पर। आपकी इस शारीरिक प्रक्रिया से मैं बेख़बर थी। आप इतने दिन दो रिश्तों में पिसते रहे। जिसे प्यार किया जाता है, उसे तकलीफ में देखना, प्यार करने वाले के लिए कष्टकारी होता है।"(42)

सुधा ओम ढींगरा ने इस मुद्दे को लेकर अपनी कहानी को बहुत ही बारीकी से रचा है। साक्षी की सोच बहुत ही वैज्ञानिक है, जो भारतीय महिला होने के बावजूद इस मुद्दे को वैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर समझते हुए शेखर को मुक्त कर देती है। लेकिन साथ ही, वह एक शर्त भी रखती हैं, "एक विकल्प दे रही हूँ कि बच्चों को थोड़ा बड़ा होने तक, जिस तरह से जीवन चल रहा है, अगर चला सके तो हम सबके लिए बेहतर होगा।"(43)

साक्षी भारत में अपने सास-ससुर और माता-पिता को इस बात की जानकारी नहीं देतीं, क्योंकि वह जानती हैं कि वहाँ समलैंगिकता को एक बीमारी समझा जाएगा और लोग उसके परिवार को हेय दृष्टि से देखेंगे। इसके कारण उसके परिवार में समाज से दूरी बन जाएगी और बच्चों के विवाह आदि में भी परेशानी आएगी। साक्षी सभी परिस्थितियों का समझदारी से सामना करती हैं। वह उन दुख भरे क्षणों में भी स्वयं को टूटने से बचाती हैं। जब पहली बार वह जेम्स और शेखर को एक साथ देखती हैं, तो वह शेखर से कहती हैं, "और मैं अपने आपको दोषी मानती रही। मेरे अंदर की औरत रोज़ टूटती और बिखरी रही। तुम क्यों मुझे समझना नहीं चाहते थे, यह मैं अब जान गई हूँ। मैं तुम्हारी व्यस्तता के आवरण में अपनी ख्वाहिशों, अपने जज़्बातों को ढकती रही। मर्द हो न, सिर्फ अपने बारे में सोचते रहें, अपनी चाहते पूरी करने में लगे रहे। मैं तो सिर्फ औरत हूँ, मेरी औकात, मेरा वजूद ही क्या हैं।"(44)

सुधा ओम ने साक्षी के रूप में बहुत मजबूत चरित्र गढ़ा है, जबकि शेखर अपनी

शारीरिक ज़रूरतों के बदलने के कारण स्वयं को कमज़ोर पाता है। वह जेम्स के छोड़कर जाने को सहन नहीं कर पाता और आत्महत्या का कदम उठाता है। आत्महत्या करने से पहले लिखे पत्र में वह लिखता है, "जेम्स उसे किसी और के लिए छोड़ गया, वह उसका अलगाव सहन नहीं कर सका। वह जेम्स को बहुत प्यार करता था, अब उसके जीवन का कोई अर्थ और औचित्य नहीं रहा। ऐसे जीवन को समाप्त करना उसने बेहतर समझा।"(45)

कृषक विमर्श भारतीय साहित्य का एक महत्त्वपूर्ण पहलू है, जो किसानों की कठिनाइयों और उनके संघर्षों को सामने लाता है। भारतीय किसान, जो देश के सबसे बड़े अन्नदाता होते हुए भी अपनी मूलभूत ज़रूरतों के लिए संघर्ष करते हैं, अक्सर उपेक्षा का शिकार होते हैं। औद्योगिकीकरण और शहरीकरण के कारण किसानों की स्थितियाँ बदतर होती जा रही हैं। कृषि भूमि को उद्योगों और इमारतों के निर्माण के लिए प्रयोग किया जा रहा है, जिससे कृषि संकट और गहरा रहा है।

आज के भारत में, किसान अपनी फसलों से इतनी कमाई नहीं कर पाते कि वे अपने परिवार की आवश्यकताओं को पूरा कर सकें। उनकी कठिन मेहनत और परिश्रम के बावजूद, उचित मूल्य न मिलने के कारण वे क़र्ज़ में डूबे रहते हैं। किसानों का यह कठिन जीवन अब आत्महत्या जैसी दुखद घटनाओं में तब्दील हो गया है। सरकारी योजनाएँ और योजनाओं का सही क्रियान्वयन न होने के कारण किसान अपनी स्थिति में कोई बदलाव महसूस नहीं कर पाते। यही कारण है कि भारत के विभिन्न हिस्सों में किसान आत्महत्या करने के लिए मजबूर हो रहे हैं।

भारतीय साहित्य में किसानों की समस्याओं पर अनेक लेखकों ने अपने विचार व्यक्त किए हैं। प्रेमचंद की 'गोदान' एक प्रसिद्ध काव्यात्मक रचना है, जिसमें किसानों की त्रासदी को बड़ी मार्मिकता से प्रस्तुत किया गया है। इसके अलावा, कमलकांत त्रिपाठी का 'पाहीघर', वीरेंद्र जैन का 'पार', विद्यासागर नौटियाल का 'भीम अकेला', रामदरश मिश्र का 'बीस बरस', और श्रीलाल शुक्ल का 'संत' जैसे साहित्यिक कार्यों ने किसानों की जीवन समस्याओं और उनके संघर्षों को बखूबी चित्रित किया है।

सुधा ओम ढींगरा ने भी अपने लेखन में कृषक विमर्श को उठाया है। उनकी कहानी 'फंदा क्यों' भारतीय किसानों की कठिनाइयों और उनके दर्द को उकेरती है। कहानी की शुरुआत में ही भारतीय किसानों की स्थिति को सटीक रूप से व्यक्त किया गया है: "सूखे से तंग आकार पंजाब के किसानों ने आत्महत्या की।" (46) यह वाक्य किसानों के दुर्दशा और उनके भीतर के असहायता को दर्शाता है। कृषक विमर्श न केवल भारतीय समाज के ग्रामीण भाग की समस्याओं को उजागर करता है, बल्कि यह यह भी दर्शाता है कि कृषि क्षेत्र में सुधार की आवश्यकता है, ताकि किसानों को उनके कठिन परिश्रम का उचित प्रतिफल मिल सके और उनकी स्थिति में सुधार हो सके। किसानों के मुद्दे को साहित्य में स्थान देना, समाज को उनकी कठिनाइयों को समझने और उनके लिए उचित नीतियाँ बनाने के लिए प्रेरित करता है।

स्वतंत्रता के बाद भारतीय किसानों के लिए कई योजनाएँ बनाई गईं, लेकिन इन योजनाओं का लाभ केवल समर्थ और बड़े किसानों को ही हुआ। छोटे और ग़रीब किसान, जो पहले से ही आर्थिक कठिनाइयों से जूझ रहे थे, इन योजनाओं से लाभ नहीं उठा पाए। वे आज भी सूदखोर और बड़े व्यापारियों पर निर्भर रहने को मजबूर थे। आधुनिक कृषि उपकरण जैसे ट्रैक्टर और अन्य यंत्र, जो कृषि में क्रांति ला सकते थे, छोटे किसानों के लिए हमेशा ही पहुँच से बाहर रहे। यहाँ एक उदाहरण के तौर पर 'फंदा क्यों' कहानी में यह दर्शाया गया है कि कैसे छोटे किसान इन उपकरणों से वंचित रहते हैं। कहानी में एक पात्र, जो ट्रैक्टर के बारे में सुनता है, पर उसे यह जानकारी बहुत बाद में मिलती है कि यह उपकरण उसका सपना बनकर रह जाता है, क्योंकि वह इसकी कीमत वहन करने की स्थिति में नहीं है। (47)

कृषक विमर्श में यह भी दिखाया गया है कि भारतीय किसान आज़ादी से पहले और बाद में भी कठिनाईयों से जूझते रहे हैं। सरकारी सहायता और योजनाओं के बावजूद, भ्रष्ट तंत्र के कारण यह सहायता किसानों तक नहीं पहुँच पाती। इस संदर्भ में, 'फंदा क्यों' कहानी में अमेरिका और भारत के किसानों के बीच अंतर को स्पष्ट किया गया है। अमेरिका में सरकार और समृद्ध वर्ग किसानों के संकट में उनकी मदद करते हैं, जबकि भारत में भ्रष्ट तंत्र और भेदभाव के कारण ग़रीब किसानों को सहायता नहीं मिल पाती।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि सुधा ओम ढींगरा ने अपने साहित्य के माध्यम से समसामयिक विमर्शों को प्रभावशाली तरीके से प्रस्तुत किया है। वे हर विमर्श को भारतीय और अमेरिकी दृष्टिकोण से प्रस्तुत करती हैं, जिससे पाठकों के सामने सामाजिक और सांस्कृतिक अंतर दृष्टिगोचर होता है। सुधा ओम ढींगरा का साहित्य स्त्री जीवन के संघर्ष, उसकी इच्छाएँ, मानसिक पीड़ा, और पुरुषप्रधान समाज में आत्मनिर्भरता के लिए उसकी जद्दोजहद का दस्तावेज़ है। वे आधुनिक नारी के संघर्ष को बारीकी से चित्रित करती हैं, जो रूढ़िवादी परंपराओं और पुरुषप्रधान संस्कृति को तोड़कर स्वतंत्रता के लिए अपने कदम उठाती है।

जब लेखिका दलित विमर्श की बात करती हैं, तो वे भारतीय समाज की पुरानी परंपराओं का विरोध करती हैं, जहाँ आज भी कुछ वर्गों को नीचा समझा जाता है। वे यह दिखाती हैं कि पुरानी पीढ़ी इस भेदभाव को बरकरार रखना चाहती है, जबकि नई पीढ़ी के लोग जातिवाद को नकारते हुए समानता की दिशा में बढ़ते हैं। उन्होंने यह भी बताया है कि विदेशों में जाति का कोई भेद नहीं होता और वहाँ व्यक्ति का कर्म ही उसकी पहचान होती है।

सुधा ओम ढींगरा समाज को किसी विशेष दृष्टिकोण से देखने की पक्षधर नहीं हैं। वे जहाँ भी समाज में विकृतियाँ देखती हैं, चाहे वह स्त्री विमर्श हो, पुरुष विमर्श हो या कोई अन्य सामाजिक समस्या, उस पर बेबाकी से अपनी राय प्रस्तुत करती हैं। उन्होंने अमेरिकी समाज

में रह रहे भारतीयों की एक कड़वी सच्चाई को उजागर किया है, जहाँ लड़कियाँ भारतीय लड़कों से ग्रीन कार्ड के बदले अपनी इच्छाओं को पूरा करवाती हैं और इनसे मना करने पर अमेरिकी कानून का डर दिखाती हैं। इसके साथ ही उन्होंने अमेरिका में बढ़ते नस्लवाद को भी उठाया है, जिस पर बहुत कम लेखक बात करते हैं, लेकिन सुधा ओम ने बिना किसी अश्लीलता के इस मुद्दे पर सशक्त तरीके से लिखा है।

कृषक विमर्श पर लेखिका ने भारतीय किसानों की समस्याओं को बहुत ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है, जबकि अमेरिका में किसानों की स्थिति को भी दर्शाया है। उन्होंने दोनों देशों की सरकारों के रवैये को भी उजागर किया है। भले ही सुधा ओम ढींगरा ने इन मुद्दों पर कुछ ही कहानियाँ लिखी हों, लेकिन इन कहानियों का विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट होता है कि इन रचनाओं ने अपने विषय के साथ पूरी तरह से न्याय किया है और समाज में आवश्यक परिवर्तन की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।

000

संदर्भ सूची :-

1.सुधा ओम ढींगरा की कहानियों में प्रवासी जीवन, प्रथम संस्करण, 2018, शिवना प्रकाशन, पृष्ठ 9, 2.वही, पृष्ठ 10, 3.डॉ. सो. मंगल कप्पीकेरे, साठोत्तरी हिन्दी लेखिकाओं की कहानियों में नारी, प्रथम संस्करण : 2002, विकास प्रकाशन, कानपुर, पृष्ठ 55, 4.निधिराज भड़ाना, रेशू पाण्डेय, डॉ. सुधा ओम ढींगरा की कहानियों में अभिव्यक्त तथा निहित समस्याएँ, प्रथम संस्करण : 2016 शिवना प्रकाशन, पी, सी, लैब सम्राट कॉम्प्लैक्स, बेसमेंट बस स्टेंड, सीहोर – 466001, पृष्ठ 26, 5.डॉ. मधु संधु, हिन्दी का भारतीय एवं प्रवासी महिला कथा लेखन, पहला संस्करण : 2013, नमन प्रकाशन, 4231/1, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, पृष्ठ 164, 6.डॉ. सुधा ओम ढींगरा, कौन सी ज़मीन अपनी (कहानी-संग्रह), प्रथम संस्करण – 2010 भावना प्रकाशन, 109 ए, पटपड़गंज, दिल्ली – 110091, पृष्ठ 53, 7.वही, पृष्ठ 83 – 84, 8.वही, पृष्ठ 90, 9.वही, पृष्ठ 89, 10.वही, पृष्ठ 92, 11.वही, पृष्ठ 10, 12.डॉ. सुधा ओम ढींगरा, कमरा नं. 103, प्रथम संस्करण : फरवरी 2013, हिन्दी साहित्य निकेतन, 16 साहित्य विहार, विजनौर (उ.प्र.) – 246701. पृष्ठ 17, 13.डॉ. अमरनाथ, हिन्दी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली, पृष्ठ – 171, 14.वही, पृष्ठ – 173, 15.डॉ. सुधा ओम ढींगरा, कमरा नं. 103, प्रथम संस्करण : फरवरी 2013, हिन्दी साहित्य निकेतन, 16 साहित्य विहार, विजनौर (उ.प्र.) – 246701. पृष्ठ 60, 16.वही, पृष्ठ – 61, 17.वही पृष्ठ – 61, 18.वही पृष्ठ – 71, 19. डॉ. सुधा ओम ढींगरा, कौन सी ज़मीन अपनी (कहानी-संग्रह), प्रथम संस्करण – 2010 भावना प्रकाशन, 109 ए, पटपड़गंज, दिल्ली – 110091, पृष्ठ 126, 20.सुधा ओम ढींगरा, खिड़कियों से झाँकती आँखे, स प्रथम – 2019, शिवना प्रकाशन सीहोर (मध्य प्रदेश), पृष्ठ 104-105, 21.वही पृष्ठ – 108, 22.वही पृष्ठ – 111, 23.सुधा ओम ढींगरा, कमरा नंबर 103, पृष्ठ – 44, 24.वही पृष्ठ – 51, 25.वही पृष्ठ – 51, 26.वही पृष्ठ – 45, 27.वही पृष्ठ – 46, 28.वही पृष्ठ – 54, 29.सुधा ओम ढींगरा, सच कुछ और था, प्रथम संस्करण – 2017 शिवना प्रकाशन, सीहोर (मध्य प्रदेश), पृष्ठ-52, 30.वही पृष्ठ – 53, 31.वही पृष्ठ – 56, 32.विश्वप्रसाद गुप्त, मानव चिंतन का विकास, पृष्ठ – 112, 33.नस्लवाद है आज का सबसे बड़ा पाप (लेख), 17 सितंबर 2012, नवभारत टाइम्स, 34.नस्लीय भेदभाव के सभी रूपों के उन्मूलन पर अंतरराष्ट्रीय अभिसमय, 17 नवंबर 2015, 35.सुधा ओम ढींगरा, खिड़कियों से झाँकती आँखे, पृष्ठ – 87, 36.वही पृष्ठ – 88, 37.वही पृष्ठ – 91, 38.वही पृष्ठ – 92, 39.वही पृष्ठ – 74, 40.वही पृष्ठ – 10, 41.सुधा ओम ढींगर, कमरा नंबर 103, पृष्ठ – 19, 42.वही पृष्ठ – 19, 43.वही पृष्ठ – 19, 44.वही पृष्ठ – 18, 45.वही पृष्ठ – 22, 46.सुधा ओम ढींगरा, कौन- सी ज़मीन अपनी, पृष्ठ – 63, 47.वही पृष्ठ – 65

लेखकों से अनुरोध

'शिवना साहित्यिकी' में सभी लेखकों का स्वागत है। अपनी मौलिक, अप्रकाशित रचनाएँ ही भेजें। पत्रिका में राजनैतिक तथा विवादास्पद विषयों पर रचनाएँ प्रकाशित नहीं की जाएँगी। रचना को स्वीकार या अस्वीकार करने का पूर्ण अधिकार संपादक मंडल का होगा। प्रकाशित रचनाओं पर कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जाएगा। बहुत अधिक लम्बे पत्र तथा लम्बे आलेख न भेजें। अपनी सामग्री यूनिकोड अथवा चाणक्य फॉण्ट में वर्डपेड की टैक्स्ट फ़ाइल अथवा वर्ड की फ़ाइल के द्वारा ही भेजें। पीडीऍफ़ या स्कैन की हुई जेपीजी फ़ाइल में नहीं भेजें, इस प्रकार की रचनाएँ विचार में नहीं ली जाएँगी। रचनाओं की साफ़्ट कॉपी ही ईमेल के द्वारा भेजें, डाक द्वारा हार्ड कॉपी नहीं भेजें, उसे प्रकाशित करना अथवा आपको वापस कर पाना हमारे लिए संभव नहीं होगा। रचना के साथ पूरा नाम व पता, ईमेल आदि लिखा होना ज़रूरी है। आलेख, कहानी के साथ अपना चित्र तथा संक्षिप्त सा परिचय भी भेजें। पुस्तक समीक्षाओं का स्वागत है, समीक्षाएँ अधिक लम्बी नहीं हों, सारगर्भित हों। समीक्षाओं के साथ पुस्तक के कवर का चित्र, लेखक का चित्र तथा प्रकाशन संबंधी आवश्यक जानकारियाँ भी अवश्य भेजें। एक अंक में आपकी किसी भी विधा की रचना (समीक्षा के अलावा) यदि प्रकाशित हो चुकी है तो अगली रचना के लिए तीन अंकों की प्रतीक्षा करें। एक बार में अपनी एक ही विधा की रचना भेजें, एक साथ कई विधाओं में अपनी रचनाएँ न भेजें। रचनाएँ भेजने से पूर्व एक बार पत्रिका में प्रकाशित हो रही रचनाओं को अवश्य देखें। रचना भेजने के बाद स्वीकृति हेतु प्रतीक्षा करें, बार-बार ईमेल नहीं करें, चूँकि पत्रिका त्रैमासिक है अत: कई बार किसी रचना को स्वीकृत करने तथा उसे किसी अंक में प्रकाशित करने के बीच कुछ अंतराल हो सकता है।

धन्यवाद

संपादक

shivnasahityiki@gmail.com

नई दिल्ली विश्व पुस्तक मेले में शिवना प्रकाशन की नई पुस्तकों का विमोचन

Shivna Sahityiki ● Quarterly ● April-June 2025 ● RNI : MPHIN/2016/67929 ● ISSN : 2455-9717

Dhingra Family Foundation USA | Dhingra Family Foundation India

Dhingra Family Foundation USA/India

Free Computer Training Program For Providing Employment Oriented Computer & Skill Training To Rural Underprivileged Girls In India (Running Since 2014)

Diploma in Computer Application (DCA) University Syllabus

1. Information Technology Tools and Networks Basics
2. Windows and MS Office
3. Database Concepts and Introduction to SQL
4. Objects Oriented Programming With C++
5. Communication Skills & Personality Development
6. Introduction to Internet and Web Technology
7. Introduction to Financial Accouting with Tally
8. Programming and Problem Solving Through Python
9. Introduction to Cyber Security

DCA (Diploma in Computer Application)

DCA course is an employment oriented computer diploma course. The full name of DCA is Diploma in Computer Application. DCA is considered to be the best course for students who want to make a career in the field of computers after 12th class or graduation. The Diploma of this course is awarded by a government recognized university.

●

After completing this course, students gain excellent computer skills (see below) which help them get a good job. This course covers everything from basic to advanced computer skills. Like: MS Word, Excel, Power Point, Database, Networking, Photoshop, Editing, Graphics Designing, Internet etc.

●

Along with this course, girls are also provided training in personality development, career counseling, spoken English etc.

Help And Support Us In Providing Employment Oriented Computer & Skill Training To Rural Underprivileged Girls In India. Donation Can Be Made Either In India Or USA.

Donate

Please scan the **QR code** ☞ to make your valuable donation

DFF USA

dhingrafamilyfoundation.org

For USA ☝

For India ☞

Dhingra Family Foundation India

Registered Non-profit organization Under Section 12A and 80G of the Income Tax Act, 1961

Foreign Contribution Regulation Act

FCRA Registration Number- 063480008 Date- 13/1/2025

Corporate Social Responsibility

CSR Registration number- CSR00087663

Contact For Donation- 9806162184, 9399648132, 07562405545

Donation Amount		Number of Students
125$	₹10000	1
250$	₹20000	2
500$	₹40000	4
1000$	₹80000	8
2000$	₹160000	16
4000$	₹320000	32
6250$	₹500000	50
12500$	₹1000000	100

Contact Us

Dhingra Family Foundation USA
101 Guymon Court
Morrisville, NC-27560
USA
Mobile +1-919-801-0672
+1-919-601-2208
Email: om.p.dhingra@gmail.com

Dhingra Family Foundation India
P. C. Lab, Shop 2-8, Samrat Complex Basement, Opp. Bus stand, Sehore, MP 466001, India
Phone +91-07562-405545
Mobile +91-9806162184
Email: dffindia2020@gmail.com

If Undelivered Please Return to :
P. C. Lab, Shop No. 3-4-5-6, Samrat Complex Basement, Opp. Bus Stand, Sehore, M.P. 466001
Phone 07562-405545, 07562-490372, Mobile 09806162184, 08959446244 07828313926

स्वत्वधिकारी एवं प्रकाशक पंकज कुमार पुरोहित के लिए पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मध्य प्रदेश 466001 से प्रकाशित तथा मुद्रक ज़ुबैर शेख़ द्वारा शाइन प्रिंटर्स, प्लॉट नं. 7, बी-2, क्वालिटी परिक्रमा, इंदिरा प्रेस कॉम्प्लैक्स, ज़ोन 1, एम पी नगर, भोपाल, मध्य प्रदेश 462011 से मुद्रित।